विश्वकाव्य की रूपरेखा

भूमिका

डॉ० विजयेन्द्र स्नातक एम. ए., पी-एच.डी.

अपोलो पब्लिकेशन

जयपुर

प्रकाशक :
अपोलो पब्लिकेशन्स
जयपुर

प्रकाश जैन
सतीश वर्मा
द्वारा
सम्पादित

●

प्रथम संस्करण १९६५

●

मूल्य
१२.५० मात्र

●

मुद्रक
आर्य सहकारी प्रेस लि०, अजमेर
केशव आर्ट प्रिन्टर्स अजमेर

भूमिका

प्रथम महायुद्ध के विश्व के रंगमंच पर अनेकानेक अप्रत्याशित परिवर्तन हुए। विज्ञान के आविष्कारो ने नयी यांत्रिक सभ्यता को स्थापित किया जिसकी छाया संसार में धीरे-धीरे व्याप्त होती गई। यह भ्रममूल तथ्य भी उसी समय प्रचारित हुआ कि मशीन मानव से बढ़कर है—मशीन में नई सभ्यता को जन्म देने की शक्ति है। लेकिन मशीन कभी मनुष्य से बडी नही हो सकती। शायद इसीलिए मशीनी तहजीब के साथ बौद्धिकता का प्रभाव साहित्य और दर्शन पर भिन्न रूप मे पडा। बुद्धि ने मनुष्य मनुष्य को दूर तक देखने के लिए विवश किया और तर्कातीत या कल्पनातीत से मुक्त करने में योग दिया। फलत: साहित्य के क्षेत्र मे कुछ ऐसे परिवर्तन पहले योरोप मे, और बाद मे विश्व के सभी देशो में हुए, जिन्हे साधारण भावुक कोटि का परम्परावादी भलीभाति समझ नही सका। काव्य के क्षेत्र मे नयी कविता का जन्म इन्ही परिस्थितियो में हुआ समझना चाहिए। नयी कविता के जन्म की कहानी दुहराने का क्रम मैं शुरू नही करना चाहता। अब वह कहानी पुरानी हो गई है। लेकिन मै नयी कविता के युगबोध, नूतन आस्थाबोध तक मानववाद की ओर इस संग्रह के भूमिका के संदर्भ मे पाठको का ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूं।

नयी कविता के प्रथम उन्मेष मे प्रयाग-स्तर पर जो सृष्टि हुई उसमें बुद्धिमान को प्रधानता के साथ सामान्य या अकिंचन के प्रति जिस रागात्मक तत्व को प्रश्रय दिया गया वह चौकाने वाला था। नयी कविता के कवि ने किसी रहस्य वाद को अपनी रचना मे स्थान न देकर उस प्रक्रिया को विकृत किया जो उसके जीवन में व्याप्त है। मानव होने के नाते उसने मानव की यथार्थ एवं स्थूल समस्याओं को स्वीकार करने मे संकोच नही किया। उसने यह अनुभव किया कि वह जो कुछ कविता के माध्यम से कहे वह पाठक की चेतना मे समाया रहे। जिस प्रकार कभी जैन दर्शन में स्याद्वाद को स्थान देकर जैनाचार्यों ने समस्याओ को बहुमुखी बनाया था वैसे ही नये कवि ने अपने विचार को अन्तिम न मानकर विचार वैविध्य को अपनाने मे तत्परता दिखाई। स्याद्वाद की स्थापना का आदर्श इससे भिन्न रहा होगा किन्तु समन्वय की एक नयी प्रणाली उसमें सबसे पहले लक्षित हुई। नयी कविता की आस्था किसी सिद्धान्तहीन समन्वय मे नही है यही उसकी दृढ़ता का सूचक है किन्तु इन तत्वो को सामान्य भावुक पाठक ने ग्रहण नही किया जिस रूप मे ये नयी कविता मे उभरे थे। महाकाव्य, खंडकाव्य या गीत काव्य के प्रेमी पाठक के लिये स्फुट भावचित्रो या क्षणानुभूतियों के चित्रण का उतना महत्व नही हो सका जितना रूढ़ काव्य शैली की रचनाओ

का था। मर्यादा की भी शृंखला होती है—वैसी ही जैसी सोने की जंजीर। बंधन की दृष्टि से लोहे और सोने मे धातु भेद मात्र है, क्रिया भेद नहीं। मर्यादा में विश्वास रखने वाले को नयी कविता के मुक्त साहचर्य के संकोच शून्य प्रयोग मे स्खलन का दृष्टिगोचर होना स्वाभाविक ही है।

नयी कविता ने अपने विकास मे जिस स्वरूप भावना को उत्तरोत्तर ग्रहण किया वह है मानवतावादी भावना। अब तक विशिष्ट को काव्य मे प्रस्तुत किया जाता था-नये कवि ने साधारण को मनोयोग पूर्वक ग्रहण किया और सामान्य जन जीवन को आस्था का विषय बनाया। जिसे आस्था का विघटन कहकर निरूपित किया गया है उसमे कृत्रिम और आरोपित मिथ्या का त्याग ही सर्वप्रथम है। सामन्तवादी संस्कृति जो व्यक्ति विशेष के पीछे मतवाली बनी चली आ रही थी, पूरी चुनौती के साथ छोड दी गई। दूसरे शब्दो मे नयी कविता में जनजीवन ही नही वरन् व्यापक तथा उत्तर मानवतावादी दृष्टिकोण को पूरी सामर्थ्य से अंकित करने का प्रयास किया गया। नयी कविता ने अपने काव्य शरीर से अपना अस्तित्व ही घोषित नहीं किया, साथ ही साथ विज्ञान और काव्य का गठबंधन भी कर दिखाया। इस सफलता को अणुयुग की एक साहित्यिक सफलता समझना चाहिए।

यह कहना मेरी दृष्टि में नयी कविता के साथ अन्याय करना है कि वह पुरातन मूल्यों के खंडन, आस्था के विघटन, तथा परम्परा के विसर्जन मे ही जन्म लेती और पनपती है। काव्य का ही नही अपितु प्रत्येक कलात्मक सृष्टि का मूल प्रयोजन जीवन के प्रति स्वस्थ और रागात्मक संवेदन उत्पन्न करना है। आस्था के विघटन से ही यदि कविता को जन्म लेना है तो निर्माण और जिजीविषा के लिए किस सर्जन से मनुष्य की आस्था होगी! यदि जीवन से ही विश्वास, प्रेम, आस्था, राग और लगाव नही है तो कला और कलात्मक सर्जन में रुचि क्या होगी? अतः आस्था के विघटन को काव्य की मूल प्रेरक शक्ति मानना एकांकी और अपूर्ण घोषित करना है। समसामयिक काव्य अपनी नूतन शैली से सत्य के संधान का काव्य है। इस काव्य से अतिरंजित साहसवाद, आरोपित आदर्शवाद तथा अयथार्थ कल्पनावाद को छोडने का सुविचारित प्रयत्न दृष्टिगत होता है। यह प्रयत्न साधारण न होकर निश्चय ही असाधारण महत्व का है। इस प्रयत्न के पीछे सामाजिक चेतना के यथार्थ को व्यंजित करने की बलवती स्पृहा प्रेरक बनी रहती है। अतिरंजित, आरोपित तथा अनावश्यक को त्यागने में नयी कविता ने परम्परागत मैनरिज्म का केंचुल भी उतार फेंका है। हाँ, नया मैनरिज्म अवश्य इस कविता में आ गया है जो धीरे धीरे पुराने

की तरह बोझिल होता जा रहा है। केवल लीक पीटने वाले नये कवि तो इसे स्वीकार कर रहे है किन्तु प्रबुद्ध कवियो को इसकी पीड़ा खलने लगी है।

नयी कविता का शिल्प अब व्याख्येय नही रह गया है। पिछले दो दशक मे हिन्दी की नयी कविता में इस शिल्प को जिस रूप मे ग्रहण किया गया है वह सुपरिचित सा प्रतीत होने लगा है। शिल्प के खोल में कुछ अकवि भी नयी कविता के क्षेत्र मे उतर आये है। उनके पास न तो काव्य का कथ्य है और न भाव का वैभव। किन्तु शिल्प की नकल वे उसी तरह कर रहे है जैसे सोने का पानी फेर कर नकली आभूषण बनाये जाते है। मुझे लगता है प्रत्येक युग मे ऐसे अकवियो का प्रारम्भ मे जमघट रहता है। ज्यो ज्यो पाठक का काव्य बोध गंभीर होता जाता है ऐसे कवि छँटते जाते है और काल कवलित होकर समाप्त हो जाते है। हिन्दी की नयी कविता के क्षेत्र मे भीड करने वालो मे से बहुतो को यही गति होनी है। अंग्रेजी में इलियट की कृतियो की नकल करने वाले प्रारम्भ मे स्वत: पैदा हो गये थे किन्तु शनैः शनः कविता के पुष्ट होते ही उनका अवसान हो गया।

प्रस्तुत संकलन नये काव्य के नमूनो का संग्रह है। मैं इसे आदर्श काव्य का संग्रह जानबूझ कर नही कहता किन्तु नमूने के बोध से सम्पूर्ण के बोध की इच्छा जागृत होती है। मै अंग्रेजी को छोड कर किसी विदेशी भाषा से परिचित नही हूँ किन्तु इस संकलन के माध्यम से योरोप, अमेरिका कनाडा, न्यूजीलैड, आस्ट्रेलिया, अफ्रीका, ईजिप्ट, टर्की, जापान, लंका, इंडोनेशिया वियतनाम आदि चार दर्जन देशों की नई कविता के नमूने देखने का सुयोग मिला। मैने अनुभव किया कि भाषा का वाहन तो पृथक-पृथक है किन्तु मानवात्मा के स्पन्दन मे सर्वत्र समता है। शब्द का स्फोट भाव की एकता को छिन्न भिन्न नही करता। सुदूर देशो मे फैले हुए मानव की चेतना सुख-दुख हर्ष विषाद, राग-द्वेष की अनुभूति मे एकसी है। ज्यो-ज्यो आप इन कविताओ के मर्म मे बैठेंगे, त्यो-त्यो मेरे इस कथन की प्रमाणिकता पुष्ट होकर आपके सामने प्रत्यक्ष होती जायेगी। आज की नयी कविता मे युगबोध का स्वर सर्वत्र सबसे ऊँचा है। सामयिक जीवन चेतना सभी देशों के कवि समान रूप से व्यन्जित करते हैं बौद्धिकता का परिवेश फैल रहा है, थोथी कल्पना और कृत्रिम भावुकता मर रही है। जन जीवन मे से कविता उसी प्रकार फूट रही है जैसे सद्य: जोती हुई उर्वर भूमि में से अंकुर।

इस संकलन के अनुवादों के विषय में कुछ भी कहने का मैं अधिकारी नहीं हूँ। अनुवाद का माध्यम काव्यानन्द के लिए तृतीय श्रेणी का माध्यम माना जाता है। अनुवाद कितना भी फेथफुल क्यो न हो-मूल का समक्ष नही हो सकता। किन्तु चार दर्जन विदेशी भाषा का ज्ञान प्राप्त करना भी संभव नही है अत: अनुवाद ही माध्यम है। सत्प्रास का हार्दिक अभिनन्दन करता हूं और उन नवयुवको को बधाई देता हू जिन्होने पहली बार विश्वकविता को हमारे लिए सुलभ बनाया है।

—विजेयन्द्र स्नातक

विषय—प्रवेश

विश्व कविता

बनाम

विश्व की नयी कविता

विश्व-साहित्य का प्रारम्भ कविताश्रित होकर हुआ है; अन्त भी कविताश्रित होगा ? सम्प्रति युग की विश्व कविता ने स्वयं को वैज्ञानिक-विश्लेषण और नए कोणो के समीप प्रतिष्ठित कर लिया है, इससे यन्त्र युग की एकांगी सभ्यता कविता की भविष्य सम्भावनाओ से स्वयं को पूर्ण रूप से काट नही पा रही है और यह मानव हित मे अच्छा है। बौद्धिक दृष्टि से बौना आदि मानव भाव सम्पदा का धनी था, सम्प्रति युग का मानव कमोबेश इसका विपर्यय है। कविता सदैव से युग सापेक्ष रही है आगत युग की सम्भावनाओ के साथ। आज की कविता पर भी यह सिद्धान्त लागू होता है जहा वह बदलते हुए युग संदर्भों के कारण विघटित जीवन मूल्यो, आक्रोश, भय, अस्तव्यस्तता असुरक्षा तथा अन्तर्विरोधो एवं मानव की उखडी हुई मनः स्थितियो (जिनमे कुंठा यौनवर्जना खण्डित संवेद्य आदि भी सम्मिलित है) को सम्पूर्ण ईमानदारी के साथ अभिव्यक्ति दे रही है, वहाँ भविष्यगत साहित्यिक शिल्पकथ्य एवं जीवन-आयामो के अनेक धुंधले और स्पष्ट संकेत भी दे रही है। यद्यपि नयी कविता द्वारा इस स्वभाव के कार्य सम्पादन से कुछ बुजुर्ग साहित्यकारो को—जो विघटित होते हुए साहित्यिक और जीवनगत मूल्यो के प्रति सचेत नही है, जिन्हे युगबोध की पीडा नहीं ग्रासती, जो व्यतीत युग के सुख-स्वप्नों के धनी है—ऐतराज हुआ है।

आज की कविता जिस बिन्दु पर है, वहाँ तक उसे पहुँचने मे अनेक युग धाराओं को लाँघना पड़ा है। काव्य इतिहास ने काल पसार में प्रस्तुत युग से लेकर वर्तमान युग की बम सभ्यता संस्कृति तक की ऐतिहासिकता को पूर्णत्व में क्रम से अनुभवा है। फिर भी यह कहने मे कोई संकोच नही कि आज की कविता ने युग-बोध वहन मे व्यतीत युगीन कविता से कही अधिक ईमानदारी बरती है।

विश्व-कविता के क्षेत्र मे रचनाकारों की बढोतरी देखकर श्वेतकेशी मुनि समीक्षकों की रातों की नीद हराम हो गयी है। वे राजनीतिज्ञो की भाति कदाचित् साहित्य क्षेत्र मे भी योजनाबद्ध कार्य करना चाहते है अर्थात् एक या दो से अधिक निराला, प्रसाद, पंत, शेली, कीट्स आदि नही होने चाहिए।

इस बात को भूल जाते है कि छायावादी युग मे कॉलेज भर भर कर लडके गीत लिखते थे। जिसप्रकार उस युग मे उँगलियो के घटनो पर गिनने योग्य रचनाकार ही स्वयं को काव्य क्षेत्र में उजागर कर पाये थे उसी प्रकार नयी कविता के अधकचरे और अपरिपक्व रचनाकार स्वयं ही समय की धार द्वारा फेक दिए जायेगे। (यदि संख्या में दो चार लोग बढ जायँ तो क्या कष्ट की बात है ?) हाँ ! कुछ समय अवश्य लगेगा। किन्तु बुजुर्ग समीक्षकों मे यह विचार करने के लिए न तो धैर्य है और पाठ्य पुस्तकों के सृजन मे अत्यधिक व्यस्त रहने के कारण न ही समय। राजनीतिक कोण से प्रबुद्ध कुछ बुजुर्गों ने—जो राजनीतिक नेता होने के साथ साथ साहित्यिक नेता भी है या जिन्होने साहित्य मे राजनीति फैलाकर नेतागीरी प्रारम्भ कर दी है और इसी के बल पर प्रतिष्ठित भी हो गए है—यह नारा तक लगाना प्रारम्भ कर दिया है कि यह कविता का युग नही है कम से कम आज कल जो कविता लिखी जा रही है वह इस युग के उपयुक्त नहीं है। ऐसे लोगों से कविता समझने की उम्मीद की जाय ?

दो विश्व युद्ध, मार्क्स और फ्रायड, अस्तित्ववादी चिन्तन, जीवन का बढता (किन्ही अर्थों मे गिरता हुआ) स्तर, वैज्ञानिक प्रगति, अन्तर्राष्ट्रीय सांस्कृतिक साहित्यिक सम्पर्क आधुनिक युग की प्रभावशाली देन है। इन सभी ने आजके विश्व-मानव को अनेक स्तरों पर प्रभावित किया है। कविता चूँकि विशुद्ध मानवीय अनुभूति है अतः इस सब से अपनी सीमा में अत्यधिक प्रभावित हुई है। आज की मानव समस्यायें मूल रूप से प्रबुद्ध राष्ट्रों की लगभग एक जैसी ही हैं। मशीन युग को यान्त्रिकता ने मानव को पंगु बना दिया है, जीवन की यान्त्रिकता ने उसमें ऊब और घुटन भर दी है, इनके चलते इसमे कुंठाएँ जन्म ले चुकी हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि आज वैज्ञानिक बौद्धिक और औद्योगिक क्रांति होने पर भी मनुष्य अपने आन्तरिक व्यक्तित्व गठन में असहाय है। परिस्थितियों के दबाव और दैनिक समस्याओं ने आज के मानव को इतना तोड़ दिया है कि वह व्यतीत आदर्शों को पालने मे असमर्थ हो गया है। कहना चाहिए कि जीवन जगत की समस्याओं ने आदर्शवाद के प्रति उसमें तीखी अरुचि जागृत कर दी है।

आज की कविता के रूप में विश्व-साहित्य में कदाचित यह प्रथम अवसर है जबकि विश्व कवि एक ही अनुभूति स्तर को एक ही शैली और शिल्प के माध्यम से अभिव्यक्ति दे रहे हैं। विश्व-साहित्य में अबसे पूर्व कभी भी ऐसा अवसर नहीं आया था जबकि विभिन्न प्रबुद्ध देशों की कविता का कथ्य और शिल्प एक ही समय में एक सा रहा हो। योरुप में उन्मेषित छायावाद लगभग सौ वर्ष पश्चात् हिन्दी में उद्भूत हुआ था, जबकि वहाँ वह प्रायः समाप्ति की

अन्तिम स्थिति मे था। आज की कविता ने विश्व-साहित्य के इतिहास की इस खाई को पाटा है।

आज की विश्व कविता का मूल कथ्य मानव का आन्तरिक द्वन्द चित्रण आस्था अनास्था का द्वन्द और फिर आस्था अथवा अनास्था का गहराबोध—है।

निरन्तर जटिल होती हुई जिन्दगी और युग बोध ने आज की कविता के कथ्य और शिल्प को जटिल बना दिया है, किन्तु इसका यह अर्थ नही लिया जाना चाहिए कि टूटे और खण्डित जीवन बोध की कविता भी खण्डित होगी, यदि ऐसा होगा तो वह रचनाकार की काव्यक्षमता की अपरिपक्वता का ही बोध करायेगी। सिसिल डे लीविस ने 'पोइटिक इमेज' के पृष्ठ ११७ पर यह कथन उद्घृत किया है जो हमारी उपर्युक्त मान्यता का समर्थन करता है— "निरन्तर पेचीदा होती हुई सभ्यताके अनुरूप कविता मे पेचीदा मूर्तिविधान का होना न्याय संगत होगा, जो युग हमे नये विचार समूह, इन्द्रिय वोध देगा उसके अनुरूप साहस के साथ नया मूर्तिविधान प्रस्तुत करना होगा, लेकिन इस तर्क से यह परिणाम हर्गिज नही निकलता कि भग्न सभ्यता का सही उत्तर भग्न कविता है।" कविता के विषयो की भग्नता तो समझने की बात हो सकती है, किन्तु जब वह कविता के रूप मे अभिव्यक्ति पाए तब उसे सम्पूर्ण काव्य 'उपलब्धि' होना चाहिए। आज की विश्व कविता मे 'खण्डित उपलब्धि' भी पर्याप्त है। इस खण्डित उपलब्धि का समादर काव्य मे अनधिकारी तत्वो को बढावा देगा। हिन्दी प्रयोगवाद की पर्याप्त कविता 'भग्न' थी इस लिए भी उसे शीघ्र चुकना पडा।

विश्व-सहित्य की सम्प्रति युग मे लिखी जाने वाली कविता रूढ़ियों की विरोधिनी है। वह कृतिकारो के वैयक्तिक अनूभूतियो के माध्यम से अभिनव उपमान, प्रतीकों जीवित बिम्बो से विश्व साहित्य को समृद्ध बना रही है। इस कविता ने किसी वाद विचार को उसके 'वादत्व' मे स्वीकार न करके सहज सत्य के रूप में स्वीकार किया है, इसलिए निश्चय ही विश्व की इस जागरूक कविता की तस्वीर को किसी 'वाद' 'विशेष' के चौखटे मे नही बाँधा जा सकता। इस से उन खानगी पसंद साहित्यिक मित्रो को आक्रोश और निराशा दोनो ही हुई है, जो कविता को किसी 'वाद' विशेष का चश्मा लगाकर देखने के आदी हैं, या जो कविता को 'देखना' ही तब पसंद करते है जब कि उस पर उनके 'वाद' की छाप लगी हो। बहरहाल।

प्रयोगवादी कविता ध्येय रहित या ध्येयच्युत कविता थी। प्रयोगवादी मित्रों ने नयी' को ही ध्येय मान लिया था, सच तो यह है कि इन दिग्भ्रमित मित्रों को ध्येय' स्पष्ट ही नहीं था। 'प्रयोग' किसी या किन्ही महती सम्भावनाओं

के लिए किया जाता है। ध्येय-सम्भावना से कट कर 'प्रयोग' का कोई महत्व ही नही है वैसे ही जैसे कि बिना मिट्टी के बीज का। ध्येयच्युत होने के कारण ही 'प्रयोगवादी' कविता फुलझडी के समान 'कुछ' समय के लिए ही अपनी आभा दिखाकर समाप्त हो गई या उसने महती सम्भावनाओं से युक्त नयी कविता के लिए स्वयं को एक नगण्य अंश के रूप मे समर्पित कर दिया। हिन्दी में आज भी कुछ बुजुर्ग अपने गहन अध्ययन के बल पर नयी कविता और प्रयोगवाद को एक समझने का भ्रम पाले हुए है।

आज की विश्व कविता मे कृत्रिमता का अभाव है, इसका कारण आज का रचनाकार कविता को मनोरंजन की 'अदद' न मानकर जीवन की 'गम्भीर उपलब्धि' मानता है। इस कविता पर बिम्बवाद, प्रभाववाद आदि का भी प्रभाव पड़ा है किन्तु यह प्रभाव उसका मित्र भर है, स्वामी नही।

नयी कविता का रस मानदण्डो से 'नाप' लेना नई कविता की परिकल्पना तक से अनभिज्ञता प्रकट करना है। परिवर्तित युग-बोध के कारण रस सृजन कविता का ध्येय नहीं रह गया है। आज के असुरक्षित, अनास्थायुक्त और 'नीरस' जीवन में 'रस' की बात संदर्भों से कटी हुई लगती है। फिर भी यदि रस को मानसिक अनुभूति या विशुद्ध मानवीय अनुभूति तक फैला दिया जाय, जैसा कि हिन्दी के मूर्धन्य समीक्षक डा० नगेन्द्र स्वीकार भी करते है, तब कोई भी कविता–शर्त यह है कि वह कविता हो अकविता नहीं–रस की चौहद्दी में स्वतः ही आजायेगी (क्योंकि कविता मूलतः शुद्ध मानवीय अनुभूति ही है) नये कवि को तब रसविरोध के लिए अवकाश नहीं, उसके चाहने न चाहने पर भी उसकी कविता रसजीवी कविता होगी। तब रस की अनिवार्यता या अनिवार्यहीनता का प्रश्न ही समाप्त हो जायेगा। इसकी आवश्यकता मात्र अकविता को अलग करने के लिए पड़ेगी। यह सही है कि रस का छन्द अलंकार लय और तुक आदि से सम्बन्ध नही है। ये 'अददें' तो 'शिल्प-प्रयोग' भर हैं, जिन्हें कोई भी कवि नयी शिल्प-प्रयोग-अददें चुन कर नकार भी सकता है। विख्यात शीर्षस्थ आलोचक डॉ० नगेन्द्र का यह कहना बहुत सही है कि द्वन्द काव्य प्रक्रियागत तो हो सकता है काव्य की अभिव्यक्त उपलब्धि में नहीं, क्योंकि उपलब्धि एक निश्चित परिणाम है, द्वन्द नही।

विश्व की नयी कविता चित्रकला के कितना समीप है या कि उसे चित्रकला के कितना समीप होना चाहिए ? यह कुछ पृथक् प्रश्न है जिन पर विवाद के लिए पर्याप्त अवकाश हो सकता है। लेकिन एक बात स्वीकार करनी पड़ेगी कि विश्व की नयी कविता और उसका युग व्यतीत कविता और उसके युगों से निश्चय ही कहीं अधिक 'आब्सक्योर' है। यह 'आबसक्योरिटी' अनेक

स्तरों पर चित्रकला की 'ग्राब्सक्योरिटी' जैसी ही है। कहीं-कहीं नयी कविता ने चित्रकला को स्वयं में इतना समाहार दिया है कि उसकी अमूर्त सांकेतिकता विश्लेषण परक स्थितियों से उठकर अनुभूति परक होगई है। विश्व-कविता के मूर्त्त विधान की अमूर्त्तता ने विश्व-साहित्य-ग्रन्थ मे ऐसे पृष्ठ-ग्रयाम को जोडा है, जिसे व्यतीत युगीन कविताएँ जोड़ने में असमर्थ रही और अब तक जिसके जुडने की निरन्तर प्रतीक्षा थी। अमूर्त कवियों मे टी० एस० इलियट का नाम लिया जाता रहा है। इस संदर्भ में अधिक सही नाम डलन टामस तथा गजानन माधव मुक्तिबोध के है।

हिन्दी मे नयी कविता की जडें निराला में थी। निराला की अनेक कविताओ की ताजगी, कुकुरमुत्ता मे व्यंग्य की कडवाहट तथा अनेक कविताओ मे सच्चे यथार्थ की पकड नयी कविता की पृष्ठ भूमि के रूप में निराला में विद्यमान थी। नयी-कविता की ताजगी यथार्थ का 'वाद' मुक्त सच्चा चित्रण, सहजता आदि कुछ ऐसी विशेषताएँ है (दूसरी विशेषताओ के साथ) जो नयी कविता को व्यतीत युगीन कविता से पृथक् कर उसका स्वतन्त्र अस्तित्व घोषित करती है जीवन की कटुता और अन्तर्राष्ट्रीय खोखलेपन ने नये कवि को व्यंग्य करने के लिए बाध्य कर दिया है। आज की कविता मे कदाचित व्यंग्यात्मकता गुणात्मक और मात्रात्मक रूप में अब तक के साहित्य मे सर्वाधिक है। विदेशो मे नयी कविता के अकुर (मात्र अंकुर) लाफोर्ग और त्रिस्तां कोरवियर में मिलते है। टी० एस० इलियट ने अपने एक निबन्ध में इन दोनो कवियो की चर्चा की है। उन्हें अपने समय के किसी भी अँग्रेजी कवि को अपेक्षा "मेटाफिजिकल" कवियो के समीप माना है। रैम्बो और पाउण्ड भी इस शृंखला के कवि है। एडमंड विलसन ने फ्रान्सीसी अलोचक रेनेलोपे का उल्लेख किया है। इस आलोचक ने इलियट पर गोतिए के प्रभाव का विवेचन किया है। नयी कविता का स्वरूप आज जिन अर्थों और संदर्भों को लेकर प्रकट हो रहा है उसे देखते हुए निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि टी० एस० इलियट भी अब पीछे छूटते जा रहे है (छूट गए है।)

आज की विश्व कविता मे धर्मशास्त्र परक नैतिकता को निष्कासित कर दिया गया है। आज वह मानव की घुटन कुठा और यौनवर्जनाओ को उदात्त रूप में चित्रित करने में सफल हो रही है। टूटने, मृत्युबोध, अन्तरंग क्षणो मे भी द्वंध बना रहना जीने के लिए जीते जाने वाले जीवन की विवशता, यान्त्रिक जीवन से ऊब रुढ़ियों के प्रति विद्रोह, आस्था-अनास्थामयी दृष्टि, व्यक्ति के अन्तर जगत के प्रति सैन्सरहीन आदरमयी दृष्टि अनुभूति को अभिव्यक्ति देने की ईमानदारी, नयी चेतना के प्रति अटूट आस्था, बम सभ्यता से भय, नये

संस्कार बौद्धिक कोणों से स्थिति-चिन्तन, कडवा और तीखा व्यंग्य, नये प्रतीक, नये बिम्ब, आस्था का सर्वमान्य प्रतीक सूर्य, सौन्दर्य बोध के बदले हुए आयाम, सृजन प्रक्रिया की तटस्थता आदि ऐसी शिल्प और विषयगत उपलब्धियाँ है जो आज की विश्व-कविता मे उपलब्ध है। अरक्षा और अस्तित्व-हीनता से भयभीत आज के मानव के लिए प्रत्येक क्षण का महत्व है। क्षण को उसके सम्पूर्णत्व में जीने की ललक उसके मन मे है। इस मन: स्थिति को वहन करने वाली नयी कविता में क्षण सत्य को गहना नये कवि की ईमानदारी का सबूत है।

योरुप के कुछ देशो मे नयी कविता के पक्षधर कुछ रचनाकारों ने रूढ़ियों के प्रति विद्रोह की कुछ ऐसी अति की कि मानव अनुभूतियो को मानव स्तर पर अनुभव न कर पशु स्तर पर अनुभव करना प्रारम्भ कर दिया। गत वर्षों मे 'एनकाउन्टर' मे इस प्रकार की कुछ कविताऐं प्रकाशित हुई हैं। हिन्दी मे प्रयोगवादी कविता के जनक (अब नयी कविता के भी जनक) ने इस संदर्भ में कुछ ऐसा अनुभव किया—"मै ही हूँ वह पदाक्रान्त रिरियाता कुत्ता।"

इसी तर्ज पर कुछ दूसरे छुट-भैयों ने गुरु कंठ में स्वर मिलाया—

"धरती आकर्षित करती
अपनी जड़ताओं को
ये आकाश प्रकाश न मुझको मरने देते
सरल मौत कुत्ते की।"

मृत्युबोध को आज की बम सभ्यता ने अधिक गहरा दिया है, यह मैं पहले निवेदन कर चुका हूं। प्रतिक्षण श्वासों की अनिश्चितता ने मृत्यु पर सोचने के लिए बाध्य कर दिया है। किन्तु कुत्ते की सी मृत्यु कामना करने वाले कवियों की संख्या अधिक नहीं है। जर्मन कवि रिल्के की कविताओं में मृत्युबोध पर्याप्त गहरा है, किन्तु उसमें मृत्यु स्वीकृति का स्वस्थ पक्ष है। रिल्के यह स्वीकार करता था कि प्रत्येक मनुष्य स्वयं में मृत्यु को पाले हुए है। मृत्यु ही जीवन का उज्ज्वल पक्ष है। रिल्के ने आयु भर मृत्यु की आराधना की। उसके जीवन का अजाना उद्देश्य यह था कि स्वयं में उस बीज को पोसते रहो जो मृत्यु आगमन पर अंकुरित होगा। रिल्के ने सभी वस्तुओं पर मृत्यु को ही प्रधानता दी किन्तु उसने ईसाई रहस्यवादियों की भांति इस बात पर भी बल दिया कि जीवन के अनुभवों से जितना लाभ उठाया जासके उठाना चाहिए। जीवात्मा परमात्मा के लिए उतनी ही आवश्यक है जितना जीवात्मा

के लिए परमात्मा। जीवन को भोगते हुए हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि हम परमात्मा की इन्द्रियों के रूप में काम कर रहे हैं।—

'परमात्मा यदि मैं मर जाऊँ तो तुम क्या करोगे
मैं तुम्हारा पीने का पात्र हूं
यदि वह टूट गया तो क्या होगा।"

जीवन की कटुताओं और परिवेश दबाव एवं यथार्थ कठिनाइयों के (आर्थिक वितरण की असमानता आदि) ने बीट कवियों में जहाँ एक ओर समाज मे उत्पन्न विडम्बनाओं के प्रति तीखा व्यंग्य है, वहाँ बम सभ्यता से उत्पन्न जीवन की अनिश्चितता के कारण मृत्यु बोध भी उभरा है। बीट कवि आज की संघर्षशील पीढ़ी के प्रतिनिधि कवियो में से है। अमरीका मे इन बीट कवियो की नाम पट्टिका पर्याप्त लम्बी है इनमे जिन्सबर्ग, कोर्सो, राबर्ट, डंकन, डेनजी लिबर्टोव, एडवर्ड डोर्न, फिलिप लैम मिण्टिया, पोटर आरलोवास्की केनेथ काच, फिलिप ह्वालेन, गिलबर्ट सोरेन्टिनो, गैरी स्नाइडर, माइकेल मैक-क्लोर री लॉय, जोन्स डविड मेन्ट जरने, ओल्सन, क्रीले, जैक केरुएक, मिकाइल होरोविज, एड्रियन मिचेल, मार्टिन सेमूर, स्मिथ, सी० एच० सिसन आदि प्रमुख कवि है। समकालीन अमरीकी काव्य के प्रतिष्ठित कवि तथा आलोचक पाल कैरोल ने 'एवरग्रीन रिव्यू' (अंक १९ जुलाई-अगस्त ६१-६२) में जिन्सबर्ग के विषय में लिखा है "सम सामयिक अमरीकी काव्य साहित्य में जिन्सवर्ग एक ऐसे कवि है जिन्होंने तीस वर्ष की आयु में वह अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा प्राप्त की, जो अपने जीवन काल में राबर्ट फ्रास्ट को मिली थी। यह अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा केवल उनकी पुस्तकों के सुपठित पाठक समुदाय तथा जन-साधारण द्वारा नियमित क्रम तक ही सीमित नही है, बल्कि फ्रास्ट की ही भाँति उन्होंने अपने समय के उन सभी 'एकेडेमिक' आलोचकों तक को अपनी ओर आकृष्ट किया है जो 'हाउल' को पढ़कर कभी विक्षुब्ध हो उठे थे।....फ्रास्ट के बाद वे दूसरे अमरीकी कवि हैं जिनकी 'हाउल' जैसी ओजस्वी तथा प्रखर काव्य पुस्तक की ८०,००० प्रतियाँ एक साथ हाथों-हाथ बिक जाती हैं... वे पहले अमरीकी कवि हैं जो ब्लेक माउण्टेन कॉलेज, आइ ओवा तथ हारवर्ड विश्वविद्यालय की विशाल गैलरियों मे शान्त भाव से बैठे हुए दो-दो हजार काव्य-प्रेमियो को अपने 'ओजस्वी वक्तृत्व दुखान्त और प्रभविष्णु' काव्य पाठ से क्षण भरमें मन्त्र मुग्ध कर देते हैं...चौतीस वर्ष की आयु में ही वे यश के उस चरम शिखर पर पहुँच गए है, जब हर योरुपीय बौद्धिक अमरीका में आकर सबसे पहले जिन्सबर्ग से भेंट करने की इच्छा व्यक्त करता है।"

बम सभ्यता और यान्त्रिक जगत के विद्रूप के प्रति ऐलिन जिन्सबर्ग की कविता में तीखा व्यंग, बौद्धिकता, मानव के प्रति आदर और मानवीय दुःख के प्रति सहज सहानुभूति हैं। सामयिक यथार्थ की विडम्बना का गहरा कटुबोध एवं मानव जीवन एक गोली का मूल्य भर है का संवेदन जिन्सवर्ग की कविता मे अभिव्यक्त हुआ है—

> "भयंकर वास्तविकता के अनंत समकालिक
> रूपाकारो के आभास, जो गलती से प्रकट होकर
> कुछ नही के मूर्खतापूर्ण चेतना प्रदेशों मे
> छूट गए है
> शून्य के बन्द होते गर्दभ-छिद्र मे लुप्त
> होते हुए—'रुको' का चिन्ह जो चक्कर खाकर
> आँख के आकार मे सामने ठहर जाता है—
> मुझे आँख मारता है और हम लुप्त हो जाते है।"

मृत्यु मानव चेतना की अनिवार्य नियति है, जिन्सबर्गस हित कटु यथार्थ मे घुटते हुए सभी बीट कवियों ने इस बोध को जीया है। जैक केरुएक ने 'सारे व्यक्तित्व प्रदर्शन के नीचे छिपा कंकाल' देखा है जो 'कब्र मे सडता है और कीडे उसे खाते हैं'

जर्मन कवि वरतोल्त ब्रेख्त भी मृत्युबोध को स्वीकारता है "शुरू से ही मैं मौत के सब प्रतीकों से युक्त हूं।"

गैरिर आशटेबर्ग हुसलोडईजिन, मारिस गिलियाम्स आदि डच कवियों में भी 'मृत्युबोध' की यही तीव्रता है, क्रमशः उनकी काव्य-पंक्तियाँ इस संदर्भ में प्रस्तुत हैं—

> "सूर्य में आरम्भ होती है मौत"
> "जब तक पिट नहीं गए हम चुप में"
> "एक अदेखी क्रिया
> कि—तुम्हें ले लिया है गया है।'

रूमानिया की समकालिक कविता में भी मृत्युबोध अभिव्यक्ति पा रहा है, जीवन का बोझ कंधों को झुकाए दे रहा है। कवि मृत्युबोध की इस मर्मान्तिक पीड़ा से विक्षिप्त प्रायः है। बिम्ब के माध्यम से कवि जी० बाकोविया की काव्य पंक्तियों मे यह बोध और अधिक ग्राह्य बन सका है—

> "जिन्दगी को सड़कों पर चिल्लाते और मौत को
> पटरियों पर चलने दो।"

माग्ना इसानोस अनुभव करता है कि यदि विश्व में सम्पूर्ण दुःख एक ही

वर्ग के लिए न होता तो वह 'इस जवानी में न मरता।' स्पेनिश कविता में भी मृत्युबोध को विश्व की समकालीन कविता की भांति ही अभिव्यक्ति मिल रही है। रफाएल आलबेर्ती की कुछ काव्य पंक्तियां इस संदर्भ मे पर्याप्त होगी।

"अंधे बन कर मृत्यु के साथ चलते

....

अपनी मौत से मिलते हो।"

मेक्सिकन कवि आक्टावियो पॉज मृत्यु प्रक्रिया की ओर संकेत करते हैं—

"और दिल की धड़कनों के पुल पर हम मौत
और शून्यता को पहुँचने तक दौडते रहते है।"

सामयिक यथार्थ की घुटन को—जो मूल रूप से अद्ययुगीन मानव को निरन्तर मृत्यु की ओर धकेल रही है—क्यूबियन कवि इसेल रिवेयरी ने अनुभव किया है, वह युग के विनाशक चेहरे से भली भांति परिचित है—

"मेरे ओठ इस युग की प्रशंसा करने को अभिशप्त है
धीमी ध्वनियों और संहारो का यह युग

....

कितनी धीमी है बोध की यह प्रतिक्रिया।"

जीवन की अनेक विडम्बनाओ को आत्मसात करते हुए अन्ततोगत्वा-रचनाकार का ध्यान 'मृत्युबोध' पर केन्द्रित हो जाता है और असमय एवं अप्रत्याशित रूप से आनेवाले मृत्यु के किसी भी क्षण की कल्पना कर सहम उठता है। पेरू का कवि सेजार वलेजो विश्व जीवन को मृत्यु के जबड़े मे फंसा अनुभव करता है—

"जब सारी दुनियाँ तुम्हारे सामने आ गिरेगी
तब मौत की खाली आंखे मिट्टी के दो पासे बन
उसे आखिरी तौर पर जीत लेंगी।"

'मृत्युबोध' अनस्तित्व होते और प्रतिक्षण जिजीविषा चुकते मानव को ह्रास प्रक्रिया का अनुभव करने से उपजता है। सम्प्रति युग का मानव प्रतिक्षण समाप्त होने की आशंका से सिहरता रहता है। इक्वेडोर के कवि जार्ज करेरा अन्द्रादे ने इस अनुभूति को सम्पूर्ण प्रक्रिया में गहा है—

"और हर मिनट दीवारें ढहने के
बिजली गिरने के
इन्तजार में बिताता हूँ
स्वर्ग से न जाने कब नोटिस आजाय
ततैये की उड़ान मे मौत आ धमके।"

ग्रन्थियों से पूर्ण युद्धोन्मुख संसार (मृत्यु की भांति ही प्रतिक्षण के युद्धभाव) ने कवि के जीवन दर्शन-गत बोध को ऐसा आघात पहुँचाया है कि उसे प्राणी मात्र में ही नहीं प्रकृति तक में मृत्युोन्मुखता के दर्शन होते है । युरुगुवे के एक कवि जूलियो हरेराय' रीसिंग की सशक्त कविता मे यह बोध अभिव्यक्ति पा सका है । बिम्ब विधान के कारण उसकी प्रेषणीयता और अधिक बढ़ गई है। कवि को मृत्यु जोवन की चरम परिणति होने के कारण खुशनुमा भी लगती है । यथार्थ की कटुता की अपेक्षा यदि मृत्यु उसे अभिराम लगे तो आश्चर्य क्यो-

"मृत्योन्मुख संध्या एक पर्वत पर झुकती है

....

गाँव के सामने रात धीमे से मुस्कराती है

श्वेत चेतना लिए खुशनुमा मौत सी ।"

अर्जेन्टाइना के कवि मोलोनारी को 'मृत्यु कितनी भयंकर' है का बोध होता है । ब्राज़ील के कवि मानुएल बान्देरा 'पूर्ण मृत्यु' की आकांक्षा करते हैं । चिली के कवि विन्सेते हुई दोब्रो नारी के ओंठों तक में मृत्यु दर्शन करते है—

"मौत का झण्डा उसके ओठों पर लहरा रहा था ।"

कनाडियन कवि फिलिस बेव 'टूटे हुए' शीर्षक कविता मे मृत्युबोध को अभिव्यक्ति देता है—

"अपने आक्रमण के प्रति खुद जिम्मेदार

हमें उनकी परम्परा और अपनी मृत्यु मिली है ।"

मृत्युबोध विश्वकवि को परम्पराओं के विघटन में, जीवन मूल्यों के स्खलन में, आस्थाओं के टूटने तथा जीवन के उखड़ाव में अनुभव होता है । न्यूज़ीलैंड के कवि पीटरब्लेन्ड भी मृत्युबोध से आन्दोलित हुए हैं—

"अभी-अभी जहाँ जिन्दगी बह रही थी

वहाँ अब मात्र फटे चिथड़ों जैसा बर्फ का ढेर है ।"

अस्ट्रेलियन कवि जूडिथ राइट भी मृत्युबोध की तीव्रता को आत्मसात किए हुए है । ये कवि हम सबको मृत्यु की सेनाओं से घिरा हुआ अनुभव करता है, सम्पूर्ण परिवेश मृत्युबोध का संदेश वाहक है अतः कवि क्षण सत्य को भोगने की बात करता है उसने मृत्यु के चरणों को आहट सुनली है—

"हमारे चारों ओर अब मृत्यु की सेनाएँ खड़ी है

उसके कदम पास आते जा रहे हैं

पथराते हृदय पर अपने गर्म हाथों का ताला डाल दो

और मुझे कुछ देर और निर्भर रह लेने दो

अंधेरे मे ढूंढ कर मुझे अपने से बाँध लो
क्योकि नगाडों की काली भूमिकाएँ बनने लगीं हैं
और हमारे चारो ओर सब प्रेमियों के चारो ओर
मौत का घेरा जकड़ता आ रहा है।"

आस्ट्रेलियन कवि जेम्स कर्बेट अपनी प्रसिद्ध कविता 'मृत्यु लेख' मे इसी बोध को जीता है—

"मैंने हवा के लिफाफे को भर दिया
भयंकर संदेशो से तटस्थ आकाश को
मैंने छुरा भोक दिया जिसमे से तुम्हारे मार्ग दर्शक
जीवन को ले जाते है शनिग्रह तक।"

इन्डोनेशिया के कवि डब्ल्यू० एस० रेन्द्रा की कविता में भी 'मृत्युबोध' को स्पष्टि मिली है। टर्की के कवि सी० टरान्सी ने 'मृत्योपरान्त' शीर्षक से एक कविता लिखी है। गुजराती कवि अब्दुल करीम शेख खण्ड खण्ड हुई जिन्दगी से आजिज आकर मृत्यु की कामना करता है—

"मृत्यु—मुझे उसकी अत्यधिक आवश्यकता है
लाओ
मैं रात दिन नकाब ओढ़े भटकता हूँ
फिर भी वह कहीं मिलती नही।"

पंजाबी कवि कृष्ण अशान्त मृत्यु सम्भावना से अशान्त हैं—

"ये पतिव्रत की प्रतीक मेरी पत्नी
चाँद जैसे बच्चो सहित
यदि किसी दिन अनायास मृत्यु की गोद मे सो जाय।"

आज की कविता में विश्व का प्रत्येक कवि किसी न किसी रूप मे 'मृत्यु दंश' का अनुभव करता ही है। हिन्दी के नये कवि मे भी मृत्युबोध काफी गहरा है। सुरेन्द्र कवि के 'कौन से संदर्भ दे दू' कविता संग्रह में 'मृत्यु दश' कविता इसी परिप्रेक्ष्य को की उपलब्धि है—

जैसा कि मैं निवेदन कर चुका हूँ कि मृत्यु बोध से आक्रान्त होना भी क्षण महत्व को स्वीकार करने के अनेक कारणो में से एक है। जीवन की अनिश्चितता ने उनके पैर उखाड़ दिए हैं, वे क्षण के सारे सुख को एक बारगी निचोड़ लेना चाहते हैं। अव्यवस्थित जीवन और विश्व मे नित्यप्रति होने वाले परिवर्तनो ने मानव अस्तित्व में एक प्रकार की अस्थिरता ला दी है। आज की कविता से पूर्व छायावादियों ने क्षण-सत्य की अर्थवत्ता को नही पहचाना था, वे व्यवस्थित जीवन और तरल भावबोध के हामी थे। उनमें या तो प्रेम पीड़ा थी या दुखते

दाँत को धीरे-धीरे दुखाकर आनन्द लेने की प्रवृति थी। परिवेश गत यथार्थ कटुता से उनका साबका नही पडा था दूसरे शब्दो में वे कोमल भावनाओं के धनी थे। आज के युग ने मनुष्य को ठीक इसके विपरीत जीने को बाध्य कर दिया है, उसे घुटन, ऊब और विवशताओं एव उलझे हुए जीवन मे एक भी सुखद क्षण प्राप्त होता है तो वह उस क्षण को पूर्णता मे जीने को लालायित हो जाता है। स्वतन्त्रता के लिए निरन्तर संघर्ष करती हुई अफ्रीकी सामयिक कविता चेतना-कोणो से विश्व की प्रबुद्ध कविता के समानान्तर न होने पर भी क्षण-सत्य और उसके महत्व की सच्ची पकड से युक्त है। कवि जैक कोप की काव्य पंक्तियाँ क्षण-सत्य-ग्रहण की स्थिति की उजागर करती है––

"शारदीय सरिता पर जमी बर्फ से टकराते क्षणो को
पहचानो और तुम, वायु कुसुम––जडहीन पुष्पो को
गंध सिंचे घास पौधों मे खोजते आओ।"

पंजाबी नयी कविता मे भी क्षण-सत्य-सौन्दर्य अभिव्यक्ति पा रहा है।

कवि स्वर्ण की 'युग्म' कविता से कुछ पंक्तियाँ इस संदर्भ मे
उद्धृत है––

"आह
ये क्षण––
समय के कोमल परों से उतार कर बाँध लूँ।"

विश्व कविता में एकाकीपन की पीड़ा का बोध मृत्युबोध के चलते ही उभरा है। असहाय जीवन का भार वाहक मानव भीड़ मे भी स्वयं को नितान्त अकेला अनुभव करता है। बदलते हुए मानदण्डों ने उसे समस्त समास्याओं से जूझने के लिए अकेला छोड़ दिया है। एकाकीपन मानवीय कुण्ठाओ के अनेक कारणो में से एक है। यान्त्रिक युग की इस देन से मनुष्य भीतर ही भीतर टूट गया है वह युग की यान्त्रिकता और जीवन की यान्त्रिकता––एक रसता–को जिन्सबर्ग की कविता में अनुभवता है––

"मैं फिर यहीं वापस आ गया हूं'–यान्त्रिक
श्रम की अनुभूति अपने मूढ़ भाग्य पर लौट
आई है––क्षुद्र विषय संगीत के साथ––
मैं छोड़ देता हूँ।"

प्रसिद्ध रूसी कवि पास्तरनक की कविता में एकाकीपन का तीखा बोध एवं जीवन की भार-विवशता की प्रभावशाली अभिव्यक्ति हुई है। कुछ पंक्तियाँ समुद्धृत है––

"मैं अकेला हूँ

सब डूबा जा रहा है
जिन्दगी मे चलना मैदान मे चलना नही है।"

एकाकीपन की सर्वव्यापी अनुभूति विश्व-कविता मे इस छोर से लेकर उस छोर तक समाहित है। एकाकीपन का बोध मैक्सिको के कवि लुई करनूदा की कविता 'बहुत पहले का बसंत' में जीवन के आकर्षक असह्य भार के साथ स्पष्ट हुआ है।—

निर्जन के किसी कोने मे,
अकेले अपना सिर अपने हाथो मे लिए
प्रतिहिंसक प्रेत की तरह
तुम यह सोच–सोच कर रोते रहोगे कि
जिन्दगी कितनी खूबसूरत थी और कितनी व्यर्थ।"

अफ्रीकी कवि इन्ग्रिड जोन्कर की कविता 'मैं नही चाहता' इसी संदर्भ की उपलब्धि है।

उपर्युक्त एकाकीपन का बोध, मृत्युबोध, यान्त्रिकता, परिवेश गत जीवन पीड़ा तथा अन्तर्विरोधो के इस युग मे कवि व्यंग्य–सृष्टि करने के लिए बाध्य है। प्रत्येक कवि जीवन की कड़वाहट को व्यंग्य की तल्खी मे भूल जाना चाहता है। वह समाज पर व्यंग्य करता है रूढ़ियो और परम्पराओ पर व्यंग्य करता है कभी-कभी स्वयं पर भी व्यंग्य करने लगता है। गत युगीन मान्यताओ के प्रति उसके अन्त: करण मे विद्रोह है, इन मान्यताओं की रक्षक और आज के कवियो की उपलब्धि को नकारने वाली, युग बोध से पिछडी पीढी नये कवि के मार्ग मे बाधक बनती है। ऐसी स्थिति में वह यदि इन परम्परावादियो और नए आयामों को मुँह बनाकर देखने वालो के प्रति 'व्यंग्य निवेदन' न करे तो उसकी स्वय की स्थिति व्यंग्य का विद्रूप बनकर रह जाय। समाज मे बढ़ते हुए भ्रष्टाचार, आर्थिक विषमता और उसके कष्टो को अनुभव करता हुआ मलाया का कवि ईतियाग होग एक व्यंग्य सृष्टि करता है—

"इसलिए में सोचता हूँ कि रिटायर होने पर
मै राजनीति मे हिस्सा लूँगा
या कोई व्यापार कर लूँगा, क्योकि सरकारी नौकर
कभी जल्दी अमीर नही हो सकता।"

सम्प्रति युग का रचनाकार विवशताओ के कारण असंतोष का अनुभव कर रहा है इस युग को यदि भय और असंतोष का युग कहा जायतो एक बडी सीमा तक सही होगा। बीट कवि पाल ब्लैकवर्न ने असंतोष की अभिव्यक्ति दी है।

"मेरे असंतोष की आडी वक्र रेखाएं
मेज़ के इधर-उधर मँडरा रही हैं
सुस्त अर्द्ध चेतन अर्द्धमत्त
मन को मित्रों से भर रहा हूं।"

ऐड्रियन मिचेल की कविता में व्यंग्य उपलब्धि देखी जा सकती है।

विश्व-कविता मे नयी चेतना के प्रति अटूट आस्था नये कवियों के (टूटे हुए होने पर भी) विश्वास की प्रतीक है। नयी कविता की नयी चेतना के प्रतीक रूप सूर्य का प्रयोग लगभग विश्व के समस्त कवियो मे मिलता है। किसी-किसी कवि ने सूर्य को (अस्त होते हुए सूर्य को) पुरानी परम्परा और आस्था का प्रतीक भी माना है। आज की सार्वभौमिक काव्य चेतना का प्रतीक सूर्य विभिन्न राष्ट्रों विभक्त भूखण्ड को चेतना कोणों से परस्पर जोड़ता है। कविता के माध्यम से विश्व-मानव की यह एकता राजनैतिक दलबन्दियों का पर्याप्त ज़ोर होने पर भी विश्व-मानव की एकता की सूचक है साथ ही विश्व–हृदय के एकतान और समान बोध का प्रमाण है। उपमान रूप में भी इस युग की कविता मे सूर्य का प्रयोग बहुत अधिक हुआ है। यह सूर्य–प्रयोग बहुत अंशों में बहुप्रयुक्त चाँद की प्रतिक्रिया स्वरूप भी हुआ है। विश्व–कविता में स्थान–स्थान पर निराशा परक कोणों से भी युग समस्याओ पर चिन्तन हुआ है। सूर्य का चेतना-के प्रतीक रूप में तथा उपमान के रूप में अत्यधिक प्रयोग की एक-रूपता अब से पहले विश्व-काव्य में नहीं देखी जा सकती। सामान्य रूप में सूर्य नयी चेतना की दहकती बिम्ब प्रतीकगत अभिव्यक्ति है।सूर्य–धूप भी चेतना की बिम्बमयी तरल उपलब्धि है साथ ही वह काव्य प्रक्रिया के अनेक पक्षों का उद्घाटन करती है।

डच कवि गैरिट आशटेबर्ग अपनी 'सूर्य' कविता में बन्धनहीन नयी कविता के संकेत देता है—

"हमारे रक्त कोणों से उठकर.........ओ वसन्त सूर्य
नशे में चूर दौड़ता है बन्धन मुक्त।"

कनाडा का कवि के० वी० हर्ज नयी चेतना के प्रति 'एलर्जिक' पुरानी पीढ़ी–जो स्वयं को मन्त्रकार मानती रही है—के प्रति 'पैगम्बर नहीं हो' कविता में उनकी चेतना को मृत होता हुआ सूर्य बताता है। नयी चेतना सूर्य को मन्त्रकारों ने झुठलाया किन्तु युग-बोध से कटे हुए ये मन्त्रकार अपने अस्त होते सूर्य के सहगामी होंगे, इन्हें हथियार डालने पड़ेंगे। कुछ मन्त्रकारों ने यह

कार्य प्रारम्भ भी कर दिया है। नयी पीढ़ी का रचनात्मक आक्रोश इस कविता मे सफल अभिव्यक्ति पा सका है नये प्रतीको और बिम्बों के माध्यम से—

"ये मेमने
जिनकी खालें उत्तर चुकी है
चुपचाप अपने जलाए जाने का इन्तजार कर रहे है
उनके पात्र भेडों के उपहास के गोश्त से भरपूर है
जो मृत्यु के बसन्त की हरारत मे और तेज़ी से नाचने लगती हैं
लाल रंग के उस गलीचे पर
जो मन्दिर के वक्र तोरण से
उजलते सूरज तक बिछता है
पर द्रष्टा ने वन प्रान्त मे बैठे....
सूरज को देखा
बढ़ती हुई कालिमा जैसा
फूलते आसमान में
वह तुम्हारे नर्तन पर
स्तुतियाँ नहीं गा सका
भेड़ लोलुप तुम
सांड से हिंसा प्रिय
सूर्य पर गुर्राते
और ज्यादा कब्रें खोदने से थक कर
जब वह सास लेने को रुका
तब चिता की आग में से जिन्दगी की कामना प्रकट
करती भेड़ को
पैगम्बर ने उत्तर देना भी उचित नही समझा
तुम पैगम्बर नही
एक आदमी ही हो ऐसे देश के
जहाँ के लोग भेड़ें हैं। सच्चा संत
तुम्हारी तरह जबान
नहीं चला सकता। वह
अँधेरे आसमान में धुएँ की एक लहर
देखकर ही
अपने हथियार रख देगा
और मृत सूर्य के शव के समान खुद भी लेट जायेगा

अल्जीरिया का कवि अब्दुल वहाब· अलबयाती 'जगमगाओ ओ सूर्य' कह कर नये बोध का आह्वान करता है। मन्त्रकारो द्वारा बिद्ध "घायल सूर्य जीवन को अग्निकुण्ड सा जलाता है।"

श्री सुरेन्द्र वे "कौन से संदर्भ दे दूँ," कविता संग्रह की 'सूर्यास्था' कविता मे मन्त्रकारों के 'चेतना सूर्य' विषयक 'नकार' को व्यक्त किया है

"पंख लटके बकों ने
ठूँठ रुखो पर बैठे
मुँह बाए
भौंचक, सूर्य देखा
गर्दनें झुकाली
सूरज को नकारा।"

दक्षिण अफ्रीका के कवि गाईबटलर के सृजन के लिए खुले हाथों पर सृजन-स्वीकृति स्वरूप सूर्य 'चुम्बन अंकित करता' है—

"यहाँ सूर्य का समतल आलोक पहले बिखरता है
निष्कपट धुली हुई किरणें
आँखों और चेहरे पर झुक आती है
मेरे शीतल खुले हाथों को चूमती है।"

ये कवि अपने जीवन के प्रत्येक क्रिया-क्षण को नये बोध से आलोकित करने के लिए विह्वल है—"मेरे उन्मुक्त प्रवाहों पर सूरज सुख में या दुख में
आश्चर्य क्रोध या चुम्बनो में ज्योति दे।"

कैरेबियन कवि ए० जे० सिमर अपने रक्त की प्रत्येक बूंद को, त्वचा के प्रत्येक रोम को चेतना सूर्य से प्रकाशित अनुभव करता है—

"सूर्य आज मेरी हड्डियों में गहरा जा घुसा है
सूर्य मेरे रक्त में, मेरी त्वचा के नीचे रोशनी बह रही है
सूर्य शक्ति का ध्वज है जो धुँधलाते सितारे पर
बरस रहा है।"

यथार्थ जन्मी कविता का संकेत यही कवि सूर्य-प्रतीक के माध्यम से देता है—

"यह रूम्यता, सूर्य ने अपनी लौह किरणों के बल
नदी की कीचड़ से उत्पन्न की है।"

एक दूसरा कैरेबियन कवि सैमुएल सेलवा मन्त्रकारों के सूर्य को पराजित करने की बात कहता है—

"सूर्य ।
मेरी पीठ पीछे खीसे निपोरते मैंने तुम्हे कंधो से
जून में झुका दिया घने जंगलो की झाडियो बीच"

न्यूजीलेण्ड की कविता मे भी सूर्य को उपयुक्त संदर्भ मे ही स्वीकारा गया है। नयी चेतना के सम्मुख खण्डित मन्त्रकार पीढी का आत्मकथन कवि गोर्डन चैलिस की इन काव्य पंक्तियो में प्रकट हुआ है—

"मै जो अब तक एक दम सीधा तना हुआ चलता था
गेहूँ की बाल की तरह झुक गया हूं
कैसे विश्वास करूँ कि मैं सह लूंगा प्रचन्ड आतप
सूर्य का साक्षात्कार कर लूँगा
अपनी रेंगती हुई परछाइयाँ नही देखूँगा।
अनुभव करूँगा कि अखण्डित हूँ।"

कैरेबिया का कवि मार्टिन कार्टर पुरानी पीढी के 'सूर्य की हार' को देख पा रहा है—

"सूर्य ने बडी जल्दी हार मान ली है उस संघर्ष में
जहाँ जय होती है वर्षा।"

कोरिया का कवि को-वॉन रचनाकारों की नयी पीढ़ी को सूर्य चेतना प्राप्त कर, नये बोध की क्रान्ति के लिये संदेश देता है—

"आज रात समुद्र के गर्भ मे सूर्य टकराता फिरेगा
कंकाल को हाथ मे उठाए
उसकी रोशनी में बटोरे मोतियों की तरह
....
और तुम समुद्र ! पूरे यौवन मे होगे तब एक और
ज्वार उत्पन्न करना"

इस संघर्षशील युग मे जहाँ एक ओर मानव परिस्थितियो के दबाव से—विवश होकर आस्थाहीन हो रहा है, वहाँ दूसरी ओर इस दबाव से अस्तित्व बनाए रखने के लिए प्रेरणा ग्रहण कर नयी आस्था के 'अंकुर' स्वर्ग मे संजो रहा है। रूस के प्रसिद्ध कवि ब्लाडीमीर मायकोव्स्की ने इस नयी अंकुरित होती हुई जिजीविषा शक्ति को 'नए ओठो' में पढा है—

'नन्ही एक मछली के पंखो में मैंने
नए ओठों की आकाँक्षाएँ पढ़ी।"

रचनाकारों का एक वर्ग ऐसा भी है जो सम्प्रति युग की—परिवर्तित संवेदना को कह नहीं पा रहा हैं वहीं शुतुर्मुग की तरह गत-बोध के रेत में मुँह गढाकर

'नयी आवाज़ों' के प्रति बधिर बना हुआ है। यूगोस्लाविया के रचनाकार वेस्नापरुन इस स्थिति की ओर संकेत करते हैं—

"चारों ओर लोग चल फिर रहे है
पर मैं अपना मुंह नहीं मोड़ती
क्योंकि मैं पुराने तूफानों की आवाज़ों मे
डूबी हुई हूँ।"

यदि विघटित होते हुए जीवन मूल्यों और यथार्थ की विडम्बना को सहन करता हुआ मानव भीतर से आस्थावान और भविष्य के प्रति विश्वास से पूर्ण रहे तो अन्ततोगत्वा वह सफल होगा। अफ्रीकी कवि जैककोप का इस पर विश्वास पूर्ण है—

'रेत के लहरीले टीले
शोकाकुल हो चीखते हैं मेरे पद चिन्हो पर
यदि मैं उन्नत लजालु बरखा मेघो की तरह नृत्य करूँ
तो क्या मै स्वर्ग मे जलद पुंजों को नही बाध लूँगा।"

न्यूज़ीलैण्डी कवि चार्ल्स बैश मानता है कि विघठित होते हुए जीवन मूल्यो, युग विशृंखलन एवं मानव की कटु अराजक मनः स्थितियाँ ही 'नए गीत को जन्म देंगी', 'असंगति से ही रूपाकृति' जन्म लेगी।

मन्त्रकार पीढ़ी का संवेदन मोथरा हो गया है"

वह नए युग के अन्तर्विरोधो की सही प्रतिक्रिया कह पाने मे प्रायः असफल हो रहा है। क्यूबा का कवि इसेल रिवेयरी 'कितनी धीमी है यह बोध की प्रतिक्रिया' कह कर इसी परिस्थिति से अवगत कराना चाहाता है। कनाडा का कवि फ्रैंक डिवी 'पुरानी कविताओं को नष्ट करने का आह्वान करने के रूप में हीन बोध से, पुरानी रूढ़ियों से मुक्त होना चाहता है—

"आज
पुरानी कविताएं नष्ट करने का दिन है
नाश्ते से पहले ही उन्हें नष्ट कर दें।"

कैरेबिया का कवि यह स्वीकार करता है कि हर युग मे मठाधीशों द्वारा कुछ सीमाएं निर्धारित की जाती रही हैं, किन्तु नयी पीढ़ी ने उन्हें हमेशा ही तोड़ा है, यह ऐतिहासिक क्रम सदैव रहा है इसलिए यदि आज 'पुराना बोध' और उसके 'संरक्षक ओछे पड़ रहे है, छूट रहे है तो इसमें खीजने और विलाप करने की आवश्यकता नहीं, उन्हे अपनी स्थिति पर संतोष करना चाहिए !! फ्रैंक० ए० कौलीमोर की कविता मे इस सत्य को वाणी मिली है—

'विद्रोही सदा ही हुए हैं परम्परा के विरोधी....

............पैगम्बर पादरी और राजा सदा-
सीमाएँ खीचते रहे और वे टूटती रहीं।"

एक सीमित परिधि मे रहने वाली उर्दू कविता में भी नया बोध और नयी आस्था जन्म ले रही है। उर्दू का कवि 'मर कर' 'यार' के कूचे से जाते हुए अपने जनाजे की कल्पना से हटता जा रहा है

नयी आस्था के साथ नयी कविता मे नया कथ्य और विषयो के प्रति नया दृष्टिकोण भी स्पष्ट हुआ है। ताज़गी, सहनता और बौद्धिक झुकाव यहाँ खास है। रूसी कवि ज्यार्जी इवानोव 'उपयोग' कविता मे नए कथ्य की ओर इंगित करता है—

"शायद इसी तथ्य का कुछ उपयोग हो,
कि मैं हवा में सास ले रहा हूँ
कि मेरा ओवर कोट बायी तरफ
सूर्यास्त की रोशनी मे नहा रहा है
और दायो तरफ सितारो मे डूबा जा रहा है।"

अर्जेण्टाइना का कवि जार्ज लुई बोरेज़ीज 'कुन्डा, छज्जा और पेड़ पत्तियो की दोस्ती मे जीवन बिताना खूबसूरत समझता है।'

प्रेम विषयक दृष्टिकोण भी नयी कविता में बदले हुए कोणों से देखा जा रहा है। उसके प्रेम स्वीकरण मे बौद्धिक झुकाव और एक बँधी-बँधी सी तटस्थता है, इस निस्संगता के कारण प्रेमानुभूति अधिक यथार्थ स्थिति पर आ गई है, अति भावुकता और गीलेपन से उसे निजात मिल रही रही है। स्वच्छन्दतावादी प्रेमदृष्टि नयी कविता से प्राय: कट चुकी है। नयी कविता के कवियों का एक वर्ग वासनाहीन प्रेम को मान्यता नही देता, कही-कही वासनात्मकता नयी कविता मे अति तक पहुंच गई है, यह उसका स्वस्थ पक्ष नही है। किन्तु वासना-हीन प्रेम की स्थिति यथार्थ के विरुद्ध है और नया यथार्थ की भूमि से दूर नही रहना चाहता। प्रेम को स्वच्छन्दतावादी कल्पना की परिधि से निकाल कर उसे नैसर्गिक रूप मे अनुभव करने का श्रेय आज की विश्वकविता को है। प्रेम का अशरीरी रूप वासना के मार्ग से ही जाता है अत: वासनाहीन होकर प्रेम की अन्तिम पवित्रता को प्राप्त नही किया जा सकता। न्यूज़ीलेण्ड का कवि मौरिस डुग्गन अपनी कविता में बदले हुए कोण से प्रेम पर विचार करता है—

"जहाँ मेरी वासना है
निश्चय ही वहाँ मेरा प्रेम भी है
जहाँ अत्याधिक प्रेम है, वहाँ वासना भी है।"

प्रेम का एक स्वरूप वह भी है जहाँ कवि सम्पूर्णतः वासनात्मक साये में होने पर भी जीवन संघर्ष को न भूलने के कारण वासना को सम्पूर्णतः जी नही पाता। युग-दबाव ने मानव को यहाँ तक नपुंसक बना दिया है। बंगला के कवि विनय मजुमदार की कविता में इस बोध की स्पष्टता मिली है—

"जागृत वासना की स्थिति में भी
नहीं देख पाता हूँ, विकसे हुए, कसे हुए फूल।"

निसिम इजिकिएल आज की ईमानदार और यथार्थ परक प्रेम-अनुभूतिक वासना से परे नही मानता—

"प्यार करने वालो के बीच ज्ञान का आदान प्रदान होता है,
होगा, यह बात समयानुकूल नही है।"

मन्त्रकार समीक्षकों ने नयी कविता में अभिव्यक्ति पाई जाने वाली वासना और कुंठा की जितनी निंदा की जा सकती थी, की है और इसी आधार पर उन्होंने नयी कविता की उपलब्धियों को सम्पूर्णतः नकारा भी है। वासना का परिणाम मानव है, यदि वासना निंद्य है तब मानव भी निंद्य होगा। कदाचित इस प्रश्न का उत्तर मन्त्रकार पीढ़ी के पास नही है। काव्य के माध्यम से अभिव्यक्त वासना की आलोचना कराने वाले मन्त्रकार समीक्षक वासना प्रसूत मानव को परम पवित्र मानते हैं यह अन्तर्विरोध है, यह उनकी समीक्षा का द्वंध है, इसी द्वंध बुधि से क्या वे कविता का सही मूल्यांकन कर सकते है ? आज की विश्व-कविता दो विरोधी कोणो पर सृजित हो रही है। बीट कवि पाल ब्लैक बर्न—

"शीतल शारदीय प्रकाश
(पृथ्वी धूमली रहती है)
सांयकाल के झरोखो को
भर रहा है...... ...मैं अकेला
बिस्तर पर बैठा हूँ।"

जैसे अत्यन्त व्यक्ति वादी पीड़ाकारक बोध को जीता है तो इजराइल का कवि बर्नाड काप्स युद्ध विभीषिका की सम्भावना से समाप्त हो जाने वाले विश्व के लिए 'शान्ति बम' चाहता है जिससे दुनियाँ 'गुलाबों' से ढक जाए। यह समष्टिवादी चिन्तन नयी कविता का दूसरा छोर है।

—सुरेन्द्र उपाध्याय

●●●

सामयिक बंगला कविता

नयी पुरानी पीढ़ी और नये पुराने युग बोध का संघर्ष विश्व की अनेक भाषाओं की तरह बंगला भाषा मे भी चला है।
रवीन्द्र ने साहित्य की अनेक विधाओ मे लिखा। कुल मिलाकर रवीन्द्रनाथ के व्यक्तित्व ने युगीन कृतिकारो को आकर्षित तथा आक्रान्त किया। आक्रान्त इस अर्थ में कि युगीन कृतिकारो का रवीन्द्र के जीवित रहने तक (आज तक भी) उचित मूल्यांकन नही किया जासका है। यह तथ्य व्याख्या की अपेक्षा नही रखता कि रवीन्द्र का किसी भी कृतिकार ने पूर्ण अनुसरण नही किया, यदि किया भी तो वह पूर्ण सफल नही हो सका। यही कारण है कि रवीन्द्र का 'रवीन्द्रियन' रूप मे परवर्ती कृतिकारो पर विशेष प्रभाव नही पड़ा।
रवीन्द्र के समय मे ही रवीन्द्र की रचनादिशाओ से सर्वथा मुक्त, विविध दिशाओं में कतिपय रचनाकार प्रतिभा के साथ स्वतन्त्र और सशक्त सृजन कर रहे थे। अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति मिल जाने के कारण रवीन्द्रनाथ के समकालीनो का सम्यक मूल्यांकन नही हो सका।
काज़ी नज़रुल इस्लाम के काव्य में जाने-अनजाने मे ही सही, रवीन्द्र प्रभाव (चाहे जिस रूप में हो) से मुक्ति प्राप्ति अभियान का प्रारम्भ हो जाता है। नज़रुल विद्रोह के कवि है कुछ कुछ वैसे ही जैसे कि हिन्दी के निराला, किन्तु इस अन्तर के साथ कि निराला का अपना एक जीवन दर्शन था नज़रुल का सुनिश्चित जीवन दर्शन नही है। उनके विद्रोह की क्या परिणति है कदाचित इससे वे पूर्णतः भिज्ञ नही है।
बँगला का आधुनिकतम काव्य बुद्धदेव बसु से उसी तरह आरम्भ होता है जैसे हिन्दी में अज्ञेय से। और बुद्धदेव से लेकर शक्ति चट्टोपाध्याय तथा संदीपन तक नये बोध और नये शिल्प के अनेक रूप तथा सम्प्रेषण हैं। बुद्धदेव बसु मे यथार्थ की गम्भीर पकड़ और बौद्धिकता, तो प्रेमेन्द्र मित्र में प्रतिक्रिया रूप मे सामाजिक यथार्थ के साथ रोमेण्टिसिज़्म जीवनानन्ददास मे प्रकृति और जीवन के सम्यक ऐन्द्रयिक बोध और फिर बाद के नये कवियो में कुण्ठा, कुत्सा, घृणा पलायन, शिल्पहीनता की पराकाष्ठा (खासतौर से नये बीट कवियो-शक्ति चट्टोपाध्याय और संदीपन मे) बँगला कविता की यह पूरी यात्रा यथार्थ की जमीन पर हुई है, कही दृष्टि कामरेडियन है तो कही अमेरिकन सेक्स का प्रभाव।
सामयिक बँगला कविता में यथार्थ की सच्ची पकड है। 'रवीन्द्रियन' वायवीय और गीलापन नही है। इसमें सर्वत्र एक तीखी बौद्धिकता है जो भावनातमकता

को वही तक स्वीकार करती है जितनी की अपेक्षा है। रचनाकार यथार्थ भूमि को पकड़ कर ही कल्पना का सहयोग स्वीकार करता है। उसकी कल्पना निर्बाध और जीवन मुक्त नही है। मोहितलाल इस तथ्य को समझ पाये हैं—"बँगला साहित्य में अब तक मुख्यतः भाववाद का ही बोलबाला रहा, बंकिम की कल्पना मे एक बड़े आदर्श का भाव है। रवीन्द्रनाथ की कल्पना मे वस्तु तथा भाव की एक समन्वय चेष्टा है और जिनको हम भारतीय उपन्यासकारों में सर्वाधिक प्रगतिशील तथा क्रान्तिकारी समझते है, वे भी विश्लेषण करने पर वस्तुवादी नहीं पाये जाते ……बंकिम चन्द्र की कल्पना मे वास्तविकता एक बाधा के रूप मे नही थी, उनकी कल्पना थी सम्पूर्ण निरंकुश और बेरोकटोक। रवीन्द्रनाथ की कल्पना में वास्तविकता और रूपान्तरित होगई है, मानो वास्तविकता की वास्तविकता ही लुप्त होगई है। शरतचन्द्र की कल्पना में वास्तविकता की समस्या जटिल हो चुकी है, वास्तविकता के लिए एक प्रबल आवेग की सृष्टि हुई है। इस त्रिधारा से शायद बँगला साहित्य का वस्तुवाद खत्म हो गया है। इसके आगे जो साहित्य होगा उसमें वास्तविकता के साथ वास्तविक रूप से निबटना पड़ेगा।" मोहित लाल ने यद्यपि यह बात उपन्यासो के यथार्थ के लिए कही है तथापि यह अपनी सम्पूर्ण अभिव्यंजना के साथ नयी चेतना से पहले की कविता पर सपूर्णतः लागू होती है। सम्प्रति युग के नये स्वीकार की कविता में यथार्थ की सही स्थिति होने के कारण मानव को (बाह्य और आन्तरिक दोनो रूपों में) समुचित आदर मिला है और उसके परिवेश के लिए उज्ज्वल भाव भी। इस कविता में आधारहीन आदर्शों को नहीं पाला जारहा है। ये आदर्श रचनाकार के दायित्वबोध का उस सीमा तक नहीं समर्थन पाते हैं जिस सीमा तक जाकर वायवीय नही होजाते। बँगला कविता का यथार्थ किसी विचार के लिए न होकर वादमुक्त यथार्थ है। यथार्थ चित्रण के कारण हिन्दी की नयी कविता की तरह बँगला सामयिक कविता पर भी गत युगबोध के प्रहरी आलोचकों ने अनेक तरह से आक्षेप किए हैं। "कहा जाता है कि अति आधुनिक साहित्य छाग साहित्य है, प्राचीन साहित्य रामायण है तो यह कामायण है। अति आधुनिक कविता को कामोद्दीपक तथा शरीर की पूजा करने वाली कलुषित वासना भी कहा गया है। मैं समझता हूँ यह बिल्कूल झूठा और बेबुनियाद लाँछन है। हाँ जिन बातों को अब तक हमारे समाज के नीतिवाद साहित्यकों ने केवल अस्वीकार करके ही उड़ा देना चाहा था, और जिसका नतीजा हमारे सामने बराबर आता रहता था, उनको अति आधुनिक साहित्य ने सबके सामने लाकर रख दिया है। यही हमारे बुजुर्गों के विकट दुर्नीति है। अति आधुनिक साहित्य को कुछ बँगाली समालोचकों ने 'बाथरूम साहित्य' 'गुसलखाना साहित्य'

कहा है इस आक्षेप का उत्तर यह है कि अति आधुनिक अपने गुसलखाने को हमारे प्राचीनों के रसोईखाने से अधिक साफ सुथरा रखते है ।

विश्व का कोई भी विषय अश्लील नही है—न ही हो सकता है । कृतिकार की प्रेषणीयता को लेकर यह प्रश्न उठाया जा सकता है । किन्तु प्रेषणीयता अश्लील नही हो सकती वह या तो परिष्कृत हो मकती है या फिर भोडी । अक्सर वानप्रस्थ और सन्यास अवस्था को पहुँचे हुए कृति समीक्षक 'काम' 'बासना' 'रति' अथवा इन जैसे ही दूसरे शब्दो को देख–सुन कर ही भड़क उठते हैं । शब्द के स्थूलत्व को ही पकड कर उचकाना कहाँ तक बुद्धि संगत है ? शब्द की अभिधाशक्ति नये बोधप्रेषण मे कितनी अक्षम है—इसी कारण नये रचनाकार को वह इष्ट नही है—यह स्पष्ट हो चुका है । यदि रचनाकार सम्भोग रूपक काम परक प्रतीक से अभिनव आयामगत संकेत देता है; स्थूलत्व और मासलता भी हमे अरूप संदर्भों की महामही भूमि पर उतार सकते है, यह कवि के प्रेषण कौशल और उच्च आशय पर निर्भर करता है ।

बंगला की सामयिक कविता पर बल्कि हिन्दी नयी कविता पर भी यह आरोप लगाया जाता है कि वह अस्पष्ट है । कविता को एक स्तर तक स्पष्ट होना ही चाहिए । प्रश्न उठ सकता है कि क्या यह अस्पष्टता छायावादी कविता की वह अस्पष्टता तो नही है (छायावादी कविता अब अस्पष्ट नही रह गई है ।) जिसे कभी मध्यकालीन और द्विवेदी युगीन आलोचक पीढी ने देखा था । हिन्दी के रीतिकाल मे 'पूछिए केशव की कविताई' कहकर केशव की कविता को भी अस्पष्ट माना गया था, कम से कम वैसा संकेत तो किया गया था, किन्तु अब केशव की कविता भी अस्पष्ट नही रह गई है । बतौर नमूने के सन् १९२९ के आसपास के विशालभारत के किसी अंक मे श्री बनारसीदास चतुर्वेदी ने प्रसाद की 'आकाश द्वीप' कहानी को निरुद्देश्य और सर्वथा अस्पष्ट बताया था । आज पाठको के लिए उक्त कहानी कितनी अस्पष्ट है ?

सामयिक बंगला कविता ने प्राचीन सदियो और व्यतीत युगों के सेन्सर को छिन्न भिन्न कर दिया है । वह उन भूमियो तक बढ़ आई है जहाँ प्राचीन संस्कारो को न केवल ठेस लगी है, बल्कि उन्हे टूट जाना पड़ा है । अनेक स्थलों पर ऐसा भी हुआ है कि कविता काव्य की पटरी से नीचे भी उतर गई है, किन्तु यह सम्भव भी है और स्वाभाविक भी । प्रमेन्द्र विश्वास ने इस तथ्य को हृदयङ्गम किया है "यह जो साहित्य है उसमें सम्भव है त्रुटियाँ हो, रहें । युग युगान्तर के बन्धन को एक दिन मे तोड़ने चले हैं । कुछ तो टूटेगा । सीमित संस्कारो

के संकीर्ण दायरे में शान्ति भी है, शृंखला भी, किन्तु वहाँ जीवन की वह चंचलता कहाँ और मुक्ति का आनंद कहाँ ?"

बुद्धदेव बसु, प्रेमेन्द्र मित्र, अचिन्त्यकुमारसेन गुप्त अति आधुनिक कविता के त्रयी माने जाते रहे है। जीवनानन्ददास एक अति महत्वपूर्ण व्यक्ति हैं बंगला की सामयिक कविता में। इस शृखंला में और भी अनेक नाम हैं—बहुत नहीं लेकिन कम भी नहीं। बंगला की सामयिक कविता नाम विशेषों में जीवन्त है समूह रूप में भी और बल्कि धारा रूप मे भी। धारा प्रमुख है, किन्तु बूंद भी।

नये युगबोध का प्रहरी बंगला कवि मृत्यु, जीवन की अन्तिम नियति है, इसे जानता है, अपने नगण्य व्यक्तित्व को भी जानता है, किन्तु फिर भी उसमे एक पूर्णता का भाव है, एकाकीपन का ऐसा बोझ है जिसे वह कविता मे स्पष्ट कर देना चाहता है

बुद्धदेव बसु की "आर किछु नाहीं साधा" कविता में उपर्युक्त युग-अन्तर्द्वन्द और दुविधा व्यक्त हुई है—

> "नील आकाश के नीचे मेरी स्तुति का गान मुखरित नही होगा····
> मृत्यु का कड़वा काल कूट मेरा चरम भाग्य है
> मैं जानता हूँ इक्कीसवीं सदी को कोई सप्तदशी मेरी कविता को
> चाँदनी स्नात जंगले के नीचे नहीं पढ़ेगी······
> तुमको जो मैंने सब अंगों मे—मर्म मे, प्राणों में, मन में पाया था
> ········यही बात मैं आकाश, धरणी घास को तथा समुद्र के कान में
> कहना चाहता हूं।
> इस परिपूर्णता का बोझ मुझसे अकेले-अकेले नहीं ढोया जाता
> इसलिए हजारो में अपने को लाखों गानों में बाँटना चाहता हूँ।"

अचिन्त्यकुमारसेन गुप्त के 'प्राणों में युगान्तर की मृत्यु को निशा मूर्छित है।' लेकिन फिर भी उनके बोध में आस्था और समष्टिपीड़ा को व्यक्ति रूप में अनुभवने की केन्द्रीयभूत चेतना भी है—

> "अपनी आत्मा में करोड़ों मनुष्यों के अश्रु की बाढ़ सुन पाता हूँ
> सूर्य के हृदय में कौनसी भूख है
> मेरी आत्मा जानती है
> एक कीड़े के डंसे की अस्फुटतम वेदना
> मुझे दुखी करती है
> घास की सभा में मेरा प्राण हरा हो जाता है

मेरे प्राणो में विश्व वेदना का छत्ता है ।"

क्षय होते हुए जीवन और टूटती हुई परिवेशगत क्षमताको सामयिक बंगला कविता मे स्थान मिल रहा है। संघर्ष, टूटना और मिटना प्रेमेन्द्र मिश्र की कविता 'महासागरे-रे नामहीन कूले' मे स्पष्ट हुआ है—

"महासागर के नामहीन कूल पर अभागो के बन्दर में
दुनियाँ के कितने ही टूटे जहाजो की भीड़ है
जो माल ढोते-ढोते टूट गए हैं
जिनके मस्तूलों के धुर्रे उड़ गए हैं
जिनके पाल सीने की आग से जल गए हैं
उन सब जहाजो का यह आश्रय नीड़ है ।"

सामयिक बंगला कविता में जीवन के विविध पक्षों का उद्घाटन हो रहा है । व्यतीत युग-विषय-चित्रण से यह कविता बहुत आगे बढ़ी है । जहाँ इस कविता ने सामन्ती विषयो और सीमित चित्रण-शैलियों को पीछे छोडा है, वहाँ नगण्य उपकरण से लेकर महान विषयो तक के प्रति सहज और सर्वथा बौद्धिक एवं नवीन दृष्टि साथ ही युद्ध सशक्तकला-आयामो का संहार एवं अधिकाधिक आग्रह युक्त जिज्ञासा को स्वीकारा है । कल्पना का उपयोग जीवन स्थितियों से कटकर यथार्थ से परे स्वीकार करना नये बंगला कृतिकारों को अभीष्ट नही है । इसलिए सर्वत्र अभिव्यक्ति में जीवन्तता बनी हुई है । विषय विस्तार कोण से बुद्धदेव वसु ने प्रेमेन्द्र मित्र की कविता के विषय मे लिखा है, किन्तु यह वक्तव्य इसी आस्था के साथ सम्पूर्ण बंगला कविता पर लागू होता है । "उनकी कविता दुनियाँ की छोटी से छोटी चीज से लेकर मनुष्य के भाग्य विधाता के चरणप्रान्त तक विस्तृत है । पुराने अखबार, भाड़े के मकान से लेकर सीमाहीन आकाश में घूमते हुए ग्रह-उपग्रहो तक उनकी गतिविधि है······ मनुष्य की व्यर्थताहीनता तथा दुर्बलता के सम्बन्ध मे गहरी चेतना ही उनके काव्य का मूलसूत्र है । मनुष्य के घर में उसका देवता होता है किन्तु घटनाओ के संघात से ज्ञात होता है कि देवता कहीं नही है ।"

इने गिने कवियो मे आक्रोश, छटपटाहट, घुटन, वर्जनाएँ, कुंठाएँ, त्रुटिपूर्ण सन्दर्भों में गलत शिल्प के माध्यम से अभिव्यक्ति पा रही हैं । त्रुटिपूर्ण सन्दर्भों मे इसलिए कहना पड़ रहा है कि उनकी अभिव्यक्ति वहाँ मंजी हुई नही है । विषय की स्थूलता तो समझी जा सकती है किन्तु प्रेषण की स्थूलता अथवा भौडापन अहमियत देने की बातें हैं ? कविता सीधा अभियान नहीं, उसमें व्यंग्यात्मकता अथवा सांकेतिकता ही विशेष होनी चाहिये ।

सुनील गंगोपाध्याय की कविता में अनेक स्थलों पर इस उपलब्धि का अभाव है, कथ्य के अच्छे-बुरे होने से सरोकार न होकर अभिव्यजंना से सरोकार होना चाहिये। सुनील की कविता अनेक स्थलो पर अखबार की खबर जैसी हो जाती है—

> "मर्द के साथ सोने और खाना पकाने के सिवा
> सारे काम औरतें जानती हैं
> मगर सारे काम गलत जानती है॥"

कविता तर्क नहीं है कही……छूटते हुए तर्कों को गहवाने की सांकेतिकता है॥ कविता में सहजता अपेक्षित किन्तु सहज है इसीलिए उसे असाधारण भी होना चाहिए और असाधारण होते हुए भी सहज। बंगला की अधिकांश सामयिक कविता ऐसी ही है किन्तु फिर भी सुनील मुखोपध्याय स्वयं की कविता मे तीखा व्यंग्य, समाज की कुत्सा को खण्ड-खण्ड कर देने वाली सबल आवाज, जर्जर अवस्था के प्रति प्रेरणास्पद क्रोध लिए हुए है जो यथार्थ चित्रण के साथ साथ प्रतीकात्मकता, एवं बिम्बात्मकता के सहयोग से प्रभविष्णु बन सका है फिर भी उसमें एक सहजता और सीधापन है।

वर्तमान युग की कटुता और अस्थिरता ने अस्तित्व के नकारात्मक भाव को ही अधिक पुष्ट किया है। व्यक्ति की प्रतिक्षण की स्थितियों में द्वैध बना हुआ है। इस द्वैध अथवा दुहरी जिन्दगी को जीने की विवशता उसे अन्तरंगतम क्षणो में भी एकतान नहीं होने देती। परिपक्व वासना क्षणों मे भी वह संशय असुरक्षा और जीवन की पेचीदगी के कारण पूर्ण सम्पृक्त नही हो पाता। विनय मजुमदार की 'पहली कविता' में यह मनःस्थिति मुखर हो सकी है:—

> "जागृत वासना की स्थिति मे भी नहीं देख पाता हूँ
> विकसे हुए कसे हुए फूल
> क्यों देखूं मानसी ?"

समय और क्षण का पानी की पर्त की तरह मुट्ठियों से सरक जाना, स्खलित होता हुआ जीवन और उस पर समय की चोट और रुग्ण मनःस्थितिया, इन सब तक पहुंचने के लिए युग ने मनुष्य को विवश किया है। शक्ति चट्टोपध्याय की 'गुमभर' कविता में उस बोध को प्रकट होना पड़ा है:—

> "जैसे खिड़कियां टूट जायेंगी इतनी तेजी से मुझे आलिंगन में भरकर
> गर्म सलाखों से दाग कर मेरी छाती बार-बार
> चला गया समय और अब प्रतिक्षण
> बंधे हुए पागल घोड़े की तरह पदचाप
> हर खिड़की के नीचे पत्थर पर बजती रहती है……

और थकी मुई उदास वेश्याओं के प्रति एकान्तमोह मुझ में।
सोचता था बीमार सिर्फ देह है, मन नही और जंगल नही है मन
नही। जो भी हो।"

प्रेम जैसे कोमल व्यापार में भी बंगला कवि बौद्धिक हो उठा है। प्रेम के चरम क्षणों मे भी वह सामाजिक बंधनों को न तोड़ पाने वाली अपनी विवशता भोगता है। भोगता इसलिए भी है कि उसमे उसे समाजगत एक स्वस्थ पक्ष दिखाई देता है। मानस राम चौधरी ने इसे कविता में अभिव्यक्त किया है—

"तुम्हारा शरीर अकलुष ही रह गया।
सिर्फ मेरी ये उँगलियां झरे पत्तो सी सूख गई
और कुछ नही हो सका गर्म अँधेरे मे और कुछ
नही हो सका। बुरा नही हुआ.......क्यो तुम्हारी बाँहें सवाल बन
गई थी ? क्यो ?
दूसरो की जीभ का स्वाद हम नही बनें
नही बनें दूसरो की बात चीत।"

अजित दत्त की कविताओं मे एक विशेष प्रकार की दार्शनिकता (सर्वत्र नही) का पुट है। वे प्रेम को यथार्थ के धरातल पर स्वीकार न करके जन्म मरण के परे की वस्तु मानते है अथवा कहा जाय कि जीवन और मृत्यु की संधिवेला में प्रेम प्राप्ति की वाछा करते है। यदि प्रेम प्राप्त करना है तो जन्म-मरण से ऊपर उठना होगा। फिर भी सम्भव है कि प्रेम तत्व न भी प्राप्त हो और उसके लिए निरन्तर भटकना पड़े।

सुभाष मुखोपाध्याय की कविता मे भी प्रेमगत उपलब्धियां है, किन्तु उनका प्रेम सामान्य रीति और सामान्य स्थिति का प्रेम है। (अजितदत्त जैसी किंचित 'रवीन्द्रियन' दार्शनिकता नही है) किन्तु फिर भी विशिष्ठ या सामान्यो में भी अलग तरह से सामान्य और गौरवमय। कुछ सविशेष संदर्भों में ही सुभाष को सौन्दर्य और प्रेमगत उपलब्धियाँ होती है जिनमे कही निस्सन्देह वासना स्तर भी बने ही रहते है चाहे जितने भीने और चाहे जितने सूक्ष्म। किन्तु यह वासनागत अभिव्यक्ति सविशेष है किंचित बौद्धिक, किंचित तटस्थ, सर्वथा काव्योचित।

जीवनानन्ददास मे बंगला की सामयिक कविता अपने सम्पूर्ण गौरव के साथ जीवन्त हो उठी है। वे परम्पराओ से हटकर लिखने मे अत्यन्त सफल रहे है। बुद्धदेव बसु का कथन है कि जीवनानन्द जिद्दी तरीके से अपने आप में समाए हुए है। वे परम्परा के स्वदेश को जगाकर एक ऐसे किन्नरो के देश को

अपनाते हैं, जिसमें वे ही वे हैं। उनकी दुनियां उलझी हुई छायाओं तथा टेढ़े मेढ़े जलाशयों, चूहा, उल्लू, चमकादड़, चांदनी छिटके हुए जगलों मे फुदकते हुए हिरणों, प्रभात तथा अन्धकार बर्फ की तरह ठंडी मत्स्य कन्याओ और महान मीठे समुद्र की दुनिया है। ऐसे नयी चेतना के वाहक जीवनानन्द ने पर्याप्त प्रेम कविताएं लिखी है। 'वनलता सेन' उनकी अत्यन्त प्रसिद्ध प्रेम कविता है जिसने रुचि सम्पन्न लोगों का ध्यान आकर्षित किया है। 'आकाशलीना' कविता मे उनका प्रेमविषयक दृष्टिकोण समझा जा सकता है—

"सुरंजना, वहां पर तुम मत जाओ
उस युवक के साथ बतकही न करो
लौट जाओ हे सुरंजना
नक्षत्र की रुपहली भरी रात मे
लौट आओ इस मैदान में, तरंगों में
लौट आओ मेरे हृदय मे।
दूर से दूर—और दूर
युवक के साथ तुम और न जाओ
उसके साथ कैसी बातें ? उसके साथ ?
आकाश की आड़ में, आकाश में
मिट्टी की तरह हो तुम आज
उसका प्रेम घास होकर उगता है।
सुरंजना।
तुम्हारा हृदय आज घास है
वातास के ऊपर वातास
औ, आकाश के ऊपर आकाश है।

विमलचन्द्र घोष का 'सावित्री' नाम से एक काव्य ग्रन्थ प्रकाशित हुआ उसके 'तिलोत्तमा' नामक सर्ग में प्रेमविषयक दृष्टि का परिचय मिलता है। यद्यपि यह कविता गतसौन्दर्य और प्रेमबोध से पर्याप्त हटकर नहीं लिखी गई है, किन्तु फिर भी उसमें कहीं-कहीं नवीनता है और यथार्थभूमि को भी कवि जहाँ-तहाँ छूता चलता है।

अरुण कुमार सरकार में भी प्रेमकोण बदला है। टूटते हुए वर्तमान जीवन मे अभाव ही अभाव है, यदि कहीं कुछ ऐसा है जिसे संघर्ष के परे भोगा जा सकता है तो वह है प्रेम और मृत्यु—

"इस अगहन में नहीं कोई आनन्द है

कलकत्ते की संध्या धुंए से धूसर मन मे
जो सान्त्वना है तो इतनी कि तुम हो और मृत्यु है ।"

जीवन की विडम्बनाओं से चोट खाया हुआ मनुष्य, वर्तमान युग की सभ्यता और उसकी औपचारिकता से किसी स्तर पर ऊब चुका है। परिणामस्वरूप वह जीवन क्षेत्र मे कुछ नया चाहता है, कुछ परिवर्तित। सौन्दर्य के शहरी मुखोटे उसे अब आकर्षित नही करते। वह कुछ ऐसा चाहता है जो इसी देश की उपज है। जिसमे एक अनगढपन है, जो सहज है स्वाभाविक है, साथ ही एक खुलेपन का बोध। मंगलाचरण चट्टोपाध्याय की यह दृष्टि है किन्तु सम्पूर्ण नवीनता के साथ साथ नही।

बँगला की सामयिक कविता मे यद्यपि प्रेम विषयक दृष्टिकोण व्यतीत प्रेम स्वीकार से पर्याप्त स्तरो पर भिन्न है फिर भी यह कहने और स्वीकार करने मे कोई संकोच नही है कि वह स्वयं को प्रेम और सौन्दर्य कोणो की दृष्टि से व्यतीत बोध से पूर्णतः मुक्त नही कर पाई है। उसमे कही गीलापन और एक स्वरगत बीमार सी सम्पृक्ति है।

इस कविता में प्रकृति चित्रण कोणो मे भी परिवर्तन हुआ है, यह स्वाभाविक भी है। बुद्धदेव बसु ने जीवनानन्द के माध्यम से यह बात किंचित स्पष्ट की है "एक अर्थ में सभी कवि प्रकृति के कवि होते है, पर जीवानानन्द एक विशेष अर्थ मे ही ऐसे हैं। वह प्रकृति मे—भौतिक प्रकृति मे—और उसके कुछ विशेष पहलुओं में डूबे हुए हैं। वे प्रकृति पूजक है पर किसी भी अर्थ में अफलातूनवादी या वेदान्ती नही हैं बल्कि वे प्राक् सभ्यता के युग के एक ऐसे व्यक्ति हैं जो प्रकृति की वस्तुओं से इन्द्रियो की सतह पर प्रेम रखते है और ऐसा वह पूर्णता के चिन्ह प्रतीक या नमूने के रूप मे नही करते बल्कि वह उनसे जो वह है उसी होने के लिए प्रेम करते है। वे केवल देखने से संतुष्ट न रहकर प्रकृति को स्पर्श और गन्ध की उलझी हुई जंगली वृत्तियो के माध्यम से प्राप्त करने की चेष्टा करते है। उन्हे चिडियो के परो की गन्ध से तथा जिस पानी मे चावल अभी धोया गया है, उससे प्रेम है और वे चाहते है कि वे किसी महान श्यामल तृण माता के गहरे मीठे गर्भ से घास के रूप मे उत्पन्न होते। उन्हें अब यहां तक कि किमभूतकिमाकार वस्तु से प्रेम है। पर वे जिस वातावरण को उत्पन्न करते हैं, वह किसी प्रकार अपार्थिव नही है और न उससे किसी प्रकार भय उत्पन्न होता है।"

सृजन में निश्चय ही वर्तमान युग की कटुता और संघर्ष खण्डित व्यक्तित्व एवं संशयगत आस्था ने भी सहयोग किया है। व्यंग्य सृजन एक प्रकार से तल्खी और कटुता को सही दिशा मे अभिव्यक्ति देता है। जीवनानन्ददास मे भी व्यंग्य

पर्याप्त सबल शिल्प और सहजता के साथ प्रकट हुआ है। पुरानी पीढी को उनका हंस-हंस कर उत्तर देना 'आरूढ़ मणिता' कविता मे अभिव्यक्ति पाता है।
कविता में व्यंग्यगत उपलब्धि केवल हिन्दी या बंगला की नयी कविता में ही नही है बल्कि विश्व कविता में इस प्रकार की उपलब्धि है और बहुत है।
बँगला के सभी नये कवियो मे व्यंग्य-सृजनगत उपलब्धि प्राप्त है। विमल चन्द्र घोष, सुकान्त भाट्टाचार्य, सुनील दत्त, सुभाष मुखोपाध्यय, विनयमजुमदार, अरुणकुमार सरकार, जगन्नाथ चक्रर्ती तथा इन जैसे ही दूसरे कवियो ने व्यंग्य सृजन किया है बल्कि कहना चाहिए कि ऐसा करना पड़ा है।
सम्प्रति युग असतोष, अनिश्चय अथवा उलझन का युग है। आक्रोशमय पागलपन इस युग की देन है। हम पहुँचना चाहते हैं पहुँच गये है किन्तु फिर भी नहीं पहुँच पाये हैं, यह पहुँच कर न पहुँचने की स्थिति युग का भटकाव है, निरुद्देश्य भटकना गन्तव्य की अनिश्चितता एवं अस्पष्टता है। व्यक्ति उलझनों से सुलझना चाहता है और सुलझने मे और अधिक उलझता चला जाता है।
बँगला कविता के अत्यन्त सजग और युग बोध की सही तल्खी को (चाहे वह किसी दिशा विशेष में ही क्यों न हो) पकडने वाले कवि जीवनानन्ददास अकेले तो नही किन्तु अकेलों में प्रमुखतम कवि है। उनकी कविताएँ रचना प्रक्रिया, बिम्ब, प्रतीक और शिल्प के कारण सामयिक बँगला कविता मे विशिष्ट स्थान रखती हैं। जीवनानन्ददास की सम्पूर्ण कविता का एक सामूहिक प्रभाव होता है एक प्रमुख संदर्भ होता है जो स्वंय में अनेक संकेत लिए रहता है साथ ही पृथक पृथक पंक्तियाँ भी अनेक अलग संदर्भ संकेत देती है। कविता मे सम्पूर्ण कविता और उसकी पृथक-पृथक पंक्तियो के माध्यम से दुहरी अर्थगत उपलब्धियाँ काव्य पद्धति के स्तर पर दे पाना बड़ा टेढ़ा काम है और इस टेढे काम में बँगला सामयिक कविता में अकेले सफल कवि जीवनानन्ददास हैं। सर्वथा मौलिक, वैज्ञानिक, युग बोध सम्प्रेषण में समर्थ प्रतीक बिम्ब, उपमान और उनमें सर्वत्र एक खरी बौद्धिकता, युग की मनःस्थिति, तीखी किन्तु स्पृहरणीय छटपटाहट, उलझनों के अनेक उलझते हुए स्तर और उन सबसे अनेक उलझे वृत अत्यन्त मँजे मँजाये ढंग से जीवनानन्ददास की कविता में उभरते है। यथार्थ बल्कि अति यथार्थ की कटुता ने व्यक्ति मे तल्खी उत्पन्न करदी है। यह तल्खी व्यक्ति को किन्ही स्तरो पर पलायन करने के लिए विवश करती है तो कही स्वस्थ सुरीले और अभिराम उपकरणों के प्रति एक अवज्ञा-भाव भी जागृत करती है। क्योंकि ये उपकरण जीवन के कटु यथार्थ से कहीं भी मेल नहीं खाते बल्कि एक 'विरोध' खड़ाकर यथार्थ की विडम्बना को और अधिक विद्रूपित कर जाते हैं। जीवनानन्द आत्म केन्द्रित कविता से युग की इस मनःस्थिति को साकार करते है।

हे समय ग्रन्थि, हे सूर्य, हे माघ निशीथ की कोयल
हे स्मृति, हे हिम वायु, मुझे भला क्यो जगाना चाहती हो ?"

जीवनानन्द की कविता मे पाई जाने वाली अनास्था युग-अनास्था है किन्तु जीवनानन्द की 'अनास्था' का एक धवल पक्ष यह भी है कि यह अनास्था आस्थागत प्रेरणाएँ भी देती है। अनास्थाबोध विवशता, असफलता आदि से ही जन्म पाता है। सम्प्रतियुग मे इन उपलब्धियों को प्राप्त करने के लिए सघर्ष की आवश्यकता नही पडती बल्कि इन्हें न पाने के लिए संघर्ष करना पडता है। इस अनास्था गत बोध ने कुछ सामयिक बंगला कवियो मे पलायन वृत्ति को भी उकसाया है। वे समस्याओ का सामना न करके समस्याओ को भुला देना चाहते है, कहना चाहिए कि समस्याओ के न होने का धोखा स्वयं को देना चाहते है। वह अनास्थागत बोध निश्चय ही प्रशंसनीय नही है, किन्तु जीवन मे है इसलिए काव्य मे उसका प्रकाशन सर्वथा अप्रीतिकर भी नही कहा जा सकता। असरण कुमार सरकार 'नींद' नामक कविता मे इस बोध से आक्रान्त है।

नित्य की घटनाओ से टूटते हुए और अनस्तित्व होते हुए जीवन ने व्यक्ति मन में आक्रोश भर दिया है। जब प्रतीक्षारत व्यक्ति को सम्भावित अनागत से साक्षात्कार नही हो पाता तब उसके मन मे अनस्तित्व की गाँठ और अधिक कस जाती है, और यह क्रम निरन्तर झेलते रहने के कारण वह पूर्णत. जीवन विमुख हो उठता है। नरेश गुह की कविताओ में अनेक स्थलो पर जीवन असफलताओं और अनस्तित्व होती हुई (बिना किसी उपलब्धि के) श्वासो का लेखा-जोखा है—

"तो क्या अबकी बार पानी ही में नाम लिखकर
चल देना होगा ? तो मैने फिर क्या पाया ? तो मै क्या हुआ ?

विश्व-युद्धो के पश्चात क्षत-विक्षत मानव और उसका मन:स्थितियो एवं बाह्य जीवन मे चला आता हुआ क्रम। व्यक्ति का बाह्य और आभ्यान्तर दयनीय होता जा रहा है। नगर जीवन से होकर गाव परिवेश तक सर्वत्र निर्धनता, मृत्यु, अभाव और रोगो के चेहरो मे युद्धमुख सहज ही देखा जा सकता है। सामयिक बँगला कवि इस व्यथा से टूट रहा है। जगन्नाथ चक्रवर्ती की कविता इस तथ्य की गवाह है—

"आज भी वही टूटा हुआ बाड़ा, खाली खेत मिट्टी खिसका हुआ
छप्पर और कितने दिन ?
ऐसा मालूम होता है जैसे इस सारे संसार के सारे आँगन में एक निर्दय
कब्रिस्तान बिछा हुआ है।"

बँगला सामयिक कविता मे कुछ कविताएँ जो 'कामरेडियन' कविताएँ कही गई हैं अत्यन्त कलात्मक ढंग की सफल कविताएँ है। सुकान्त भट्टाचार्य की 'छाड़पत्र' तथा इस जैसी ऐसी ही सफल कविताएँ है। 'छाडपत्र' कविता एक ओर प्रतीकात्मक और रूपक के सहारे रूसी क्रान्ति का सौदर्य देख पाती है तो दूसरी ओर इसी प्रतीक से वह नयी चेतना और उसके लिए मर मिटने के क्रतिकारी के संकल्प सौंदर्य का भी उद्घाटन करती है।

सामयिक बँगला कविता पर हिन्दी की अपेक्षा पश्चिमी प्रभाव कही अधिक है। विष्णु दे की कविता पर टी० एस० इलियट तथा एजरा पाउण्ड का प्रभाव स्पष्ट ही देखा जा सकता है। विष्णु दे की कविताएँ शिल्प का नमूना माना जा सकती है। अमलेन्दुदास गुप्त शैल्पिक कोण से विष्णु दे की कविता की श्रेष्ठता स्वीकारते है, किन्तु उसमें हृदय को आन्दोलित कर सकने की क्षमता का न होना मानते हैं। विष्णु दे की कविता पर लगाया हुआ यह आरोप एक प्रकार से विष्णु दे की कविता की विशेषता ही है क्योंकि हृदय को द्रवीभूत करना अथवा हृदय को पिघला देने वाला प्रतिमान व्यतीत युग-बोध की कविता के लिए ही उपयुक्त है।

वैज्ञानिक युग का मानव जब बड़े बड़े यान्त्रिक सृजन अथवा विशालकाय निर्माण के सम्मुख खड़ा होता है। (वे यद्यपि मनुष्य द्वारा ही निर्मित हैं) तो उसमें अनजाने ही हीनता का बोध आने लगता है। यदि रचनाकार इस बोध को प्रकाशन देता हैं तो इस पर 'भृकुटि बलय मुद्रित' होने की आवश्यकता नहीं। इससे तो सामूहिक स्वास्थ्य ही सुधरता है, बल्कि 'हीनबोध' को वाणी देकर वह व्यक्ति को सामान्य (नार्मल) बनाने का महत्वपूर्ण कार्य सम्पादित कर रहा है।

वर्जित टूटे बोध के अतिरिक्त बँगला सामयिक काविता में आस्थागत चेतना भी सँवर रही है—पूरी शक्ति के साथ सम्पूर्ण नया सृजन पेचीदा, घुटन, ऊब, मृत्यु विवशता और अभावों को जीता हुआ उपर्युक्त आस्थागत बोध तक पहुंचने में यात्रित है यह यात्रा कितनी अलंघ्य और पेचीदा है। इसे व्यतीत बोध सम्पादक, समीक्षक सम्प्रति युग बोध को न जीने के कारण नहीं समझ पारहे है

नये बँगला रचनाकार वैज्ञानिकता और तटस्थ रचना प्रक्रिया की ओर बढ़ रहे है अपने सम्पूर्ण दायित्व के साथ। काव्योपकरण के प्रत्येक कोण से बंगला सामयिक कविता बंगला साहित्य की धरऊ उपलब्धियाँ सौंप रही है।

—सुरेन्द्र उपाध्याय

हिन्दी की नई कविता :
उपलब्धि : अपेक्षा

●

जीवन मानों के साथ साहित्यिक प्रतिमान भी परिवर्तित होते रहे हैं, नए प्रश्न-उठाए गए हैं उनके उत्तरों की पीठ पर पुनः नए प्रश्न उठ खड़े हुए हैं अपने आप, प्रश्न कर्त्ता तो निमित्त मात्र रहा है—युगबोध का अस्त्र मात्र। प्रश्न-उत्तर-प्रश्न-क्रम मे कितनी ही 'धुरीहीनता' की 'हीन' धुरियां घिस चुकी हैं। साहित्यकार 'हाशिए पर' न लिख कर हाशिया छोड़ कर लिखने लगे हैं। किसी समय के 'उगते अंकुर' वृक्ष ही नही डाल-छाल तथा पत्र झाड़कर ठूँठ रह गए हैं। 'रोशन हाथो की दस्तकें' स्याह होने लगी है। नयी कविता को जिन गज़, फुट, इंचो से नापा गया है, या नापा जा रहा है, उन्हीं गज़, फुट, इंचो से 'नई कहानी' को भी नापने का आयास किया गया है। सम्पूर्ण जल प्रवाह को एक ही कुलावे से निकालने की दृष्टि अनेकत्व मे एकत्व वाली भारतीय विचारधारा से सहज ही ऐतिहासिक समर्थन पा जाती है, ऋषि आचार्यों को यह सुविधा प्राप्त है।

हर नये आन्दोलन की तरह नयी कविता को भी उतार-चढ़ावों से मार्ग पूर्ण करना पडा है—अच्छे बुरे दिन देखने पड़े हैं, पहाडो की ऐचक-बेंची पगडण्डियो से निकल कर वह समतल भूमि पर आ गई है, जहाँ उसका वेग, उसकी गहराई, उथलापन विस्तार और संकुचन बिना अटकलपच्चियों के मूल्यांकित किया जा सकता है। कतिपय समीक्षक प्रवर अपनी भौंह-गाँठो का संकुचन पूर्णतः नयी कविता के पक्ष मे अभी तक नहीं खोल पाए है किन्तु धीरे-धीरे उनकी जमात में दरार पडने लगी है, यह नई कविता के लिए शुभ लक्षण है, साथ ही समीक्षक प्रवर सम्प्रदाय के लिए भी। कारण इस कोण से वे युग बोध के समानान्तर बने रहेंगे, पिछड़ेंगे नही। यह सब नई कविता की अपनी उपलब्धियो का परिणाम है। अतः नयी कविता ने अपना पृथक् और अलग व्यक्तित्व खड़ा कर लिया है, यह तथ्य स्पष्टि की अपेक्षा नही रखता।

नयी कविता के साहित्य मे आविर्भाव से पूर्व दो-दो विश्व-युद्ध हो चुके हैं, विज्ञान की उन्नति, बढ़ता हुआ जीवन स्तर, मध्य वर्ग की जटिल समस्याएँ, नैतिक मानों का ह्रास, आर्थिक विषमता, यातायात के साधनों एवं व्यापारिक समझौतों द्वारा विश्वराष्ट्रों का परस्पर सम्बन्ध तथा सांस्कृतिक एवं साहित्यिक मान्यताओं

से परिचय एवं प्रभाव इन समस्त उपलब्धियों ने जाने अनजाने विश्व-मानव-मानस को प्रभावित किया है, अतएव उसका युगबोध अपने पूर्ववर्ती सहयात्रियो से जटिल (नितान्त भिन्न प्रकार का) हो गया है। विश्व-साहित्य के इतिहास में कदाचित् यह प्रथम अवसर है जब जागरूक विश्व-मानव युगबोध को वैयक्तिकता के माध्यम से एक ही काव्य पद्धति से सम्प्रेषण दे रहा है। नई कविता छायावादी कविता की तरह विदेशों मे सौ वर्ष पहले विकसित होकर भारतवर्ष मे नही उपजी है।

भगवती बाबू ने अपने सद्य प्रकाशित कविता संग्रह (सद्यता मात्र प्रकाशन मे, कविताओ मे नही) की भूमिका मे गर्वोक्ति की है कि नई कविता लिखना नितान्त आसान है, वे एक साथ पच्चीस-तीस नई कविताएं लिख सकते है। पहाड़ के नीचे आने से पूर्व ऊँट को अपनी ऊँचाई का भ्रम बना ही रहता है, यह उसके हक में अच्छा ही है, अन्यथा 'हीन ग्रन्थि' से ग्रसित हो कर न जाने क्या कर बैठे। बच्चन आदि पिछले खेमे के कवियों ने 'त्रिभंगिमा' तथा 'चार खेमे : चौसठ खूँटे' आदि कविता संग्रहो में नयी कविता की 'तर्ज' पर लिखने का अपनी ओर से भरसक प्रयत्न किया है, किन्तु वे कितनी नई कविता हैं, उनमें कितना नया युगबोध एवं सम्प्रेषण की सद्यता है ?

यह सच है कि नयी कविता के क्षेत्र में कुछ कृतिकार (संबोधन की कैसी विडम्बना है) मात्र 'फैशन' में पड़ कर कविता (अकविता) लिख रहे हैं। वे अच्छा खाना खाने की तरह अच्छा कपड़ा पहनने की तरह ही कविता लिखना समझते हैं, दायित्व और प्रतिभा दोनों का ही उनमे अभाव है फैशनेबुल आलोचक (या फैशन ने ही जिनको आलोचक बना दिया है,) उनके कृतित्व को नयी कविता के कथ्य-सम्प्रेषण बोध से अनुशासित करते है, जिसका परिणाम सामान्य पाठक के मन में नयी कविता के प्रति विरोधी धारणा का सृजन है। पाठक नयी कविता पढ़ते समय पूर्वलब्ध परिणामगत पूर्वाग्रह से ग्रसित हो कर नई कविता का उचित मूल्यांकन नहीं कर पाता, इस कार्य मे ऋषि आचार्यों की समीक्षा दृष्टि उसे निरन्तर मार्गदर्शन करती रहती है। कुछ जागरूक कृतिकारों ने भी कविता-सृजन के दीर्घ काल में पर्याप्त कूडा लिखा है, इस बात को भी हमें स्वीकार कर लेना चाहिए, किन्तु यह उनकी अपरिपक्व एवं उथली उपलब्धियां है, जो उन्ही के व्यक्तित्व पर कालिक अधिक पोतती हैं साथ ही उनका यह कृतित्व नयी कविता का शुभ और स्वस्थ पथ नही है, इसमे ह्रासोन्मुखी जीवन दर्शन को पंगु शिल्प में ढालकर अहंवादी उपब्धि प्रस्तुत करना ही उनका ध्येय रहा है, जो सच्चे यथार्थ का प्रतिनिधित्व नहीं करता। कतिपय समीक्षक प्रवर ऐसे ही अथवा इस जैसे ही कृतित्व की जाँच-पड़ताल करके नई

कविता को खण्डित जीवन दर्शनगत एवं फैशनगत उपलब्धि सिद्ध कर देते हैं। अवसर जो मिलता है, मौके से लाभ उठाना ही चाहिए।

'फैशन' वाली बात किसी समय छायावाद के लिए भी कही जाती थी। 'फैशन' का महत्व कम से कम कोण से तो आँका जा सकता है, वह नवागत 'फैशन' के लिए स्वयं को उदारतापूर्वक समर्पित कर देती है। हमारे ऋषि आचार्यों मे नयी कविता के संदर्भ मे फैशन परक उदारता भी दृष्टिगोचर नही होती।

नयी कविता ने ऋषि आचार्यों के आलोचना ग्रन्थो मे अवर्णित छायावादी कवियो के अन्तस मे सतत प्रवाहित धारणा का खण्डन किया है अथवा यह कहना अधिक समीचीन होगा कि उस सीमा को तोड़ा है, उससे आगे बढ़ी है। छायावादी कवि क्षणों से क्षणो की चूल मिलाकर यानी व्यवस्थित आवेगयुक्त अनुभूति धारा ही काव्य कथ्य बना सके, इस कारण व्यवस्थित अनुभूति धारा से पृथक् कटा हुआ क्षण अनुभूत अपने सम्पूर्णत्व में उनका संवेद्य नही बन सका, बूंद धारा से कट कर भी धारा की इकाई है और स्वय मे महान है यह बात तब उनकी समझ मे न आ सकी। आती भी कैसे। इसका कारण उनका व्यवस्थित धारागत जीवन भी हो सकता है। अनुभूति-आवेग को उन्होने गीतों मे गहा, किन्तु आवेग का आदि और अन्त भी होता है और कभी-कभी अनुभूति आवेग बन ही नही पाती उसका आदि और अन्त एक धुधलके के साथ ही स्पष्ट होकर रह जाता है। इस क्षण-अनुभूति की परती को नये कवि ने तोड़ा है, किन्तु इससे छायावादी अनुभूति-समर्थक ऋषि आचार्यों की भौहो में वही द्विवेदीयुगीन गाँठें उभरी हैं जिनकी कभी उन्होंने कटुतम आलोचना की थी। व्यवस्थित अनुभूति धारा को जीना स्वयं मे महत्त्वपूर्ण बात हो सकती है और है भी। नया कवि भी अपने युग बोध के साथ क्रमत्व में इसे जी रहा है, किन्तु पृथक् खण्डित क्षण सत्य को काव्य स्तर पर गह पाना अपने आप मे कठिन और महत्वपूर्ण दोनों ही है। विस्तार मे से विस्तार के एकल बिन्दु को गह पाना क्षण की सार्थकता को उजागर करना है।

नये कवि ने कविता की पठन-क्रिया को भी क्रान्तिकारी अभिनव आयाम सौंपा है, जिसका योगदान कविता के भविष्य निर्मित काव्यशास्त्र में स्थाई रूप से होगा। नयी कविता "गुरु गृह पढ़न गएऊ रघुराई अल्पकाल........" चौपाई पद्धति से या दोहा, छप्पय, सवैया, गीतिका अथवा रोला, उल्लाला आदि की तरह नही पढी जा सकती। पठन क्रिया के लिए भी सम्प्रति युग बोध अपेक्षित है। नयी कविता ने पूर्ववर्ती काव्य गायन-पठन पद्धति से भिन्नत्व स्पष्ट कर अपनी लय और गति की पृथक परिपार्श्व में स्थापित कर लिया है। इससे भी

धर्मपरायण तथा स्वच्छन्दतावादी अभिरुचि वाले काव्यपाठियों में हलचल हुई है। पठन की सर्वथा नयी दिशा जो छन्द, तुक, लय, अर्थ, उपयुक्त शब्द प्रयुक्ति, विराम, पॉज़ प्रवाह आदि सभी अद्दों पर निर्भर करती है, नयी कविता की अपनी उपलब्धि है। नयी कविता के अनेक कृतिकार यान्त्रिकता अथवा तुक आग्रह का मोह अभी तक दूर नही कर पाए हैं। सर्वेश्वर दयाल, विजयदेव नारायण साही (शाही नही) आदि की पर्याप्त कविताएं उदाहरण स्वरूप देखी जा सकती हैं। भारती के 'सात गीत वर्ष' की पर्याप्त कविताएं इसका अच्छा उदाहरण हो सकती है। यदि नयी कविता में अपनी तुक है भी तो वह भिन्न प्रकार की है, कविता के प्रारम्भ की तुक कविता के अन्त मे मिलती है, सम्पूर्ण कविता एक ही तुक से और वह भी आदि और अन्त में (अनेक तुको से नही) आदि से अन्त तक अनुशासित रहती है।

गत्यात्मकता, गेयता का अभाव, लयहीनता आदि के आरोप सामान्य काव्य-विद्यार्थियों से लेकर ऋषि आचार्यों की मण्डली तक ने नयी कविता पर लगाए हैं किन्तु इस संदर्भ में उन्होंने अपने सम्मुख सदैव ही पद्य को आदर्श रूप में रखा है जिसे भ्रमवश वे कविता समझते रहते है। उसकी गेयता और लय ही उनके लिए लय का प्रतिमान रही है, इस तथ्य पर पृथक् से टिप्पणी देने की आवश्यकता नही कि कविता और पद्य दोनों पृथक् पृथक् काव्य उपलब्धियाँ है। तात्विक रूप में जब हम किसी भी सत्य-उपकरण को स्वीकार करते है, तब उसका अर्थ होता है कि उस तत्त्व उपकरण के अभाव में हमारी इच्छित उपलब्धि अपरिपक्व और खंडित हो जायगी और यदि वह तत्त्व उपकरण अन्यत्र किसी उपलब्धि में दृष्टिगोचर होगा तो वह हमारी इच्छित उपलब्धि के स्वरूप जैसी ही होगी बहुत अंशों में। मैं कहना चाहता हूँ कि लयात्मकता (जिस रूप में अब तक मानी जाती रही है) कविता को तात्त्विक और अनिवार्य उपलब्धि नहीं है। लयात्मकता हमें अन्यत्र प्राप्त हो सकती है, किन्तु वह उपलब्धि कविता-उपलब्धि में गणित नहीं की जा सकती।

"इधर से आया छोटा साहब
इधर से आई बड़ी मेम
सड़क पर किसने जलाई लालटेन।"

इसे कविता स्वीकार किया जा सकता है ? उत्तर नकारात्मक ही होगा किन्तु साथ ही यह कहा जा सकता है कि यह लोकगीत है या उस जैसा है। तब लयात्मकता लोकगीतों की विशेषता हो गई ! यह विशेषता कविता में भी हो

सकती है, किन्तु तात्त्विक उपलब्धि अथवा उपकरण रूप में नहीं, अतिरिक्त सौन्दर्य रूप मे। अतिरिक्त सौन्दर्य न रहने पर भी कविता अकविता नहीं हो जायगी।

पुनश्च, नयी कविता को नितान्त लयहीन कहना उसके साथ अन्याय करना है साथ ही साहित्यिक अपराध भी। नयी कविता मे लय है किन्तु वह उसके भावबोध एवं शिल्प गठन से नियन्त्रित है, उसे ग्रहण करने के लिए पाठक को अतिरिक्त जागरूक होना पड़ेगा, कारण नयी कविता की लय पूर्ववर्ती कविता के 'लय पैटर्न' पर आधारित या अनुमानित नही है। इस लय को 'आन्तरिक लय' कहना अधिक बुद्धिसंगत होगा।

जगदीश गुप्त की तरह "अर्थ की लय" कहना कबीर की उलटबासियों मे बात करना है। नयी कविता की लय उसकी अन्तर प्रेरित स्थितियो से प्रवहमान होती है, कही वह पूर्ण विराम ग्रहण करती है, कही हल्का सा गतिरोध, कही पॉज और कही प्रवाह की तीव्रता। नयी कविता मे तुक की गति अधिक अपेक्षित नही है, वह अनुभूति की गति के कान उमेठ देती है।

अतिवैयक्तिता ने नयी कविता को जहाँ जटिल दुरूह बनाया है, वहाँ वैविध्य और उतर परिप्रेक्ष्यो मे महती और प्रचुर उपलब्धि भी प्रदान की है। उपेक्षित सन्दर्भों को काव्य-विषय बनाना, नये बिम्ब, सर्वथा नए प्रतीक, नये छन्द, नया भाव-बोध सम्प्रेषित करना अतिवैयक्तिता द्वारा ही शक्य हो सका है। उसके अभाव में नयी कविता इतने कम अन्तराल मे पुष्कल, प्रौढ़ उपलब्धि के साथ हमारे सम्मुख नहीं आ सकती थी।

बिम्ब विधान नयी कविता की अभूतपूर्व उपलब्धि है। छायावादी कविता को चित्र-बोझिल कविता कहा जाता रहा है। चित्र और बिम्ब में स्पष्ट अन्तर है, "नयी कबिता का मूल्यांकन" करते समय तथा कथित लेखको द्वारा भ्रमवश दोनो को एक समझ लिया गया है। प्रत्येक बिम्ब एक परिसीमा तक एक चित्र हो सकता है, (आवश्यकता नही कि चित्र हो ही) किन्तु प्रत्येक चित्र बिम्ब नहीं होता। बिम्ब रूपात्मक से लेकर अरूपात्मक सन्दर्भ-संकेत एक या अनेक छोड़ता है। चित्र इस स्वभाव के कार्य सम्पादन नहीकर सकता, साथ ही चित्र अरूप नही हो सकता। चित्र का समाहार बिम्ब में हो सकता है, तथाकथित आलोचना पुस्तकों में (यहाँ भी सम्बोधन की विडम्बना है) जो बिम्बपरक कविताएं समुद्धृत की गई है, उनकी व्याख्या तक भ्रष्ट की गई है। अज्ञेय के कविता-संग्रह "अरी ओ करुणा प्रभामय" से "चिड़िया की कहानी" शीर्षक कविता की निम्न पंक्तियों—"उड़ गई चिड़िया काँपी, फिर थिर हो गई पाती"—की

व्याख्या प्रस्तुत है–"पत्ती पर बैठी चिडिया उडती है, इसलिये पत्ती काँपती है और थोड़ी देर मे वापिस स्थिर हो जाती है।" यह सुना और देखा गया है कि चिड़िया के टहनी या शाख पर बैठकर उड जाने जाने से लचक खाने के कारण टहनी काँप जाती है। चिड़िया को पत्ती पर बैठती बतलाकर व्याख्या-कार ने मूल कविता पर एक और कविता करदी है! "कनुप्रिया" को नयी कविता की प्रतिनिधि कृति मानकर उसकी उपलब्धियों का विवेचन किया गया है जबकि "कनुप्रिया" कविता तो दूर परिष्कृत गद्यकाव्य भी नही है। ऐसे कवियो को भी लेखक ने प्रतिनिधि नये कवियो मे सम्मिलित कर लिया है जिनके तीन-तीन संग्रह प्रकाशित हो चुके है फिर भी उसका कोई व्यक्तित्व सामने नही पाया है, साथ ही एक पुरानी कवयत्री को नयी कवयत्री मान लिया गया है, ये कुछ नमूने है जिनके आधार पर अनुमान लगया जा सकता है कि प्राध्यापक वर्ग मे नयी कविता किस रूप मे समझी गई है (या समझी जा रही है)।

बिम्ब को काव्योपलब्धि का आत्यन्तिक मान स्वीकार करने वालों में हजरत ऐजरा पाउन्ड का नाम बहुत चर्चित रहा है, जिनकी आस्था थी—"It is better to present one image in a life time than to produce Voluminous works."

बिम्ब में ताजगी, सघनता एवम् उसका उत्प्रेरक होना आवश्यक है, बिम्ब उपमा, प्रतीक, वाक्य, शब्द-अभिव्यक्ति- वैचित्र्य आदि से निर्मित होता है (हो सकता है)। सादृश्य-मूलक अलंकारों में रूपक बिम्ब के सर्वाधिक समीप पड़ता है, किन्तु बिम्ब क्षेत्र रूपक से अधिक विस्तृत है। पाश्चात्य काव्य-विचारक सी. डो. ल्यूइस ने बिम्ब में अनुभूति का घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित कर दिया है। बिम्ब एक सीमा तक अवश्य रूप निर्मित करता है, क्रमशः अनुभूति से सम्पृक्ति प्राप्त कर उससे एक तान हो जाता है। रूपक मे प्रस्तुत अप्रस्तुत का बोध अपनी सम्पूर्ण अर्थ-वत्ता सहित अनुभूति के अन्तिम छोर तक या अभि-व्यक्ति के अन्तिम बिन्दु तक बना रहता है। बिम्ब प्रस्तुत को क्रमशः विस्मृत करता हुआ अन्ततोगत्वा अनुभूति पिण्ड हो जाता है।

कविता में बिम्ब विषयक यह धारणा रखना कि वह स्वयं में ही अपना एक इष्ट है (जैसा कि कुछ कृतिकारों की धारणा है) नितान्त भूल होगी। बिम्ब स्वयम् को बिम्बित करने मात्र का लक्ष्य लेकर नही चलता, वह सूक्ष्म जटिल अनुभूति प्रत्यय को ग्राह्य बनाने के लिये सहायक होकर आता है। बिम्ब को साध्य समझने वालों को सी. डो. ल्यूइस द्वारा अपने महत्वपूर्ण ग्रंथ—"The Poetic Image में दिया हुआ निम्नलिखित वक्तव्य सत्परामर्श रूप में ग्रहण

कर लेना चाहिये—Image does not image itse'f." अपितु, वह तो किसी बोध-अभिव्यक्ति का निमित्त मात्र है।

नयी कविता में विभिन्न प्रकार के बिम्बों के साथ शब्द बिम्ब तथा बिम्ब-प्रतीकों का विशेष महत्व है, यह नयी कविता की गौरवमयी उपलब्धि है जो पूर्ववर्ती काव्य धाराओं में इस वैविध्य के साथ उद्भूत नही हुई। 'अभी बिलकुल अभी' कविता संग्रह के कवि केदारनाथ सिंह का आग्रह बिम्ब को ही कविता-निकष मान लेने का है—"एक आधुनिक कवि की श्रेष्ठता की परीक्षा उसके द्वारा आविष्कृत बिम्बो के आधार पर ही की जा सकती है....मै बिम्ब निर्माण की प्रक्रिया पर इसलिए जोर दे रहा हूँ कि आज काव्य के मूल्याकन का प्रतिमान लगभग वही मान लिया गया"[1] यह बिम्ब के प्रति आत्यन्तिक मोह है। 'धूप के धान' कविता संग्रह की सशक्त कविता 'ढाकवनी' मे वायु उद्वेलित चटुल लहरियो का मदिर बिम्ब गिरिजाकुमार माथुर की बिम्ब पकड़ के प्रति पाठक को आस्थावान बनाता है—

> गंध घोडे पर चढ़ी
> दुलकी चली आती हवाएं
> टाप हल्के पड़े जल मे
> गोल लहरे उछल आए।

शमशेर के कविता संग्रह "कुछ और कविताएँ" (सम एनअदर पोइमस वाले अंग्रेजी स्टाइल मे) तथा अन्य कविताएँ कत्थई गुलाब थामे हुए है, 'गीली मुलायम लटें' 'पूरा आसमान का आसमान' 'राग' आदि मे बिम्बो की सफल अभिव्यक्ति हुई है। कदाचित खण्डित बिम्ब भी शमशेर की कविता मे अत्यधिक है, ल्यूइस खण्डित बिम्बों को शुद्ध कविता के लिए साधक नहीं बाधक मानता है, कारण काव्यात्मक तर्क संगति का केन्द्रीय सूत्र वह नही बन पाता। खण्डित बिम्बो की पुष्कल उपलब्धि प्रयोगवादी, कविता मे सम्प्राप्त है। प्रयोगवादी कविता का विकास एकबारगी रुक गया, इसके अनेक कारणो मे से अति प्रमुख कारण उसकी खण्डित बिम्ब उपलब्धि है' जिससे किसी स्तर पर कविता जटिल और दुर्बोध हो जाती है।

जैसा कि निवेदन कर चुका हूँ कि नयी कविता का बिम्ब-प्रतीक उसकी अपनी उपलब्धि है, मात्र शिल्प विषयक ही नही रचना-प्रक्रिया गत भी। बर्टेण्ड रसेल ने An enquiry into meaning and truth के पृष्ठ २ पर लिखा है "Images infect as symbols, just as words do,, लेकिन प्रतीक और

---

१ तीसरा सप्तक—पृष्ठ १८३

बिम्ब में अन्तर है, वही अन्तर जो चित्र और बिम्ब में है। बिम्ब वस्तु का प्रस्तुतीकरण है, जिसका रचना-प्रक्रिया से गहरा संबंध है, प्रतीक वस्तु विचार का प्रतिनिधि है। प्रतीक बिम्ब अज्ञेय की कविता में आशानुकूल उपलब्ध है, चन्द्रमा के लिए प्रतीक बिम्ब इसी परिप्रेक्ष्य की उपलब्धि माना जायगा। यह बात दूसरी है कि उसमें शिल्प-कसाव शिथिल है—

मूत्र सिंचित मृत्तिका के वृत्त में
तीन टाँगों पर खड़ा
नतग्रीव धैर्य धन गदहा

"कौन से संदर्भ दे दूँ" कविता संग्रह की 'बैशाख शाम' शीर्षक कविता में चन्द्रमा के लिए प्रतीक बिम्ब किंचित् अधिक सुगढ़ बन पड़ा है—

'निःशब्द
रात ने—
फूल बेले में
भर कर दूध
चुपके से
सिरहाने रख दिया"

शब्द-बिम्ब उपलब्धि में कृतिकारों की उपयुक्त शब्द-प्रयुक्ति की जागरूकता का परिचय तो मिलता ही है साथ ही शिल्प-गठन की महती उपलब्धि उनमें अनायास प्राप्त हो जाती है। निम्नोद्धृत कविता में 'बस' शब्द एक विस्तृत बिम्ब को ओढ़े हुए है, यदि इस शब्द—बिम्ब के स्थान पर कोई दूसरा शब्द रख दिया जाय अथवा उस शब्द को निष्कासित कर दिया जाय तो संपूर्ण बिम्ब बिखर जायेगा—

पतीली में उसीजी
गंध बथुआ
बस गई घर : द्वार
गलियारे तलक—'

नयी कविता को प्रयोगवादी कविता समझने-समझाने का भ्रम-प्रयत्न अभी तक चल रहा है, उसकी उपलब्धियाँ प्रयोगवादी कविता की उपलब्धियाँ मानी जाकर एकांगी और प्रतिवादी आलोचना का विषय बन रही हैं—'कठिनाई यह है कि पाठकों को नई कविता में न रस मिलता है, न आनन्द, न उसमें उन्हें सौन्दर्य के दर्शन होते हैं। क्या यह कहना उचित होगा कि प्रयोगवादी कविता में मूलतः जीवन की अस्वीकृति है, उसके रचयिताओं के लिए जीवन निस्सार है, इसलिए

निरुद्देश्य होकर वे रोते सिसकते हैं, उन्हे सुन्दर की अपेक्षा वीभत्स, रस की अपेक्षा नीरसता, आनन्द की अपेक्षा घुटन तथा बोध-अनुबोध की अपेक्षा अबोध और दुर्बोध शब्दजाल से ही अधिक प्रेम है, यदि ऐसा न होता तो नीरसता, कुंठा, अहंवाद, लयहीन बेतुकी रचनाओ की इतनी वकालत करने की जरूरत न पडती"१ । रामविलास जी के इस गहन, चिन्तन खण्ड से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि वे युगबोध से पिछड़े साहित्यिक मानदण्डो से ही नयी कविता का 'नाप' ले रहे हैं।

प्रयोगवाद और नयी कविता को एक समझने की भूल तो उन्होने भी की ही है। नरेन्द्र शर्मा द्वारा लगाये गये रूस-पक्षीय नारे उन्हें कविता प्रतीत होते है या फिर उपदेशक की टोपी लगाकर दूसरो को भाषण देने के रोग से पीड़ित, 'पंछी जाल अहेरी' कविता सग्रह के कवि श्री अनन्त का निम्न वक्तव्य उन्हे श्रेष्ठ काव्य उपलब्धि प्रतीत होगा—

> आ घुटन की खोह से बाहर निकल
> झील के थिर नीर पर कुमकुम धरा
> देख कितनी छविमयी है दूब वसना
> किस कदर है रूप गंधा यह धरा।

'दूब वसना रूप गधा धरा' का महत्वपूर्ण उपदेश अनन्त जी की मौलिक उपलब्धि है, नयी कविता का कोई कवि ऐसा करने मे सफल नही हो पाया है ?

नयी कविता की प्रारम्भिक रचनाओ में विकृत कुंठा, यौन वर्जनाएं अहं और वक्तव्यो से साक्षात्कार होता है, इस प्रकार की उपलब्धियाँ प्रथमतः उसकी प्रारम्भिक उपलब्धियाँ हैं, जिनको आधार बनाकर उसका सम्पूर्ण स्वरूप विश्लेषण नहीं किया जा सकता, कारण—ये उपलब्धियाँ उसके परिपक्व स्वरूप का बोध कराने में असमर्थ हैं द्वितीयतः उपयुंक्त प्रवृत्तियों को साहित्यिक कथ्य बनाने मे नये कवि की अनुभूति-ईमानदारी पर संदेह करना अनुचित होगा, नये कवि की अनुभूति-ईमानदारी को स्वीकार करने मे समीक्षको की हेटी नही होगी। नयी कविता ने स्वयं को छायावादी कविता की भाँति अनावश्यक रूप से सजाया नही है और न ही प्रगतिवादी कविता की तरह स्वयं को 'खुरदरा' बनाया है। उसका शिल्पबोध अनुभूत का सहगामी है।

मानव के प्रति गहरी आदर भावना नयी कविता का प्रमुख दर्शन आयाम है। प्रथम बार कविता क्षेत्र मे मानव के 'भीतर' को सर्वांगतः वाणी देने का स्तुत्य प्रयास नयी कविता ने किया है। लक्ष्मीकान्त वर्मा मानव के भीतर स्थित मानव को 'लघुमानव' की सत्ता देते हैं। यह इबारत छायावादी आलोचनात्मक शब्दावली 'स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह' के आधार पर गढी गई है, 'लघु

१ आस्था और सौन्दर्य पृ० २१३-११७

शब्द' हीनता के अर्थ में रूढ है अतः इस संज्ञा में छायावादी उपयुक्त शब्दावली जैसी गरिमा भी नहीं है। अधिक बुद्धिसंगत होगा, यदि इसको 'आन्तरिक मानव' कहा जाय तो।

नयी कविता ने धर्म, राजनीति, द्विवेदीयुगीन नैतिकता, उपदेश-सेंसर से मुक्त होकर प्रथम बार साहित्यक अनुभूति-सच्चाई से मानवीय कुंठा, अहं, वैयक्तिक्ता यौन वर्जना आदि को मानव का आन्तरिक सर्वाधिक सत्य होने के कारण काव्य संवेद्य बनाया है।

नयी कविता मे नये के प्रति आत्यंतिक मोह होने के कारण कही-कही कविता वैचित्र्य और चमत्कार की परिधि मे सिमटकर रह गई है। इस प्रकार की उपलब्धि नयी कविता की मात्रात्मक रूप में अति न्यून उपलब्धि है। वैचित्र्य आदि मदारीपन गम्भीर उपलब्धि रूप में समादृत न होने के कारण शनैः शनै. कूच कर रहा है।

विषय-वैविध्य के साथ नयी कविता में विषयों की एकरसता भी पर्याप्त मात्रा में देखी जा सकती है। विषयगत एकरसता के कारण कहीं-कहीं शिल्प में भी एकरसता आ जाती है जिससे कवियों के पृथक अस्तित्व का भास कम हो पाता है, बिना कृतिकार के नाम के कविता के शिल्प से अनुमान लगाना कठिन हो जाता है कि किस कृतिकार की रचना है, किन्तु गत दो तीन वर्ष की उपलब्धियाँ सिद्ध कर रही हैं कि कृतिकारों का, शिल्प और बोध मे अपना पृथक् व्यक्तित्व उभर रहा है।

सूर्य, धूप, रात, शाम, नीम (उपमान आदि के रूप में) बसंत आदि विषय लगभग सभी कवियों के वर्ण्य रहे हैं। 'धूप' और 'शाम' पर सर्वाधिक कविताएं लिखी गई हैं। भारतीके 'सात गीत वर्ष' में 'शाम : दो मनः स्थितियाँ' तथा शाम : एक थकी लडकी' विषय एकरसता के सन्दर्भ में देखी जा सकती है। 'शाम' स्वयं मे एकाकी बोध का प्रतीक बिम्ब है, भारती की निम्नोद्धृत कविता में यह बोध विद्यमान है।

> शाम—
> एक सफर में थकी हुई लडकी-सी
> आई और मेरे पास बैठ गई।

गिरिजा कुमार माथुर के कविता संग्रह में भी 'शाम' पर अनेक कविताएं मिल जायेंगी, 'धूप के धन' और 'शिलापंख चमकीले' में उपर्युक्त सत्य खोजा जा सकता है। 'धूप के धन' में 'शाम की धूप' तथा 'सांयकाल' कविताएँ इस परिप्रेक्ष्य की ही उपलब्धि हैं। केदारनाथ सिंह की 'शामें बेच दी है', सर्वेश्वर दयाल की 'सुबह से शाम तक', अज्ञेय के कविता संग्रह 'भग्नदूत' से लेकर 'आँगन के पार द्वार' तक में शाम पर अनेक कविताएं संकलित है, साथ ही धूप और बसंत पर भी। 'शाम' पर कदाचित सर्वाधिक कविताएँ शमशेर ने लिखी हैं। जिस प्रकार 'शाम' युग बोध के एकाकी संवेदन का बिम्ब प्रतीक

है, उसी प्रकार सूर्य नयी चेतना का, नीम जीवन की कड़वाहट, रूखापन, तिक्तता आदि का प्रतीक रूप है, 'रात' टूटते निराश व्यक्तित्व और आस्था का प्रतीक बनकर अभिव्यक्ति पाती रही है। 'धूप' भी नयी चेतना की प्रतीक प्रतिनिधि है साथ ही विम्बात्मक अभिव्यक्तियो के अधिक अनुकूल भी। 'धूप' का बिम्बमय प्रस्तुतीकरण नयी कविता की सोधी और तरल देन है।

नयी कविता मे व्यंग पर्याप्त मुखर हुआ है, पूर्ववर्ती काव्यधाराओं से तुलनात्मक रूप मे इस वैभव का मात्रात्मक और गुणात्मक अन्तर स्पष्ट है। जटिल जीवन की तिक्तता ने नयी कविता के लगभग प्रत्येक कवि को व्यंग करने के लिये बाध्य कर दिया है। युग की कडवाहट और आक्रोश को वाणी देने के लिये व्यंग पद्धति ने नयी कविता को शक्तिशाली बनाया है। व्यंग और वक्तव्य मे एक बहुत भीनो दीवार होती है। कृतिकार व्यंग की 'मसीहा' होने से बचाये रहे, अन्यथा व्यंग वक्तव्य बन जाय ा।

नये कवि ने कविता को मनोरंजन का साधन नही माना है, यही कारण है कि नयी कविता मे बौद्धिकता का पर्याप्त समावेश हो गया है। कही-कही अत्यधिक बौद्धिकता होने के कारण नयी कविता गद्यात्मक भी हो जाती है, यह उसकी प्रशंसनीय उपलब्धि नही मानी जा सकती। कवि को संतुलन रखना आवश्यक है, इस कोण के अभाव मे तथाकथित कृतिकारो को नयी कविता के नाम पर गद्य लिखने का शुभपर्व अनायास ही प्राप्त हो जाता है और कविता में नीरसता, दुरुहता और खुरदरापन बिना प्रयत्न किये ही आ जाता है। अतिविचारोत्तेजना भी कविता को गद्यपरक बना देती है। अतिवैयक्तिक प्रतीकों को स्वीकार करने के कारण भी कविता अतिरिक्त रूप से बोझिल हो जाती है।

युग-बोध के बदलते हुए स्तर अपने अनुकूल भाषा प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं अतः संवेदन स्तर मे क्रान्ति होने पर भाषा को भी करवट बदलनी पडती है। नयी कवि के सम्मुख भी भाषा की प्रबल समस्या है। 'तीसरा सप्तक' सम्पादक ने नयी कविता की 'नयी भाषा' की समस्या को हृदयंगम किया है—"नयी कविता की प्रयोग-शीलता पहला आयाम भाषा से सम्बन्ध रखता है, निःसंदेह जिसे अब नयी कविता की संज्ञा दी जाती है, वह भाषा प्रयोगशीलता को 'वाद' की सीमा तक नही ले गई है—बल्कि ऐसा करने को अनुचित भी मानती रही है ··· प्रत्येक शब्द का प्रत्येक सयर्थ उपभोक्ता उसे नया संस्कार देता है·······नये कवि की उपलब्धि और देन की कसौटी इसी आधार पर होनी चाहिये, चिन्होंने शब्द को कुछ नहीं दिया है, वे लोक पीटने वाले से अधिक कुछ नही है, भले ही जो लीक वह (यहां 'वे' शब्द होना चाहिए था) पीट रहे है, वह अधिक पुरानी न हो।" शब्द को नये 'संस्कार' तथा नये

'संदर्भ' सद्यता के साथ देने मे कृतिकार को प्रतिभा की परख हो जाती है। गिरिजा कुमार माथुर, केदारनाथ सिंह, स्वय अज्ञय, शमशेर आदि इस परिपार्श्व में कार्य कर रहे हैं। 'शब्द' नया देना स्वयं मे एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है जिसका समादर होना ही चाहिए। भाषा विकास मे इसकी महत्वपूर्ण भूमिका रही है। किन्तु शब्द को नया संस्कार देने को ही नये कवि की उपलब्धि कसौटी मान ली जाय, ऐसा सोचना भारी भूल होगी। शब्द को 'नया संस्कार देने से कही अधिक महत्वपूर्ण है कविता को नये 'शब्द' देना इस तथ्य की उपेक्षा सप्तक-सम्पादक कदाचित् इसलिये कर गया है कि उसने अपने कविता सग्रह 'आगन के पार द्वार' मे नये शब्द न देकर मात्र 'बाण भट्ट की आत्मकथा' की शब्दावली का ही पिष्टपेषण किया है।

नयी कविता की भाषा को नये शब्द देने का महत्वपूर्ण कार्य गिरिजाकुमार माथुर ने किया है, किन्तु 'शिला पंख चमकीले' के परिशिष्ट में बीस पच्चीस शब्दों की तालिका प्रस्तुत करके, जिसमे अधिकांश शब्द ऐसे है जिनका सरकार की परिभाषिक शब्द-निर्मात्री समिति ने निर्माण किया है और जिनकी डा. रामविलास शर्मा ने आलोचना की है; उनके आधार पर स्वयं को नयी शब्द प्रयुक्ति के लिए जागरूक घोषित करना अधिक शोभनीय नही है। नयी कविता भाषा के ऐसे बिन्दु पर आकार खड़ी हुई है जहाँ से कई मार्ग फटते है। शमशेर 'कुछ और कविताएं' की भूमिका में भाषा के हिन्दी-उर्दू मिश्रित स्वरूप पर बल देते है। उर्दू मिश्रित हिन्दी नयी कविता की भाषा स्वीकार नही की जा सकती, वह हमारे जीवन-समीप बोध को सम्प्रेषण देने में समर्थ नही हो सकती। कुछ कवि अंग्रेजी आदि के शब्दों को नयी कविता की भाषा में प्रयुक्त कर कहीं सन्तोष और अभिमान का अनुभव करते है कि वे कदाचित 'भाषा' को नयी दिशा दे रहे हैं। उनके सन्तोष अनुभव करने के इस व्यक्तिगत अधिकार को कौन छीन सकता है।

जीवन-समीप संवेदन को सम्प्रेषण देने के लिए जीवन-समीप भाषा को ही स्वीकार करना पड़ेगा। हमारे जीवन में हमारी ही भूमि की उपज इतने शब्द पल रहे हैं कि यदि उनकी समर्थ हाथों से पोषण मिले, सम्यक् दाय प्राप्त हो तो हमें विदेशी भाषा का शब्द-ऋण वहन न करना पड़े।

नयी कविता के अनेक रचनाकार शब्दों का अपव्यय करने में सिद्धहस्त हैं, इससे न तो कविता का ही कुछ भला होता है और न ही भाषा का। कविता में उपयुक्त शब्द-प्रयुक्ति का विशेष महत्व है, रेमी दे गूरमाँ ने भी उपयुक्त शब्द-प्रयोग पर अत्यधिक बल दिया है। उपयुक्त और लयान्वित भाषा में काव्यवस्तु का सीधा बिम्बात्मक सम्प्रेषण कवि-कुशलता को द्योतक स्वीकार किया जाता रहा है।

शब्दों का परम्परा निहित छिलका उतार कर उसे सद्यता से भावित करने की भा आवश्यकता है, उसे नये सन्दर्भ और नये मान सौंपने पड़ेंगे। भारती ने इस ओर ध्यान दिया है, उसने नये शब्द दिये हैं, किन्तु शब्दों का अपव्यय भी उसने किया है। कुछ पुराने शब्दों के प्रति उसका मोह ज्यों का त्यों बना हुआ है, 'सात गीत वर्ष' की अधिकांश कविताओ में 'जादू' शब्द का प्रयोग हुआ है जो नितान्त घिसा-पिटा पुराना शब्द है, बिल्कुल खोटा; आधुनिक युग-बोध-सम्प्रेषण में सर्वथा असमर्थ।

कुछ कवि शब्द प्रयोग करने के लिए बोध योजना करते है, इससे नयी कविता की भाषा-समस्या सुलझेगी नही, अपितु उलझने की ही अधिक सम्भावना है। शब्द तो साधन है, उन्हें साध्य स्वीकार करना ,कविता-क्षेत्र मे अपराध ही है। शब्दो को नई अर्थवत्ता, यथार्थ की धूल मे से शब्द-मोतियो को खोज निकालना, उपयुक्त अवसर पर, कवि की रचनात्मक प्रतिभा और परख पर आधारित है।

नयी कविता की पूर्ववर्ती धाराओं ने अभी तक सच्चे यथार्थ को वाणी नहीं दी थी। (साम्यवादी आलोचको का कथन है कि यथार्थ का दीदार प्रगतिवादी कृतिकार को ही हासिल हुआ है) प्रगतिवाद ने यथार्थ को कथ्य बनाने का प्रयत्न किया था, किन्तु केवल उतने ही यथार्थ को जो उसके बाद का हित साधक हो सकता था, उसकी यथार्थ-अभिव्यक्ति अधिक खुरदरी और वादाश्रित थी। नयी कविता ने यथार्थ ग्रहण करने में ऐसे किसी आग्रह को ध्यान मे नही रखा। नयी कविता मे वर्णित यथार्थ अधिक सजीव, अधिक उदात्त अधिक काव्योपलब्धिपरक है।

नयी कविता ने अपनी उपलब्धियों से हिन्दी साहित्य को नए छंद, नयी भाषा, नया शिल्प, नया काव्य-शास्त्र, नया बोध, बिम्ब एवं रचना-प्रक्रिया-गत आयाम दिए है। प्रयोगवादो ने अपने 'वादत्व' छोड़कर स्वयं को नयी कविता को समर्पित कर नयी कविताओं की उपलब्धियों को सँवारा ही है।

(सुरेन्द्र उपाध्याय)

●●●

उर्दू की नयी कविता

●

चूंकि यह लेख उर्दू की नयी कविता के विषय मे है, इसलिए मैं सिर्फ नयी कविता और नए कवियो के विषय मे ही बात करूंगा। सन् १८५७ की हार के बाद, जब भारत मे राष्ट्रीय संघर्ष का युग आरम्भ हुआ, तो एक नयी कविता पैदा हुई। यह कविता, मीर और गालिब की कविता से काफी अलग है। और हाली से कैफी आज़मी तक फैली हुई है। यह राष्ट्रीय संघर्ष की कविता है। जैसे जैसे हमारे राष्ट्रीय आन्दोलन का रूप बदलता गया, वैसेवैसे ही इस कविता

का रूप भी बदलता रहा है। परन्तु इसका बुनियादी ढाँचा नहीं बदला। हाली, इकबाल, चकबस्त, सुरूर, जहाँनाबादी, दुर्गासहाय बिस्मिल, व सरदार जाफरी कौम की अलग-अलग परिभाषा जरूर करते है, परन्तु पुकारते हैं कौम को ही। इसीलिए मैं इस कविता को एक ही सिलसिले की कडी मानता हू। सन् १९३० में जब पूर्ण स्वराज्य का नारा लगाया गया, तो सन् १९३६ मे साहित्य में प्रगतिशील आदोलन संगठित रूप से आरम्भ हुआ। यानी बुनियादी तौर पर यह राष्ट्रीय कविता का युग था।

सन् १९३६ के साहित्यिक विद्रोह ने दो रूप धारण किए। एक मार्क्सवादी बगावत हुई। इस विद्रोह ने व्यक्ति को नही देखा, केवल समाज को देखा और उसी को इकाई माना। इस विद्रोह के फलस्वरूप बहुत प्राणवान और सशक्त साहित्य पैदा हुआ, किन्तु वह एकतरफा साहित्य भी है। इस प्रगतिशील साहित्य में व्यक्ति नजर नही आता, इसीलिए समाज की तस्वीर भी बहुत साफ दिखाई नही देती है। दूसरी बगावत मीराजी और राशिद आदि ने की। इस कविता ने समाज की उपेक्षा कर केवल व्यक्ति को देखा और उसे ही इकाई ही माना। केवल सेक्स को ओढ़ना-बिछौना बनाकर धर्म और नैतिकता पर हमला किया। चूकि यह कविता समाज से बिलकुल कटी हुई थी, इसलिए यह व्यक्ति को भी नहीं समझ पाई। व्यक्ति तो समाज के संदर्भ मे ही समझा जा सकता है।

लेकिन जब देश आजाद हुआ, तो पूरा वातावरण ही बदल गया। और अब जो नयी कविता पैदा हुई, वह मार्क्सवादी प्रगतिशील कविता से भी जरा अलग है और मीराजी को शायरी से भी। यह नयी कविता व्यक्ति और समाज के सम्बन्ध की कविता है। इसमें जिन्दगी को इकाई माना है। इस जिन्दगी में व्यक्ति और समाज दोनों साझीदार हैं। आज का नया कवि टॉपिकल (Topical) कवितायें नहीं लिख रहा है। अर्थात् राजनीति अब वस्त्र न रहकर शरीर का एक अंग बन गई है। वस्त्र के देखने वाले उसे नहीं देख पा रहे हैं। और आज का कवि उस अकेलेपन और सन्नाटे को समझने का प्रयत्न कर रहा है, जिसने औद्योगिक प्रगति के साथ आकर उसे हर तरफ से जकड़ लिया है। अब उसकी आवाज भी ऊँची नही है। क्योंकि अब वह पूरी कौम से बात नहीं कर रहा है, व्यक्ति-व्यक्ति को सम्बोधित कर रहा है। इसीलिए उर्दू की नयी कविता का संगीत भी बिलकुल बदल गया है, और शब्दावली भी। किसी भीड़ से बात करने के लिए तो गूँजदार शब्दों की आवश्यकता होती है, किन्तु किसी व्यक्ति से बात करते समय बजते और खनकते शब्दों का प्रयोग नहीं किया जाता।

संगीत और शब्दावली के साथ-साथ इस नयी कविता का लैण्डस्केप (Land Scape) भी बदल गया है। अब फाँसियाँ नही है कि कोई साहिर यह कहे :

उफुक़[1] से ताव उफुक फाँसियों के झूले हैं।

और न अब वे कैदखाने ही हैं, जिनमें बैठकर जाफरी को यह कहना पड़े :

चावलों के चेहरों पर
मुफलिसी बरसती है।

अब वह सहरा[2] भी नहीं है जो घर छोड़कर मिलता है। अब तो वीराने शहरों तक आते हैं। अब दीवारो के जंगल उग आये है। आदमी अपने शहर मे भी अजनबी है और अपने घर मे मेहमान बना हुआ है। शहरों का ज़िक्र अब भी होता है; परन्तु अब शहर बदल गये है। यह वह शहर नही है, जिसका नाम दिल्ली था और मीर का दिल बन गया था—कि दिल उजड़ता था, तो मीर दिल्ली को याद कर लिया करते थे :

दिल की वीरानी का क्या मज़कूर[3] हो
ये नगर सौ मर्तबा लूटा गया।

अब तो शहर ऐसे है कि दिल उजड़ता देखते हैं, तो आँखें फेर लेते हैं और अगर आँखें चार हो भी जाती हैं तो ढिठाई से मुस्कराने लगते है। नयी कविता इसी दर्द, इसी तनहाई और इसी सन्नाटे की कविता है। राष्ट्रीय कविता का कवि, काल कोठरी में भी अकेला नही था। आज का कवि अपने घर मे भी अकेला है। इसलिए आज की कविता दरवाजो, दरीचों वीरान गलियो, अजनबी सडको और बेदर्द शहरो की कविता है।

चूकि यह लैण्डस्केप नया है और यह शब्दावली नयी है, इसलिए हमारे आलोचक इस कविता से डरे-डरे नज़र आ रहे हैं। हमारे पास इस नयी कविता को जाँचने और खरे-खोटे में फ़र्क करने के साधन भी नही है।

यही एक बात और कहता चलू : यह कहना तो बहुत आसान है कि हर ज़माने मे अच्छा और बुरा साहित्य पैदा होता है, परन्तु इसका कारण है कि कभी २ अपने ज़माने की ठुकराई हुई कविता, किसी और ज़माने की अच्छी कविता बन जाती है। मै इससे यह नतीजा निकालता हूँ कि हर युग में चार प्रकार की शायरी पैदा होती है :

---

(१) क्षितिज (२) रेगिस्तान (३) बयान करना।

(१) गतिहीन अच्छी कविता (Static Good Poetry) (२) परिवर्तनशील अच्छी कविता (३) बुरी कविता तथा (४) गतिशील बुरी कविता (Dynamic Bad Poetry)।

उर्दू में गतिहीन अच्छे कवियों की मिसाल नासिख और जौक है। ये अपने जमाने के अच्छे कवि थे, परन्तु गतिहीन थे और समय परिवर्तनशील होता है। वह इन्हें छोड़कर आगे बढ गया और ये वही रहे। मीर परिवर्तनशील अच्छे कवि है। ये कल भी अच्छे थे और आज भी अच्छे कवि हैं। रंगीन और जान साहब स्थायी रूप में बुरे कवि है, ये कल भी बुरे थे और आज भी। नज़ीर अकबराबादी और गालिब की कविता गतिशील बुरी कविता की मिसाल है; यह कल बुरी थी, आज अच्छी है। जौक के समय मे यही फैसला ठीक था कि वह ग़ालिब से अच्छे शायर हैं। लेकिन आज का फैसला उतना ही ठीक है—कि गालिब, जौक से बड़े शायर हैं। बात स्पष्ट हैं। कविता की अच्छाई और बुराई का काई अटल कानून नहीं होता। इसलिए यह बिलकुल असम्भव नहीं है कि उर्दू की जिस नयी कविता पर आज हम नाक-भौंह चढ़ा रहे हैं, वह कल अच्छी कविता की मिसाल बन सकती है। जोश और सरदार जाफरी आज स्टेटिक अच्छे कवि की मिसाल है। ये लोग इस युग के नासिख और जौक है। हम उन का मान करते हैं। फ़िराक़ और अख्तर-उल-ईमान गतिशील बुरे कवि की मिसाल हैं। ये लोग राष्ट्रीय संघर्ष के समय में अच्छे कवि नही थे, क्योंकि ये कोमल स्वरों के कवि है। लेकिन आज ये लोग नये कवियों पर प्रभाव डाल रहे हैं।

परन्तु आज की नयी कविता की बात करते समय एक बात ध्यान में रखना जरूरी है। उर्दू, पंजाबी और बंगाली का नया साहित्य दूसरी भाषाओं के साहित्य से अलग है। ये तीनों भाषाएँ अब दो देशों को भाषाएँ हैं। मेरा ख्याल है कि उर्दू की नयी कविता की भाँति बंगाली और पंजाबी की नयी कविता भी दो हिस्सों में बँटी हुई दिखाई पड़ रही होगी। उर्दू मे तो यही हुआ है। हिन्दुस्तानी उर्दू की नयी कविता पाकिस्तानी उर्दू की नयी कविता से अलग है।

हिन्दुस्तानी उर्दू की नयी ककिता मृगनयनी भी है, और गजगामिनी भी। इस की बड़ी-बड़ी हैरान आँखें घबरा-घबरा कर हर तरफ देख रही है। परन्तु इस के कन्धों पर ५ हजार वर्ष की सभ्यता का बोझ भी है। इसलिए यह चौक-ड़ियाँ नहीं भर सकती। पाकिस्तान की नयी कविता के कन्धों पर यह बोझ नहीं है। क्योंकि उसके पास अपनी कोई परम्परा नहीं है। वह तो परम्पराओं की तलाश में है। चूंकि पाकिस्तान के पास कोई इतिहास नहीं है, इसलिए

इस्लाम और अमरीका की टक्कर मे इस्लाम हार रहा है और अमरीका जीत रहा है। और वहां एक असौन्दर्यवादी, कनसुरी तथा खुरदुरी कविता की जा रही है। वहाँ का नया कवि कविता की अच्छाई और बुराई के विषय मे सोच कर अपने आपको हलकान नही करता। वह तो केवल चौंका देने की फिक्र मे रहता है। ये 'टेढ़ी कविता' पाकिस्तान की सारी नयी कविता न सही, परन्तु वहाँ की नयी कविता पर ये टेढी छाप बहुत गहरी है।

पर मुझे तो जिस बात ने एक तरह की खुशी दी, वह यह है कि पाकिस्तान हिन्दू और सिखो की कमी बुरी तरह महसूस कर रहा है। अय्यूब खाँ कुछ कहें—परन्तु अगर लाहोर का कोई मुसलमान कवि सन् १९६२ मे 'काली पूजा' लिखेगा और अगर प्रसिद्ध साहित्यिक मासिक 'अदबे लतीफ' हर महीने पुरानी उर्दू के नाम पर कबीर, नानक, और मीरा की कवितायें छापेगा और उन्हें अपना विरसा (धरोहर) कहेगा, वहाँ के नये साहित्य मे हिन्दी-संस्कृत के शब्दों की वृद्धि होगी और शायर दोहे लिखेंगे तथा हिन्दू देवमाला से सिम्बल लेंगे तो मैं यही कहूँगा कि अय्यूबखाँ का यह खयाल गलत है कि रावी का किनारा और झेलम का पानी हिन्दुओ और सिखो को भूल गया है। वहाँ का नया साहित्य तो यह बता रहा है कि उसे अब हिन्दुओ और सिखो की बहुत याद सता रही है—और साहित्य झूठ नही बोलता है साहब।

पाकिस्तान की नयी कविता के विषय मे एक बात और कहनी है। वह पूरे आदमी की तलाश मे है। सलीम अहमद ने एक लेख मे लिखा है—'औरत की तरह शायरी भी पूरा आदमी माँगती है। जैसे कविता के केवल दो ही रूप है, या तो वह धर्मपत्नी है या वेश्या।

हिन्दुस्तानी उर्दू की नयी कविता के सामने आधे-पूरे आदमी का सवाल नहीं है। योंकि हम कविता को न पत्नी समझते हैं और न वेश्या। यहाँ की कहानी ही दूसरी है। आज़ादी के बाद यहाँ परम्पराओ की वे जञ्जीरें पहनने को जो चाहने लगा था जिन्हें प्रगतिशील आन्दोलन ने तोड़ दिया था। इसलिए कविता ने पलट कर माजी (भूत) की ओर देखा। मैं यह नही कह रहा हूं कि कविता माज़ो की ओर मुड गई। परन्तु स्वतन्त्रता माज़ी की याद जरूर करती है। इस लिए इस नयी कविता ने एक बार फिर पुराने कवियो के साथ साथ पुराने फार्म को भी हाथ लगाया। मीर और सौदा फिर पढे जाने लगे, गजले तो फिर गजलें ही हैं। ये नये कवि कशीदें, मसनबियाँ और शहर-आ-शोब लिखने लगे। गजल ने ताँबा और मकदूम जैसे काफिरों को मुसलमान बना दिया। ताँबा तो अब

सिर्फ गजलें ही लिखते हैं। मकदूम भी अब धडाधड गजले लिख रहे है। और हद तो यह है कि गजल का जादू सरदार जाफरी के सर पर चढकर बोल रहा है। जो अंसारी, जो गजल के विरुद्ध छिडने वाले सग्राम के प्रसिद्ध योद्धा थे वे आज तौबा को, गजलों से हार मानकर बैठे नज़र आ रहे हैं। परन्तु नयी कविता का बुनियादी फॉर्म फ्रोवर्स है। इन कवियों मे, विमल कृष्ण और मोहम्मद अली जैसे लोग भी हैं जिनकी कविता पाकिस्तानी मालूम होती है। शायद यही कारण है कि इनकी कविताएँ पाकिस्तानी रिसालो में ही छपती है। और जब हिन्दुस्तान का कोई रिसाला नयी कविता का विशेषाक निकालता है तो उस में इन लोगों की कविताएँ स्थान नही पाती है।

आजकल वहीद अख्तर, खलीलुर्रमान आज़मी, बलराज कोमल; कैलाश माहिर, शहाब जाफरी, मार पाशो, विश्वनाथ दर्द, हसन नईम, क़ाज़ी सलीम, मजहर इमाम, निदा फाज़लो, अज़ीज तमन्नाई शफोक़ फातिमा शेरा, शहरयार, अज़मल अजमली, मोहम्मद अलो ताज, साज़ तमकनत, अज़ीज़ कैशी. अमीर आरफी, बशीर वद्र आदि नए तजुर्बे कर रहे हैं। ये प्रयोग फॉर्म की दुनिया में भी हो रहे है और कॉण्टेण्ट की दुनिया मे भी।

फॉर्म के सिलसिले में मैं दो प्रयोगों का ज़िक्र खासतौर से करना चाहता हूँ। एक मजहर इमाम की आजाद ग़जल का तजुर्बा है। इन्होंने फ्री-वर्स में ग़जल लिखने की कोशिश की है—

'डूबने वाले को तिनके का सहारा आप हैं
इश्क़ तूफां है किनारा आप हैं।

परन्तु ये एक ही आजाद ग़जल लिखकर रह गये।

दूसरा महत्वपूर्ण प्रयोग अजीज तमन्नाई का है। उन्होंने उर्दू में अपने सॉनेट का एक संग्रह प्रकाशित कराया है। सॉनेट पहले भी लिखे गये है, परन्तु उर्दू के किसी कवि ने इतने सॉनेट नहीं लिखे हैं कि उनकी एक किताब तैयार हो जाये।

मैं ऊपर कह चुका हूँ कि यह कविता भाषण नहीं देती है, इसलिए जब कोई बलराज कोमल विद्यार्थियों पर अपनी कविता लिख रहा है तो वह जोश मलीहाबादी की तरह एक ऐसा भाषण नही देता जो उन्होंने किसान के बारे में दिया था या जिस लहजे मे अली सरदार जाफ़री ने एशिया को जगाया था। कवि कोमल कहता है—येविद्यार्थी—

'छुट्टी होने पर घर जाकर सो जायेंगे
फटे-पुराने बिस्तर से उगने वाले रंगीं ख्वाबों में खो जायेंगे।'

अब इसी जगह पाकिस्तान के एहसन अहमद 'अश्क' की कविता का एक अंश देख लीजिये ताकि लेण्डस्केप वाली बात साफ हो जाय—

'खल्क की नजरो से बचने के लिए
शहर से दूर निकल आये थे.........
यक बयक दूर से इक नूर का धारा फूटा
उसने घबरा के कहा—
आओ छुप जायें अंधेरे में ....

हम उजाले मे मुहब्बत भी नही कर सकते ।'

'अश्क' की इस नज़्म का शीर्षक 'डरपोक' है । परन्तु मुझे शीर्षक से अधिक इस कविता के शहर मे दिलचस्पी हैं । यह वह शहर नही है जिसके विषय मे मीर ने कहा था—

'दिल भी गोया एक दिल्ली शहर है'

यह एक औद्योगिक नगर है । इसमें बडी भीड़-भाड़ है, तिल रखने को जगह तो मिल जाती है परन्तु दिल रखने की जगह नहीं मिलती है । इसलिए मैं कहता हूँ लैण्डस्केप बदल गया है । अब चलिये शफ़ीक़ फ़ातिमा शेरा के 'शाद नगर' मे चलें—

'शगुफ्ता घास मे ये जर्द जर्द नन्हें फूल
न जाने किसलिए पगडंडियों को तकते हैं ।'

और वह देखिये मोहम्मद अलवी अपनी खिड़की खोल रहे है—

'खिड़की से जब घर मे धूप उतरती है
सरदी से मुरझाये बदन खिल उठते हैं ।'

यह भाषा नयी है । इसका संगीत भी नया है और लैण्डस्केप भी नया है । हिन्दुस्तानी उर्दू की नयी कविता पाकिस्तान की नयी कविता की तरह किसी ऐसे कमरे में बन्द नहीं है जो हवा की मुलाकात से कांप जाता है । यहाँ के वहीद अख्तर 'जानवासा' लिखते हैं—

'अहदे[1] स्पूतनिक के शहरे तमद्दुन[2] का एक बनजारा
दोश[3] पे असनाद[4] और कुतुबखानों का भारी पुश्तारा[5]
इसको भी बनवास मिला है चौदह साल या सोलह साल....'

१-युग २-सभ्यता ३-कन्धा ४-प्रमाण पत्र ५-गट्ठर

यह बनजारा राम से ज्यादा अकेला है क्योंकि इसके साथ न इसकी सीता है और न लक्ष्मण। बस तनहाई का यही दर्द इस नयी कविता का विषय है। इसलिए शेरा कहती है—

'सूखी घास पे चिनगारी ही पड़े तो कुछ हंगामा हो.......'

तनहाई का दर्द दोनो देशो में एकसा है—

'उजाड शहर पडा है, चले चलो चुपचाप।'

असलम अंसारी का एक शेर सुनिये—

'इस नगरी मे हर चेहरे पर
तनहाई की गर्द पड़ी है।'

यही दर्द पाकिस्तान के जाहिद डार की जबान से यूं बोलता है—

'किन शब्दों में बात करूँ मैं लोगो
किन शब्दों को समझोगे तुम बोलो
ऐसा न हो तुम तनहा और मैं तनहा रह जाऊँ.........'

और फिर प्रतिध्वनि के वन से किसी हिन्दुस्तानी शहरयार की आवाज आती है—

'पुकारते हैं किसी अजनबी मसीहा को.........।'

शहरयार क्योंकि किसी बन्द कमरे में नहीं है, इसलिए उसके लिए—

'खुशी का लमहा दहक उठा है
शगूफ़े शाखों पर सर उठाये
फ़िज़ा की बातों पर हँस रहे हैं.......।
बहार गुलशन से चन्द कदमों के फासले पर खड़ी हुई है।'

बहार का यही विश्वास हिन्दुस्तानी उर्दू की नयी कविता को पाकिस्तान की नयी कविता से अलग करता है।

मुझे यह नयी कविता बहुत पसन्द नही है, परन्तु मैं इसे बुरा नहीं कहता। मुझे नहीं मालूम कि यह अच्छी है या बुरी। मैं अभी केवल इतना ही कह सकता हूं कि इसका संगीत, शब्दावली, शब्दों की बैठक और इस लैण्डस्केप मे एक नयापन है। अभी इसे परखने की कसौटी नहीं बनी है। इसीलिए अभी मैं सिर्फ यह कहना चाहता हूं कि शायद यह नयी कविता गतिशील खराब कविता (Dynamic bad Poetry) है।

अब सुनिये शहरयार की एक कविता। शीर्षक है 'भक्तों का अपमान'—

'उम्मीदो के दिये जलाये
कब से इस मन्दिर में
जिसकी दीवारें हैं रेत के ऊपर
कलश है जिस पर नाकामी का
मजबूरी का लमहा-लमहा
महरूमी का तिलक लगाये
यादो के बुत पूज रहा है।'

नये कवि के इस व्यक्तित्व को यह प्रश्न परेशान कर रहा है—

'खाली हाथ अगर हम पहुँचे
अपने वतन
तो लोग कहेगे
खाली हाथ चले आये हो·······
जाओ-जाओ
वापस जाओ।' (शहरयार)

यानी यह नया कवि खाली हाथ वापस जाने से डरता है और अभी तक इनके हाथ खाली हैं। अभी इसकी झोली मे उस हौसले के सिवाय और कुछ नही हैं जिसे यात्रा पर लेकर निकला था। परन्तु यह भी कम महत्व की बात नहीं है कि वह हिम्मत नही हार रहा है। अगर वह हिम्मत हार गया होता तो या तो जज्बी की तरह चुप हो गया होता या वामिक की तरह शायरी करने से तोबा कर चुका होता यताँबा की तरह गजलें लिख लिखकर ज़िन्दगी के बाकी दिन गुज़ार देता। मुझे यह नयी कविता राष्ट्रीय कविता से अधिक साहस-सम्पन्न नज़र आती है। यह अकेली है, मगर हिम्मत नहीं हार रही है। बार-बार कहती है—

माज़ी का आईना मैंने तोड दिया है
माज़ी का आईना मैंने वक्त के पत्थर से टकराकर तोड़ दिया है।
उसके तेज़ नुकीले टुकड़े मैंने
यादो के इस गाँव के बाहर
आँसू के तालाब में जाकर फेंक दिये है।
अब ये तेज़ नुकीले टुकड़े
मेरे मुस्तक़बिल के तलुवों मे न चुभेंगे।'

● (अमीर आरफ़ी)

'ख्वाबों की दीवार से उतरो
आओ चलो
दुनिया को देखें ।' (शहरयार)

●

'चलो कि आज सितारो की सैर कर आयें,
कोई यह कह न सके आदमी से कुछ न हुआ
गमे ज़माना जिसे आप मौत कहते है
हमें यह मौत न मिलती तो मर गये होते ।'

● (मोहम्मद अली ताज)

'ओरी सपेरन काहे तू नित छेड़े राग नये ।
तेरे बीन के कारन मेरे सपने रूठ गये ।'

● (ताज सईद)

'दुख की बंजर धरती हमने सींची है जब रोये ।
दिन को फ़सल खड़ी देखी है गर रात को आँसू बोये ।
हमने अपने प्यार के दाग को रोशन दिल मे रक्खा–
तुमने अपने दुख के धब्बे गंगाजल से धोये ।'

● (सज्जाद बाकर रिज़वी)

गुंचे ही बेकरारे नसीमे सहर नही
काँटे भी चाहते हैं ठण्डी हवा चलें ।

● (सागर मेहदी)

ये नयी कविता की चन्द मिसालें हैं । देखिये इस विषय पर कई किताबें लिखने की जरूरत है । मैं इसे एक लेख में कैसे समेटूं ·······और अंत में सुनिये मेरा एक शेर—

प्यासी रातें भी काटी हैं, दिन भी गुज़ारे उलझन के
जेठ से हमने हार न मानी, घर न गये हम सावन के ।

(राही मासूम रज़ा)

●●●

आधुनिक मराठी कविता : एक विहंगावलोकन

●

आधुनिक मराठी कविता के जनक केशवसुत (१८६६-१६०५) के तुतारी-नाद ने मराठी कविता को शैशवकाल ही मे विद्रोह और विश्व-भावना के विस्तृत भाव पटल पर प्रस्तुत किया था। आम्ही कोरण, सत्तारीचे बोल, नवा शिपाई और तुतारी जैसी कविताएँ आत्म-परीक्षण, मानव-प्रतिष्ठा और विश्वजनीन भावनाओ से ओतप्रोत थी। विकास के प्रथम सोपान ही मे मराठी कविता में प्रकृति-प्रेम-सौन्दर्य, मानव-समाज और राष्ट्र-विश्व की विविध भाव-सरणियो का ऐसा मिला-जुला रूप व्यक्त हुआ कि सम्पूर्ण विकास मे आज तक काव्य-प्रवाह को किसी एक विशिष्ट भाव-युग के चौखटे मे विभाजित नही किया जा सकता। नारायण वामन तिलक, कवि विनायक, कवि बी० दत्त, गोविन्दाग्रज, बालकवि और भास्कर रामचन्द्र ताम्बे आदि कवियो ने आधुनिक मराठी कविता के मंगलाचरण को बीसवीं सदी के प्रथम दो दशकों मे विकास की दिशाएँ प्रदान कीं। कवि विनायक ने अपनी राष्ट्रीय कविताओ द्वारा देश और समाज की विषम-स्थितियों को ओजपूर्ण वाणी मे व्यक्त किया। बाल कवि के काव्य मे प्रकृति और सौन्दर्य की सुकुमार व्यञ्जना हुई। भास्कर रामचन्द्र ताम्बे ने प्रेम और शृंगार की भावभूमि पर मराठी भावगीत परम्परा का प्रारम्भ किया। गोविन्दाग्रज की कविता में विफलता और निराशा ('प्रेम और मृत्यु') की धारा का सूत्रपात हुआ। भावभूमि की व्यापकता का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि प्रारम्भिक विकास के इस चरण मे हमे पारिवारिक विषयो की सामान्य संवेदनाओ की भावपूर्ण व्यञ्जना भी दृष्टिगोचर होती है। कविता के विकास का द्वितीय सोपान कवि विनायक, बाल कवि और ताम्बे की क्रमशः राष्ट्रीय, प्रकृतिपरक एवं शृंगार-भावगीत परम्परा को सूक्ष्म अनुभूतियां और लाक्षणिक व्यञ्जनाओं के धरातल पर प्रतिष्ठापित करता है।

सन् १९२० के पश्चात् रवि-किरण मण्डल की स्थापना एक महत्वपूर्ण घटना है। इस मण्डल ने कविता को जनप्रिय बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य

किया। यशवन्त, गिरीष प्रहलाद केशव अत्रे, भवानीशंकर पण्डित, कुसुमाग्रज, बोरकर और माधव ज्युलियन द्वितीय सोपान के प्रमुख रचनाकार है। इन रचनाकारो मे ताम्बे और कवि विनायक की परम्परा का समानान्तर विकास दृष्टिगोचर होता है। प्रहलाद केशव अत्रे ने व्यंग्य काव्य की सृष्टि की और माधव ज्युलियन ने उमर खय्याम का अनुवाद तथा उर्दू छन्दो के प्रयोग किये। इस प्रकार मराठी कविता १९४५ तक प्रकृति-प्रेम-सौन्दर्य और राष्ट्रीय तथा क्रान्तिकारी भावधाराओ से अनुप्राणित विकसित होती रही।

हिन्दी कविता की तरह छायावाद, रहस्यवाद, प्रगतिवाद, और प्रयोगवाद आदि कालक्रम से विभाजन करने का अवकाश मराठी कविता के विकास-प्रवाह मे नहीं है। इसका यह आशय नही कि इस प्रकार की प्रवृतियाँ मराठो कविता मे नही रही। जगन्नाथदास रत्नाकर से लेकर पन्त, निराला और माखनलाल चतुर्वेदी बच्चन जैसे हिन्दी कवियों के अनुरूप वैसी ही भावधाराओ के कवि इस विवेच्य अवधि में हुए है। अद्यतन काव्य-प्रवाह के प्रथम चरण में अनिल (आत्माराम रावजी देशपाण्डे) और मर्ढेकर का सृजन-मोड़ अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

आधुनिक मराठी कविता की सामाजिक चेतना का आधार और जीवननिष्ठ समस्याओ को सामान्य धडकन अनिल की कविताओं ने दी। वर्तमान जीवन-आशयो को आत्मसात् करने और प्रभावोत्पादक अभिव्यक्ति मे मुक्त छन्द की सामार्थ्य उन्होंने ही सिद्ध की। अनिल के साथ ही वा० ना० देशपाण्डे का नाम भी मुक्तछन्द के सन्दर्भ मे भुलाया नही जा सकता। केशवसुत की मानव-निष्ठा और आशावादी भावना नये सन्दर्भों मे अनिल की रचनाओ में स्पन्दित हुई। अनिल की यह प्रगतिशील चेतना किसी वाद-विशेष की पक्षधर न होकर व्यापक मानव संवेदना पर आधारित है। यही मानवतावादी स्वर और गहरी आस्था अनिल को अत्यन्त सशक्त कवि और दृष्टा के रूप मे प्रस्तुत करती है। नयी पीढ़ी के तरुण कबि अनिल से प्रभावित हैं:

मर्ढेकर मराठी नयी कविता के प्रवर्त्तक हैं। उनकी प्रारम्भिक रचनाओ का संग्रह शिशिरागम (१९३९) में गोविन्दाग्रज की परम्परा मे आता है। इन रचनाओं मे निराश हृदय की करुण व्यंजना मिलती है, किन्तु इसी वर्ष द्वितीय महायुद्ध प्रारम्भ हुआ और यंत्रयुगीन सभ्यता के वातावरण में मानवता के स्रोत्र सूखने से लगे। मर्ढेकर ने आधुनिक परिवर्तित जीवन-परिबेश मे मानव-मूल्यो के विघ-टन और जीवन निष्ठाओ के स्खलन को अनुभूत किया। उनकी कविताओं मे

यथार्थ, बौद्धिकता और जटिलता का समावेश होता गया। १९४७ मे उनका 'कांही-कविता' नामक संग्रह प्रकाशित हुआ। यही संग्रह नव-काव्य का प्रथम उद्घोष है। बम्बई महानगरी मे मर्ढेकर ने यन्त्र-सभ्यता के परिवेश में मानवीय-सम्बन्धो की वंचना देखी और इस सबकी कवि-मन पर हुई प्रतिक्रिया ने घृणा, निराशा और जुगुप्सा की भावना को जन्म दिया :

जगायची पण सक्ती आहे।
मरायची पण सक्ती आहे।

(जीवित रहने और मरने दोनों ही पर प्रतिबंध है) महसूस करते हुए कवि ने जन-सामान्य के जीवन और मरण को इस प्रकार देखा :

गरिब बिचारे बिळांत जगले
पिपांत मेले उचकी देऊन।

(असहाय गरीब लोग बिलो में जीते है और कनस्तर में हिचकी ले प्राण छोड़ देते है) दूसरे संग्रह (आणखी कांही कविता: १९५१) में कवि और अधिक विचार प्रधान, सूक्ष्म और तीव्र हो गया :

जशि पाप्याची नजर फिरावी
अनोलखीच्या उरावरूनी
ह्या सार्याची भेकडवृत्ती
वावरते तशि जगण्यामधुनी

अपरिचित के वक्षस्थलो पर से
जैसे दुष्ट की निगाहे फिरती हैं
वैसे ही इन सब लोगो की कायरता
जीवन मे आचरण करती है !

प्रस्तुतीकरण की दृष्टि से मर्ढेकर ने पौराणिक सन्दर्भों को आधुनातन बिम्ब-परिवेश मे व्यक्त किया। यांत्रिक नवीनतम उपमाएं उठाईं। रोजमर्रा के जीवनावश्यक उपादानो को काव्य-उपकरण बनाया। अंग्रेजी आदि के शब्दों का मुक्त प्रयोग किया। इतना ही नही, उन्होने प्राचीन छंद अभंग-ओवी को आधुनिक भाव व्यंजना के लिए उपयोगित किया। मर्ढेकर ने मुक्त छंद में (एक कविता अपवाद रूप मे छोड़कर) कविताएं नहीं लिखी हैं। यह महत्वपूर्ण तथ्य नवकाव्य के इस पुरस्कर्ता के साथ सदा जुड़ा रहेगा। तमाम विफलता और घृणा के वावजूद मर्ढेकर की मानव और जीवन मे घनी आस्था थी और यही कारण है कि उनका संवेदनशील कवि विडम्बना देख तिलमिला उठा।

प्रकृतवाद फ्रायडियन दृष्टि—बिन्दु से पु० शि० रेगे की कविताओं मे व्यक्त हुआ है। उत्तान शृंगार और नारी के प्रति अत्यन्त ही मांसल दृष्टिकोण उनकी कविता का मूल भाव है। शरच्चन्द्र मुक्तिबोध के शब्दों मे 'रेगे की नारी-दृष्टि भोग प्रधान हैं, उनकी कविता मानो स्त्री-देह का ब्योरेवार वर्णन ही है।' वा० श० कात 'रुद्रवीना' मे क्रांतिकारी कवि के रूप मे दिखाई दिये, किन्तु नयी कविता के परिवेश मे उनकी रूमानी रचनाएं भी मिलती हैं। मर्ढेकर से प्रभावित और उनको-सी ही अवसाद-ग्रस्त दृष्टि वसत हजरनीस की 'वश्या म्हणे' कविता संग्रह मे दृष्टिगोचर हुई। इधर उनकी कविताएं देखने को नही मिलती।

य० द० भावे (आर्द्रा: हलवें भिंग—दो संग्रह) ने अपनी कविताओं में आर्थिक विषमता और आधुनिक सभ्यता पर कटाक्ष किये हैं। महानगरीय जनजीवन और मध्यमवर्गीय त्रासदी का मार्मिक स्वर उनकी विशेषता है। श्रमिको की दयनीय अवस्था का भी सहानुभूतिपूर्ण चित्रण किया है। ग्रामोपाध्ये की कविताएं 'निलांवती' में संग्रहीत है। भौतिक मूल्यो की प्रतिष्ठा ने मानवीय मूल्यो का अवमूल्यन कर दिया है। उनकी कविताओ मे यह असन्तुलन प्रतीको के माध्यम से उद्घाटित हुआ है।

बिंदा करंदीकर, शरच्चन्द्र मुक्तिबोध और मंगेश पाडगांवकर, ये तीन नाम मराठी नयी कविता के समसामयिक समृद्ध स्वरूप को सहज प्रकट कर देते हैं। बिंदा करंदीकर अपने प्रथम संग्रह 'स्वेदगंगा' में क्राति और ओज के कवि थे। किंतु 'मृदगंध' और 'ध्रुपद' संग्रहों मे उनका नया रूप सामने आया। उनका रचनाकार जहाँ उद्दाम शृंगार के मांसल दृश्य उपस्थित करने में सानो नही रखता, वहीं सामाजिक विषमता पर कशाघात करने मे नही चूकता है। जहाँ कवि ने मध्यमवर्गीय जीवन की विषमता को प्रकट किया है, वही उसमे प्रखर आशावादी स्वर भी सुनाई पड़ता है :

रोने की भी शक्ति नही है
हँसने की भी शक्ति नही है।

किन्तु दूसरे ही क्षण कवि का आस्था-प्रधान स्वर गूंजता है :

मुझे दीख पड़ते हैं
भविष्योन्मुख स्वीकारशील जीवन के
लाल लाल बाल............
क्रांति के तूफानों मे बार बार
जनता के पेट में
अग्नि है, अग्नि है............
जनता के ऐक्य मे

लावा की लहर है …………

जनता की नसो में

लाल लाल रक्त है……… …

जनता की मुक्ति हेतु

अभी एक समर शेष …………

बिंदा करंदीकर का मुक्तछंद प्रवाह और लय की दृष्टि से बेजोड़ है। महाराष्ट्र की स्थानीय रूप-गंध चित्रात्मकता उनके बिम्बो मे सजीव हो उठी है।

शरच्चन्द्र मुक्तिबोध मे आर्थिक विषमता और सामाजिक दुरावस्था के प्रति असंतोष और विद्रोह का स्वर ऊँचा हुआ है। उनका विद्रोह-आक्रोश सामान्य जन के प्रति सहानुभूति से ओतप्रोत और आशावादी है। साम्यवादी चितना कवि के अन्तर्मन मे सक्रिय रहती है। किंतु वह अपनी संस्कृति और परिवेश से विच्छिन्न नही होता। राजनीतिक आग्रह रचना-प्रक्रिया और मानवीय संवेदनाओ में सन्निहित हो कलात्मक ढंग से व्यक्त होता है। 'नवी मलवाट' 'यात्रिक' आदि संग्रहों मे उनको सशक्त रचनाएँ हैं। आक्रोश और तिलमिलाहट जैसे हरदम कवि को मथती रहती है :

मेरे केश-जाल मे घर्राता है क्रुद्ध वात ……

और भी—

दहक उठें सारे जन

ऐसा अग्नि-गीत गा

गीत हो त्वेष का, विषमता-द्वेष का

विद्रोही गीत एक लौह दण्ड सा

लोहे के हाथों का

कठोर गीत गा ……

मुक्तिबोध की मुक्तछंद योजना और नवीनतम सन्दर्भों में आक्रोश-व्यंजना नयी कविता के परिवेश मे सामाजिक मनुष्य की प्रतिष्ठा की दृष्टि से अप्रतिम है। मंगेश पाडगाँवकर (जिप्सी, छोरी आदि संग्रह) मुलतः प्रकृति और सौदर्य के कवि हैं। नव-रोमाण्टिसिज्म के धरातल पर वे हल्की संवेदताओ को मूर्त्त और अमूर्त्त बिम्बों में कुशलता से व्यक्त करते हैं। सौन्दर्य की प्यास लिये उनका जिप्सी कवि मन प्रकृति के रंग-रूप-रस-गंध को सशक्त बिम्बों में गूँथता, आनंद-डाक देता रहता है। उनकी प्रेम की कवितायें सूक्ष्म और मार्मिक हैं। इस सौंदर्य दृष्टि के अतिरिक्त पाडगाँवकर मे सामाजिक चेतना भी परिलक्षित होती है। शब्द-चयन

गति-लय और आत्मीय बिम्बों के कारण पाडगाँवकर की कविता का कलात्मक पक्ष बहुत ही प्रभावकारी और सुगढ होता हैं। मंगेश पाडगाँवकार सूक्ष्म संवेदनाओ के कलात्मक कवि हैं।

सदानंद रेगे भी प्रकृतिपरक सौंदर्य दृष्टि के रचनाकार हैं। रेगे ने छोटी कविताओं के रूप मे व्यंग्य बहुत सुन्दर प्रस्तुत किये हैं। 'अक्षरवेल' संग्रह मे उनकी छोटी कवितायें अत्यन्त प्रभावकारी हैं। जहाँ रेगे प्रकृति के छोटे छोटे मोहक दृश्य बिम्बों मे बाँध लेते हैं, वही दूसरी ओर उनकी रचनाओं मे दुर्बोध और विक्षिप्त कल्पना भी कम नही। वसंत वापट भी ताजी व्यंजना की दृष्टि से महत्वपूर्ण कवि हैं। रोमाण्टिक धारा और सामाजिक चेतना का समन्वय उनमे मिलता है। लेखिकाओ में इन्दिरा और पद्मा का कृतित्व महत्वपूर्ण है। इन्दिरा रोमाण्टिक धरातल पर नवीन सवेदना अत्यंत ही बारीकी से उतारती है। आत्मलीन उदासी का विशिष्ट मूड ताज़े-टटके सशक्त बिम्बों मे कलात्मक रूप से उनकी कविताओं में मिलता है। पद्मा की कविताओं मे पारिवारिक जीवन के हृदयग्राही चित्र मिलते हैं। ये भी कोमल संवेदनाओ को सधी रेखाओ और पूर्ण बिम्बों में कुशलता से उतारती हैं। दोनों ही मे अनगढ़ता कही नही—कलात्मक विन्यास दृष्टिगोचर होता है।

इधर के और नये किन्तु आश्वस्त करने वाले कवियो में दिलीप पुरुषोत्तम चित्रे, शंकर रामाणी, रमेश तेण्डुलकर, आरती प्रभु और सरिता पदकी आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। इन कवियो ने बौद्धिक सजगता और वास्तववादी अप्रोच से आधुनिकतम भावबोधो को और भी नाविन्य से छुआ है। पश्चिम के कवियों का प्रभाव इन पर देखा जा सकता है।

मराठी नयी कविता एक स्वाभाविक-आत्मीय प्रक्रिया मे विकसित हुई है। मर्ढेकर को बहुत विरोध सहना पड़ा था। फिर भी मराठी नवकाव्य आन्दोलन और गिरोह-प्रयत्नो का प्रतिफल नही हो है। वैचारिक दुर्बोधता, कल्पना की विक्षिप्तता होते हुए भी मराठी नयी कविता अनुवाद-सी कही नही लगती। सवेदनागत और व्यञ्जनागत असन्तुलन नही दीख पड़ता। यही कारण है कि रूप-रस-गंध-रंग, प्रकृति-प्रेम-सौन्दर्य, संस्कृति-मानव-जीवननिष्ट और आधुनितम जटिल जीवन की विडम्बना, सब कुछ एक साथ मराठी नयी कविता में परिलक्षित होते हैं।

(चन्द्रकान्त देवताले)

●●●

वर्तमान गुजराती कविता

●

स्वाधीनता के बाद तीन समर्थ कवि विदा हो गए—हरिश्चन्द्र भट्ट, कृष्णलाल श्रीधराणी और प्रह्लाद पारेख। उनकी अनेक रचनाओं में शुद्ध सौन्दर्यानुराग झलकता है। पाँचवें दशक के प्रारम्भ मे प्रह्लाद पारेख कृत 'बारीबहार' का प्रकाशन हुआ और गुजराती कविता ने जागरूक समाजाभिनिवेश से कुछ मुक्ति पाई। इसी दशक के अन्त तक राजेन्द्र शाह आ पहुँचे, जिनकी 'ध्वनि' मे गुजराती पाठक ने एक अनाविल सौन्दर्य-लोक के दर्शन किये। चतुर्थ दशक में सामाजिक यथार्थ का आलेखन करने वाली रचनाओं की बहुलता थी, 'ध्वनि' मे ऐसी एक भी रचना नही। केवल कविता-तत्त्व तुष्टि का कारण बने, इस कदर यहाँ है। उनका चौथा काव्य-संग्रह 'शान्त कोलाहल' ६२ में प्रकाशित हुआ। इसमे भी वे 'ध्वनि' मे सर्जित निरुद्देश्य आनन्द के खुशगवार माहौल मे ही डूबे हुए दीखे। राजेन्द्र ने गीत रचनाएँ भी काफी दी हैं। उनमें बंगाली एवं मारवाड़ी गीतों-लोकगीतो की लय का उपयोग किया गया है। इस कवि के 'वनवासी के गीत' मस्त, तूफ़ानी प्रणय की महक तथा ताज़गी लिए हुए है। ऐसी रचनाओं मे पुनरावृत्ति का भय बना रहता है। फिर भी हिन्दी कवि ठाकुर प्रसादसिंह के 'वंशी और मादल' के गीतों के साथ राजेन्द्र के इन गीतो को पढ़ना कम रसप्रद नही है।

उमाशंकर और सुन्दरम् पिछले तीन दशक के मूर्धन्य कवि है। सुन्दरम् के संवेग बडे प्रबल है। उनकी कुछ रचनाओ मे 'प्रिमिटिव फोर्स' का आस्वाद प्राप्य है। उमाशकर मे मानस सर की स्वस्थता है, तो सुन्दरम् कभी कभी उन्मत नद के समान बहते नजर आते है। बारीकी दोनो की रचनाओ में लक्षित होती है। विचार की दृष्टि से सुन्दरम् की गति एक ही दिशा में तथा गहराई को छूने मे मग्न प्रतीत होती है। उमाशंकर गति और स्थिति—सार्वभौमिकता पसन्द करते हैं। सुन्दरम् की प्रारम्भिक कविताओं में वर्ग-वैषम्य पर व्यंग्य किये गये है। उनमें मार्क्स-दर्शन के अनुसार कुछ वर्ग-संघर्ष की भावना व्यक्त हो गई है। फिर वे गाँधीवाद को स्वीकार करते है और अन्ततः अरविन्द-दर्शन के उपासक बनते है। हिन्दी कवि पन्त और सुन्दरम् की गति कुछ समानान्तर-सी दीखती है।

उमाशंकर का सौन्दर्य-बोध रवीन्द्र के निकट और उनकी जीवन-दृष्टि गाँधी के सन्निकट है। उनके समक्ष विश्वक्रम है। उन्हे मानव-मात्र से लगाव है। उसमे बसा मनुष्य वृहत्तर विश्व को प्यार करने, अहं का विलयन करने मे अपने अस्तित्व की सार्थकता महसूस करता है। 'यात्रा' के सुन्दरम् मे भी यह उदात्त तत्व है किन्तु वे जन-जीवन के सान्निध्य से हटकर एक कोने मे जा बैठे और उन्होने जीवन को समझने के लिए एक निश्चित दर्शन का कवच पहन लिया। देखें इस नयी अनुभूति की रचनाएँ भी बिना दिये वे कैसे रह सकते है ?

उमाशंकर 'निशीथ' (४०) की एक लम्बी कविता 'आत्मना खंडेर' (१७ सोनेट) में एक विशिष्ट अर्थ मे अंतर्मुख हुए हैं। यहाँ मानव जीवन की आकाक्षाओ के साथ निजी विक्षिप्त मनस्थितियो का प्रभावोत्पादक अंकन है। 'प्राचीना' ('४४) के पौराणिक पात्रो को उमाशंकर ने नवजीवन का सत्व पिलाया है। वे पात्र अपने स्थान पर खड़े होने पर भी युगो की सीमाओ को बेधकर हमारे आँ न तक दृष्टि पहुचा पाये हैं। यहाँ प्राचीन पात्रो मे अधिष्ठित जीवन मे वर्तमान युगचेतना की धडकन सुनाई देती है। युद्ध के कारण विघटित जीवन-मूल्यो के बीच मानव-जाति की पुरानी पोडाओ को कवि ने यहाँ नये अर्थ दिये है। 'आतिथ्य' ('४६) से जीवन की संवादिता और प्रसन्नता मुखरित हुई है। 'वसत वर्षा' ('५४) में प्रकृति के निविड़ आश्लेष तथा विश्व मानव के प्रेम की प्राप्ति का संतोष स्वर के रूप मे हैं। यहा स्वाधीनता के बाद लिखा गया 'जीर्णजगत' नामक काव्य है, जिसमें समाज प्रतिष्ठित प्रवचको के प्रति तीव्र आक्रोश व्यक्त हुआ है। उसका पूर्वार्द्ध देखिये—

मुझे मुर्दों की बास आये !
सभा मे, समिति में, बहुत से पंचो मे
जहाँ नये निर्माण की बाते करें
दकियानूस जबडे।
एक हाँ के पीछे हाँ की भेडिया-धसान,
मिले शायद किसी के मर्द मुह से ना,
उसे दुत्कार से चाहें मगर ये थरथराना,
विचरते मन्द नित्य,
श्वास लेते अर्द्ध सत्य असत्य मे,
जरठ होंगे कहीं, कहीं जवान पूरे,
निरखकर भावी को, लेतें जम्हाई,
लगाते कुण्डली संकुल ऐसी चाहकर
कि सत्य का अवरुद्ध हो जाय गला,

मुझे निशिदिन बुझे हुए दिलों की बास आये।
मुझे मुर्दों की बू सताये!
पुष्प से लदकर सजे रूप मे विहरते
शव, समाज की हर चोटी से हर चोटी पर चाहे विचरते।
जंगलों मे कष्ट तो कम नही हुए,
कुर्सियाँ बनती रही अगणित!
पुष्प भी खिलते रहें है बाग में
और सजाई जा रही है गर्दनें,
अचेतन की आरती मे चेतना हवि हो रही।

'छिन्न भिन्न छु' ('५६) कविता मे व्यक्तित्व और समाज की व्यवस्थिति में बिखराव कवि को खलता है। यहाँ मनुष्य के प्रच्छन्न आंतर रूपो से आक्रान्त होते हुए भी कवि ने उनके प्रति एक प्रकार के ऋण भाव को स्वीकार किया है। इस अनवस्था और विखण्डिता के युग में हम पर छाई हुई विवशता का इकरार करने वाले दूसरे दो प्रतिभा सम्पन्न कवि स्वातंत्र्य के बाद प्रकाश मे आये: श्री निरंजन भगत और श्री प्रियकान्त मणियार।

आधुनिक गुजराती कविता मे शब्द शिल्प की क्षमता उमाशंकर के बाद सबसे अधिक निरंजन मे है। निरंजन विश्व-कविता के अध्येता हैं। उनका कक्ष पुस्तकों की दीवारो से बना है। गुजराती-बंगाली कविता के अतिरिक्त पाश्चात्य भाषाओं की कविता के अध्ययन से भी श्री भगत ने काव्य-शिक्षा ग्रहण की है। वे कविता पर बातचीत नहीं कर सकते, भाषण दे देते हैं। वैसे, चर्चा में आक्रामक दीखने पर भी उनकी दृष्टि गाँधी प्रणीत अहिंसक मानवता-दृष्टि है। उनकी कृतियों के बहिरंग पर कल्पना (Image), प्रतीक आदि पर—बादलेयर. इलियट, रिल्के आदि कवियो का यथोचित प्रभाव लक्षित होता है। उनके प्रतिनिधि संग्रह 'छन्दोलय' मे आकार-निर्मिति का आश्चर्यजनक कौशल है। नगर-संस्कृति के विकास के फलस्वरूप व्यक्तिमन के सूनेपन का अनूठा अकन है। 'प्रवालद्वीप' (बम्बई पर लिखित काव्यगुच्छ) मे व्यंजित युगबोध निरंजन को सत्यान्वेषी तथा मनुष्यों के परम चाहक के रूप मे परिचित करवाता है। परस्पर के यांत्रिक व्यवहार के कारण मनुष्य का हृदय पराजित-सा हो गया है, इसका निरंजन को बेहद गम है। अंध-अमर्याद आकांक्षाओं के पीछे दौडते हुए मनुष्य भ्रान्ति के अंधकार में फंसकर दिग्-भ्रमित हो गया है। निरंजन का यह स्वर उनकी एक छोटी कविता 'अहमदाबाद' में भी सुनाई देगा। कुछ पंक्तियाँ देखिये:

यह न शहर, मात्र धूम्र के धुएँ
रुंधते जहाँ मनुष्य के रुए रुए।
असंख्य नेत्रो मे अदम्य रूप की तृषा
खिलती तथापि व्यर्थ ही यहाँ उषा–
कौरवाश्रये[1] पडे सदा उदार कर्ण-सी
मिल-मालिको के घर सुवर्ण-सी।

प्रियकान्त की रचनाओं मे प्रथम पंक्ति से ही उन्मेश झलकता है। सारी रचना का ताज़गी के साथ निर्वाह होता है। प्रतीकों व नये उपमानो से समृद्ध समग्र कृति एक स्वायत्त प्रतीक होती है। उनकी 'चालतां चालतां' कविता मे छाया के प्रतीक के सहारे आज के मनुष्य के अंतर्जगत की चहल-पहल का मनोरम आलेखन हुआ है। कवि ने विभिन्न मनःस्थितियों की सुरेख तस्वीरें खीची है। 'अश्व' नामक कविता मे सूर्य के रथ का वहन करने वाले सात अश्वो मे ही एक अश्व यहाँ ताँगे मे जुडा हुआ अलक सुबह से ही बरसते पानी मे तरबतर काँप रहा है। ऊर्ध्व स्थिति से च्युत आज के मनुष्य के गमगीन परिवेश, और उसमे मज़बूत खडे मनुष्य का यह 'अश्व' अप्रतिम प्रतीक बन सका है। प्रियकान्त ने कुछ मधुर गीत भी लिखे है, जिनमे राधा-कृष्ण के परस्पर सम्बोधन का आधार लिया है। दूसरे भी अनेक नये कवियो ने इस पुराने आधार से नई उपलब्धि के लिए प्रयोग किये, लेकिन वे प्रयोग मात्र पुनरावर्तन बन कर ही रह गये।

बालमुकुन्द दवे, प्रजाराम और उशनस्, तीनो परम्परा प्राप्त और प्रचलित काव्य-रूपो एवं काव्योपकरणो का उपयोग करने वाले, प्रयोगो मे न उलझकर कविता सिद्ध करने के प्रयत्न मे मग्न रहने वाले कवि हैं। प्रजाराम भी राजेन्द्र की तरह 'प्राज्ञमुग्ध' हैं। उनका संवेदना-पटल कोमल-ऋजु है। अरविन्द-दर्शन को अंगीकार कर लेने से जो लाभ-हानि सुन्दरम् की कविता को हुई, वही प्रजाराम की कविता के साथ भी हुआ। बालमुकुन्द मे असाधारण सहजता तथा प्रासादिक माधुर्य है। उच्च स्तर के कवि होते हुए भी वे लोकप्रिय हैं। लोकगीतो के लहजे और खुमार मे इन्होने काफी अच्छे गीत लिखे है।

उशनस् विषय-वस्तु की दृष्टि से समृद्ध हैं। वे लिखते है खूब, लेकिन वाकई उनमे सर्गशक्ति है। कोई भी विषय उनकी लेखनी को उत्तेजित कर सकता है। भारतवर्ष पर लिखे गये उनके काव्यो मे विभिन्न प्रदेशो का व्यक्तित्व, नैसर्गिक सुषमा, मानव रचित कलाकृतियाँ और भिन्न-भिन्न जनसमुदायो की जीवन्त छवियाँ उतरी हैं। उशनस् ने प्रबन्ध काव्य के क्षेत्र मे भी हस्तक्षेप किया है। उनकी

१ श्री नरेश मेहता ने 'फागुन मासे' जैसे सप्तमी के प्रयोग किये है।

कविता की इबारत मे अल्हड़ता, ऊबड-खाबड़ता और सर्वशब्द समभाव है। उनकी प्रारम्भिक रचनाओ मे संस्कृत की अपरिचित शब्दावली की भरमार के कारण दुरूहता थी। 'आर्द्रा' मे उनका विकासक्रम दिखाई देता है।

इन तीनों के साथ अन्य कवि है : श्री जयंत पाठक, वेणीभाई पुरोहित, मकरन्द दवे, पिनाकिन् ठाकोर, हरीन्द्र दवे, नन्दकुमार पाठक, सुरेश दलाल, हसित बूच आदि। गांधीयुग के श्री स्नेहरश्मि, सुन्दरजी बेटाई, मनसुखलाल झवेरी, करसनदास माणेक, पूजालाल, स्वप्नस्थ आदि भी आज लिख रहे है। बाद मे लिखने का प्रारम्भ करने वाले किन्तु कोरे तथ्य उगलने वाले अनेक कवि कविता को उपेक्षा क्षेत्र समझकर लिख रहे है।

श्री हंसमुख पाठक, नलिन रावल तथा विनोद अध्वर्यु प्रयोगशील है। वे साम-यिकता का मर्म पकड़ने मे प्रवृत्त, काव्य शिल्प मे प्रवीण, पाश्चात्य कविता के अध्ययन का सदुपयोग करने वाले गत दशक के नये कवि है। उनमे उमाशंकर, निरंजन की तरह समाजाभिमुखता भी है, निशर्गाभिमुखता भी है, वैयक्तिक मनः स्थितियो का अंकन भी है।

श्री हेमन्त देसाई और दिलीप झवेरी ने संयोग-विप्रयोग की कुछ कविताओ मे माँसल प्रणय की आवेगपूर्ण अभिव्यक्ति की है। बाद मे ये दोनो अपना अनुकरण करने लगे। इनके समान कम उम्र के श्री चन्द्रकान्त सेठ और योसेफ मेकवान उज्ज्वल भविष्य के इंगित दे चुके है।

तीन चार वर्ष से यहाँ अछांदस रचनाओ का शोरगुल मचा हुआ है। गत वर्ष अहमदाबाद मे अछांदस कवियो का एक बड़ा उग्र जुलूस निकला था। इस दल में कुछ कवि छंदो मे अच्छी रचनाएं देने वाले है, कुछ गजलकार है तो कुछ ऐसे भी है जिन्होने छद का कभी स्पर्श भी नही किया है। छंद मे जिसकी यथेष्ट गति हो, वे ही मुक्त छंद मे सही माने मे कामयाब हो सकते है, यानी अछादस की आव-श्यकता को समझ सकते है, अगर है तो। इस समझदारी के कारण श्री गुलाम मोहम्मद शेख और श्री सुरेश जोषी इस विधा मे कुछ आस्वद्य रचनाएं दे सके है।

'छिन्न-भिन्न छुं' कविता मे श्री उमाशंकर ने गुजराती के चारो कुल के छंदो का विनियोग किया है। उसमे और एक अन्य लम्बी रचना 'शोध' मे बीच-बीच मे गद्य खण्डो का सार्थक प्रयोग हुआ है। पहली रचना मे लयकी टूटन और धड़कन इस कदर सुनाई देतो है कि जीवन का छिन्न आषेहब भिन्नता हूबहू उभर उठती है।

श्री सुरेश जोशी ने 'प्रत्यञ्चा' ('६१) मे कुछ अछांदस रचनाएं दी है, कुछ रचनाओ मे छंद को गद्य के निकट लाने का प्रयास किया है तो कही कही अलग अलग लय वाले वाक्यो को प्रास की दीवारो से नियंत्रित किया है। इस दृष्टि से 'चार अन्धकार', 'सूर्या' आदि रचनाएं पठनीय हैं। प्रतीको के आधिक्य एवं संयोजनवाली कुछ रचनाएं चर्चा के लिए पसन्द करने योग्य है:—'रोज राते', 'हुँ, 'हुँ साभलु छु', 'हठ' आदि रचनाओ मे दृश्यमान और श्रव्य—विज्युअल और ऑडिटरी—दोनो प्रकार के प्रतीक प्राप्त होते है। 'प्रत्यञ्चा' मे कवि के शब्द अजीब अर्थ-संक्रान्ति का अनुभव कर रहे हैं। हाँ, व्यवहार के शब्दों की शक्तियो का कविता मे अतिक्रमण होना चाहिए, किन्तु किस हद तक ? भारतीय पौराणिक प्रतीक—mith के विशिष्ट प्रयोग तथा नये प्रतीको के कारण ये रचनाएँ मर्यादित पाठको के लिए ही है।

Pure Poetry के प्रवर्तको मे एक फ्रेंच प्रतीकवादी कवि का यह कथन श्री सुरेश जोषी ने आत्मसात् कर लिया है—'Poetry is not made of ideas, but of words'—कविता खयालो से नही, शब्दो से बनती है। कविता मे विषय का महत्व नही है। बात ठोक है क्योकि हिमालय पर लिखने से कोई रचना भव्य हो जाएगी, इसकी किसी कवि को पूर्व प्रतीति नही होती। परन्तु जो कुत्सित जगत के विषय है, उन्ही पर लिखने से कविता सिद्ध होगी, इस भ्रान्ति से श्री सुरेश जोषी मुक्त नही है। मतलब कि उनकी रचनाएं विषय के चुनाव की दृष्टि से अधिक महत्व रखती हैं।

'प्रयञ्चा' को पढकर हम इस ज़माने के अजीबोगरीब दर्दों से वाकिफ होते है। कवि ने यहाँ यन्त्रयुग की पैदाइश के अनुकूल एक विद्रोही, दर्पपूर्ण, नास्तिक, भोगवादी, क्षणवादो, सशंक पात्र को उभारा है, जो तमाम रचनाओ के नेपथ्य में बैठे बैठे बोलता है। रोमाण्टिक कवियो की तरह पात्र की प्रवृत्ति भी भोग-परायण और मरणोन्मुखी है।

ये और नये तमाम अछादस रचनाकार मूल्यो के आदर्शों के विरोधी हैं। तथाकथित मूल्यो और कोरे आदर्शों का शुकपाठी उच्चारण तो किसी भी स्वातन्त्र्योत्तर कवि ने नही किया। हम 'जीर्णजगत' रचना देख चुके हैं। फिर भी लगता है कि इस नवजवान कवियो की निर्भीकता केवल नेतिवाचक नही हो सकती। इसके पीछे कोई विधेयात्मक बल होना चाहिए। तनिक विषयान्तर से बात करूं। श्री जे० कृष्णमूर्ति ने बार-बार कहा है कि जो कुछ कहा गया है, उसको बिना सोचे-समझे स्वीकार कर लेने से हमारी रचनात्मक शक्तियाँ कुण्ठित हो जाती है। हम अपने आसपास कल्पित आदर्शों के भयजन्य विश्व खड़े कर लेते है, और फिर दब-दबकर

जीते है । अनेक मर्यादाओ के पालन मे जीवन की सहज गति लुप्त हो जाती है । और ऐसे आदर्शों का आरोपण करने वाले नेता लोग अपने आचरण से इन्ही आदर्शों की विडम्बना करते रहते हैं । यह सब देखकर आज का कवि आशंकित हो गया है । वह दूसरो के खोखले उद्‌गारो का अनुसरण करना नहीं चाहता । जिस बात की उसे प्रतीति नही है, उसके पीछे वह क्यो मारा मारा फिरे ? मनुष्य को अब ऐसे आसनस्थ पथप्रदर्शको की आवश्यकता नही है । आवश्यकता है, स्वतंत्र व्यक्तित्व वाले मनुष्यो की जो अपनी बात को स्वयं समझने की कोशिश करें । दूसरों के दिये हुए उत्तरों को अपने प्रश्नो का हल समझकर स्वीकार कर लेने में सूक्ष्म प्रवंचना पडी हुई है । पुरानी आस्थाए टूट गई है और नई आस्थाएं जगी नही हैं, इसलिए आज का कवि संदिग्धता का अनुभव कर रहा है ।

वेदना का गीत गाने मे ये कवि गौरव नही मानते, वेदना को विवशता समझते हैं, अत वे अक्सर कटु और तीखे हो बैठते है । स्वदेश या विदेश की प्रवृत्तियो पर कविता लिख बैठे, इस कदर ये कभी प्रभावित नही होते । मन की गहरी और सूक्ष्म हलचल के अंकन मे इनकी रुचि है और इसके लिए वे उपेक्षित पदार्थों को प्रतीक बनाते है । भद्र और कुत्सित का, दिव्य और दुरित का, सुन्दर और असुन्दर का भेद उनकी दृष्टि मे नही है क्योकि वे दृष्टि के होने मे ही विश्वास नही करते । चेतना के सकल स्फुरायमाण अंशो को अभिव्यक्ति मिल रही है, इस अन्दाज से ये कवि अपने तमाम सवेगो को व्यक्त करते है : अभिधा का ये लोग विरोध करते है, किन्तु स्वयं अनेक बाते निरावरण कहने मे सार्थकता का अनुभव करते है । इन कवियो मे कभी-कभी लगता है कि शैली का स्थान 'फैशन' ने ले लिया है और अधिकाश मे नये उन्मेश की जगह प्रयोगदास्य ही लक्षित होता है ।

इस तरह अछांदस रचना के विषय मे अभी यहाँ संदिग्ध स्थिति बनी हुई है । तीन-चार साल में ही, इस विधा ने (चाहे नेतिवाचक ढंग से ही) पाठको का ध्यान आकृष्ट किया है । इन उत्साही कवियो मे कुछ शक्तिशाली भी है । उनका उज्ज्वल भविष्य संभव है यदि वे स्वस्थता, दृष्टि तथा अनुशासन को स्वीकार करे । परन्तु कठिनाई यह है कि कुछ तो मुक्त छंद को छंदमुक्ति समझकर दौड आये है । वे नहीं जानते कि छंद के मोटे नियमो की अपेक्षा बारीक लय को हासिल करना मुश्किल है । अर्थानुदेशी अंतर्लय का भी अभाव देखकर लगता है कि ये कवि कविकर्म के प्रति गंभीर नही है । असंगत प्रतीको का ढेर खड़ा कर देने से कविता सिद्ध नही होती । कविता कान का विषय है इसलिए अर्थ ग्रहण करने से पूर्व हमे शब्द की ध्वनि स्पर्श करती है । अर्थ के संवाहक के रूप मे नाद सौन्दर्य की उपासना कवि के लिए श्रेयस्कर है । दो शब्दों के बीच संवाद जगाने के लिए लय अनिवार्य है ।

लय का यह लाभ श्री सुरेश जोशी और श्री गुलाम मोहम्मद शेख ने उठाया है। जल की तरलता यदि हमारे निजी जीवन मे नही है तो छंद मे कहाँ से आएगी ? स्थल की अचंचल स्थिति का अंकन श्री सुरेश जोशी कुछ रचनाओ मे कर सके है। इन दोनो कवियों की कृतियो में कला का अनुशासन प्रवर्तित है। 'अंधकार अने हुं' तथा 'जेसलमेरना खंडियर' नामक कविताओ में श्री शेख ने बारीकी को पकडकर मूर्त करने की तथा ध्वनि, रंग का परस्पर संक्रमण करने की क्षमता दिखाई है। दूसरी रचना मे इतिहास को सजीव किया है।

यहाँ हम श्री सुरेश जोशी की रचना देखें जिसमे एकाँत को विभिन्न आकार देने वाले उपमान देकर दृश्यमान बनाया गया है। सूक्ष्म पदार्थों का परिपार्श्व खडा करके एकान्त को स्पर्श-क्षम बनाया गया है। एकान्त मे विभिन्न अर्थ-छायाएँ भरने का कवि का कुशल संविधान देखिये :

मैं तुझे देता हूँ एकान्त।
हास्य की भीड़ के बीच एकाध तनहा आँसू,
शब्द के कोलाहल के बीच एकाध बिन्दु मौन,
अगर तुझे हिफाजत करनी है तो
यह है मेरा एकान्त।
विरह जैसा विशाल,
अन्धकार जैसा घन,
तेरी उपेक्षा जैसा गहरा।
जिसका गवाह नही सूरज
नही चाँद।
ऐसा निहायत एकान्त।
ना, भड़कना मत।
नही छू गई उसे मेरी छाया,
नही छिपाया उसमे मैंने अपना शून्य,
यह एकान्त जितना मेरा
उतना ही दो दरख्तो का,
उतना ही सागर का,

ईश्वर का।

यह एकान्त
नही है हमारे शून्य की रमणभूमि
नही है हमारे विरह की विहारभूमि
निपट एकान्त
मैं तुझे देता हूं एकान्त।

रचना के उत्तरार्ध में श्री सुरेश जोशी ने इनकार का विधेयात्मक उपयोग किया है और इस तरह एकान्त की रिक्तता को उभारा है। एकान्त मे दूसरा व्यक्ति उपस्थित नही होता, यहाँ दूसरा उपस्थित है बल्कि कवि उसे सम्बोधन कर रहा है। सम्बोधन पद्धति का कुशल प्रयोग कवि कर पाये हैं। इन सब विरोधो की सहायता से एकान्त को अंकित किया है। परिणामस्वरूप सम्बोधन करने वाला पात्र भी निर्मोही, सवेगशून्य, उदासीन नजर आता है।

श्री सुरेश जोशी और शेख के अतिरिक्त श्री सितांशु यशश्चन्द्र और लाभशंकर ठाकुर भी आशास्पद हैं। श्री प्रासन्नेय, राधेश्याम शर्मा और श्रीकांत शाह की रचनाएं संग्रहीत हुई हैं। आदिल मंसूरी, मनहर मोदी, प्रबोध परीख, सुभाष शाह, भरत ठक्कर. मणिलाल देसाई, ज्योतिष जानी आदि अनेक उत्साही नवयुवक इस क्षेत्र में उद्यम कर रहे है।

(रघुवीर चौधरी)

●●●

आधुनिक पंजाबी कविता की प्रवृत्तियां

●

पंजाबी कविता में आधुनिक चेतना अथवा जागृति का प्रवेश उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम दशक के लगभग हुआ। इसके पूर्व पंजाबी कविता में शृंगार वर्णन की ही प्रधानता थी। वह शृंगार कही तो आध्यात्मिक रूप ग्रहण कर लेता था, कहीं सामाजिक धरातल पर उतर कर विशुद्ध शरीरी रूप में अभिव्यक्ति का मार्ग खोज लेता था। यह स्थिति ग्यारहवीं शताब्दी (बाबा फरीद) से लेकर इसी सदी के पूर्वार्द्ध या उसके बाद तक रही। पंजाबी में इसको 'रवायती पर-

परम्परागत कविता धारा' का नाम दिया गया है। किन्तु यह परम्परा हिन्दी की भाँति रीति-ग्रन्थो पर आधारित नही थी, वरन् भाव, छन्द और व्यंजन शैली तक ही सीमित थी। ग्यारहवी शताब्दी से लेकर उन्नीस सौ तक को कालावधि मे जितना साहित्य रचा गया, उसमे कला की दृष्टि से आध्यात्मिक कविता का ही मूल्य अधिक बैठता है।

बीसवी शताब्दी से पूर्व पंजाबी मे लिखने वाले दो प्रकार के व्यक्ति थे। एक संत अथवा फकीर, जो जनजीवन से सम्बन्धित थे। दूसरे वे व्यक्ति, जो विशेषकर सामान्य या ग्रामीण जनता के लिए लिखते थे। कुछ आध्यात्मवादी संतो को छोड़ कर प्रायः सभी अनपढ व्यक्ति थे। सन् १६०० तक पंजाब का पढा लिखा व्यक्ति पंजाबी को गंवारू भाषा समझता था। इसलिए पंजाबी साहित्यकार इस समय तक वृज भाषा में ही साहित्य-साधना करते रहे। उन्नीस सौ तक ही नही, अभी कुछ दिन पूर्व तक पंजाबी के साहित्यकार अपनी मातृभाषा को छोडकर उर्दू की शरण लेते रहे है। उर्दू साहित्य मे अधिक योगदान पंजाबियो का रहा है।

भाई वीरसिंह ने सर्वप्रथम शिक्षित कहे जाने वाले पंजाबियो के हृदय मे पंजाबी भाषा के प्रति श्रद्धा का बीज बोया। पंजाबी को साहित्य मे प्रतिष्ठा देने के साथ भाई वीरसिंह ने पंजाबी कविता को नया मोड़ दिया, जिससे हम उन्हें आधुनिक युग का जन्मदाता मानते हैं। उन्होने कविता को रवायती अर्थात् परम्परा के सीमित घेरे से निकाल कर आधुनिकता का रूप दिया। यदपि उनका भावजगत प्रधानतः शान्ति प्रधान श्रृंगार ही रहा, किन्तु इसके साथ उन्होने नैतिक-उपदेशात्मकता तथा देश प्रेम को भी कलात्मक रूप मे व्यक्त किया। भाई वीरसिंह तथा उनके समकालीन कवियो मे यही आधुनिक परम्परा व्यापक रूप मे प्रस्फुटित हुई। उन्होने एक-मात्र भावजगत को हो नई चेतना नही दी, वरन् कविता को युगबोध के साथ जोड़ कर सामाजिक धरातल पर खडाकर दिया। उन्होने नई चेतना के साथ छोटी कविता, भावात्मकता, नवीन शिल्प एवं नया छन्द-प्रबन्ध भी दिया, जिससे पंजाबी कविता स्थूलता से निकल कर सूक्ष्म भाव व्यजना तथा मार्जित शैली का युगान्तर-कारी रूप धारण कर गई। भाई वीरसिंह यद्यपि स्वयं आध्यात्मिक परिधि से बाहर नही निकल सके पर उन्होने औरों के लिए मार्ग अवश्य प्रशस्त कर दिया। जिसका परिणाम यह हुआ कि धनीराम यात्रिक ने पंजाबी कविता मे पंजाबी संस्कृति, देश-प्रेम व्यापकता के साथ चित्रित किया। पंजाबी कविता की इस नई चेतना के पीछे पाश्चात्य सभ्यता, अंग्रेजी साहित्य तथा तात्कालिक राजनैतिक, धार्मिक तथा सामाजिक आन्दोलन का गहरा हाथ है। पंजाब में उन दिनो राजनीतिक क्षेत्र में लाला लाजपतराय,

सरदार अजीतसिंह आदि का देशभक्तिपूर्ण आन्दोलन चल रहा था, धार्मिक क्षेत्र मे सिंहसभा की अकाली लहर अपने शिखर पर थी। कुछ छिटपुटी सामाजिक लहरें भारतीय जीवन या पंजाब के जनजीवन को प्रभावित कर रही थी, जिनका प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष प्रभाव तात्कालिक पंजाब साहित्य पर पडा। इन्ही आन्दोलनो के बीच पंजाबी कविता में जो व्यक्ति सबसे अधिक उभर कर आया, वह था प्रो० पूर्णसिंह। उनकी कविता फार्म की दृष्टि से पूर्ववर्ती तथा समसामयिक कवियो से भिन्न कोण लेकर आई। प्रो० पूर्णसिंह की मुक्तक कविता मे एक मुक्त वातावरण था। वारस के बाद पंजाबी कविता मे पंजाबी संस्कृति की सम्भवतः सब से अधिक तथा व्यापक अभिव्यंजना हुई।

१९३० तक आते आते कविता मे एक नयी धारा का जन्म हुआ, जिसको रोमाण्टिक धारा का नाम दिया गया है। इस समय के प्रमुख चार कवि हमारे सामने आये। मोहनसिंह, बाबा बलवन्त, अमृता प्रीतम और सफीर। ये सब कवि मूलतः रोमाण्टिक तथा प्रेम के कवि है। बाबा बलवन्त भी किसी सीमा तक शृंगारिक कवि कहे जा सकते है। इनको प्रायः सभी पंजाबी आलोचक असफल प्रेम का कवि कहते है। वास्तव में ये कवि भोग्य आत्या है (बाबा बलवन्त को छोडकर)। मेरी नजर मे इनकी प्रेम प्रधान कविता कभी न तृप्त होने वाली वासना की अभिव्यक्ति है। मोहनसिंह की शृंगारिकता पर उर्दू की शृंगारिक भावना का इतना गहरा प्रभाव है कि उसके नीचे मोहनसिंह का अपना व्यक्ति दब सा गया है। इसीलिए मोहनसिंह का भाव जगत निज का न होकर उर्दू कविता का भाव जगत है। उनकी गजलें तो बहुधा उर्दू गजलों की छाया मात्र या अनुवाद मात्र लगती हैं। अमृता प्रीतम का अध्ययन क्षेत्र सीमित होने के कारण उनकी कविता उर्दू तथा अन्य भाषाओं के प्रभाव से बची रही और व्यक्तिगत अधिक हो गई। मौलिकता की दृष्टि से मैं इसको अमृता की सफलता ही मानता हूँ। इसी कारण उनका व्यक्तित्व किसी प्रभाव के नीचे दब नही सका, किन्तु गहराई तथा व्यापकता का उनमें अभाव ही रहा। उर्दू प्रभाव के कारण जहाँ मोहन अपनी कोई एक शैली निर्धारित नहीं कर सके, वहाँ अमृता प्रीतम सफल रूप में अपनी शैली को एक सीमा तक अवश्य ले गई। प्रीतमसिंह सफीर की कविता एक आध्यात्मिक शृंगार की कविता है। जीवन मे यद्यपि वह भौतिक प्रेम से पीड़ित रहे किन्तु उन्होंने इस इन्द्रिय प्रेम को अतीन्द्रिय रूप दे दिया। वह इसको घसीट कर आध्यात्मिक क्षेत्र मे ले गये, जिससे वह रहस्यवादी कहलाये। बाबा बलवंत की स्थिति इन तीनो कवियों से भिन्न रही। उनका काव्य जगत शृंगार तक ही सीमित नहीं रहा। यह आरम्भ में ही अनेक सामाजिक पक्षों को एक साथ लेकर चले।

किन्तु प्रेम व्यंजना की दृष्टि से वह हिन्दी के छायावादियो के समीप रहे। बाबा बलवंत न प्रेम मे सफल रहे, न ही उन्हें प्रेम मिल सका। उनके हृदय मे अवश्य एक प्रेम की आग सुलगती रही, जिसे उन्होने हिन्दी छायावादी कवियो के प्रभाव के कारण अतीन्द्रिय रूप दे दिया। बाबा बलवंत अपनी कविता के प्रति अधिक ईमानदार रहे। उन्होने पंजाबी कविता को भावुकता की परिधि से निकाल कर बौद्धिक रूप दिया। बौद्धिकता के कारण उनकी व्यंजना शैली भी अधिक लाक्षणिक बन गई। इसी दृष्टि से बाबा बलवंत के योगदान को (पंजबी कविता को) मैं स्तुत्य मानता हूँ।

रोमाण्टिक काव्य-धारा के दिनो मे प्रगतिवादी काव्य धारा का भी प्रचलन हुआ। सभी रोमाण्टिक कवि इस धारा की ओर उन्मुख हो आये; मोहनसिंह, बाबा बलवंत, अमृता प्रीतम, संतोखसिंह धीर आदि। ये मूलतः रोमाण्टिक तथा प्रेम के कवि थे इसलिए इनकी प्रगतिवादी नाम की रचनाएँ 'नारा' बन कर रह गईं। इन्होने मार्क्स के दर्शन की गम्भीरता को नष्ट कर दिया। यह काव्य-धारा जितने ज़ोर से पंजाबी में वही, उतना वेग किसी भी धारा मे नही आया। इस कविता-धारा ने साहित्य को कोई स्थायी निधि नही दी। इस क्षेत्र मे केवल बाबा बलवंत अधिक चेतन रहे। इन कवियो के पश्चात् इन्ही के ढर्रे पर चलने वाले कुछ कवि और आये। उनमे डाक्टर हरिभजनसिंह, प्रभजोत, ईश्वर चित्रकार, गुरवचन रामपुरी, सुरजीत रामपुरी, संतोखसिंह धीर, अजायब चित्रकार आदि प्रमुख है। सबके सब शृंगारिक परम्परा को या तो आगे बढ़ाते रहे या उसी का अनुकरण करते रहे। शिवकुमार बटालवी इसी परम्परा के कवि है, किन्तु उनकी पीडा ने तथा उनके आंचलिक मोह ने शृंगारिक होते हुए भी उन्हें थोड़ा पृथक् कर दिया। उनकी पीडा अपनी है, अभिव्यक्ति के साधन सब पंजाबी कवियो से भिन्न आंचलिक हैं। वह प्रधानतः गीतकार है। इन कवियो मे डाक्टर हरिभजनसिंह शृंगारिक परम्परा के कवि होते हुए भी पृथक् है। उनकी दृष्टि रोमाण्टिक तथा सौन्दर्यवादी है। वह जीवन के उन्ही अनुभवों को कविता का रूप देते है, जो बाह्य तथा आन्तरिक दृष्टि से सौन्दर्य की सीमा के भीतर आते है, या यूँ कह सकते हैकि वह जीवन के घृणित-वीभत्स-अनुभवो को कला के लिए घातक समझ कर काल्पनिक सौन्दर्य-लोक की सृष्टि करते है। इसीलिए उनकी कविता की प्रतीक तथा अलंकारयोजना किरण, इन्द्रधनुषी बादल, फूल, पत्ती, सुगंध अर्थात् प्राकृतिक क्षेत्र की सीमित परिधि मे घिर गई है। हरिभजन के व्यापक अध्ययन से जहाँ एक ओर उनकी शैली मे सूक्ष्मता तथा गरिमा आई है, वहाँ सहज रूप विलुप्त हो गया है। मैं ऐसी कविता को जीवन अनुभूति की कविता

नही कह सकता। यह एक प्रयत्न साध्य कविता है। प्रभजोत, अजायब, गुरुचरन रामपुरी, सुरजीत रामपुरी और संतोखसिंह धीर शृंगारिक परम्परा में अपना कोई पृथक व्यक्तित्व नही रखते। शृंगारिक कविता धारा १६३० के आस पास से लेकर १६५५ तक पाई जाती है। आज भी वह लुप्त नही हुई। किन्तु १६५५ के लगभग पंजाबी मे नयी कविता का जन्म हो गया।

नयी पंजाबी कविता अंग्रेजी तथा हिन्दी कविता के प्रभाव का परिणाम है। यो तो पंजाबी मे नयी कविता का जन्म अभी कुछ दिन पूर्व १६५५ के लगभग हुआ, किन्तु यह प्रश्न सामने है कि इसके जन्म के कारण क्या है ? क्या ऐसी परिस्थितियाँ यहाँ घटित हुई है ? अभी नयी कविता के आलोचको के पास तथा साहित्यकारो के पास इसका कोई निश्चित उत्तर नही है। हिन्दी और पंजाबी के सभी साहित्यचेता परिस्थितियो को ही इसके जन्म का कारण मानते है। यह एक नितान्त भ्रान्त धारणा है। १६४६ मे तो क्या, अभी भी भारत का वातावरण नयी कविता के अनुकूल नही। दो एक शहरो की बात अलग रही। वास्तव मे हिन्दी मे नयी कविता के जन्म का कारण प्रधानतया अंग्रेजी की कविता है। कुछ सीमा तक पाश्चात्य दर्शन के अध्ययन को भी स्वीकार किया जा सकता है। हिन्दी, पंजाबी के जो जो कवि—आलोचक परिस्थितियो को मूलभूत कारण घोषित कर रहे है, उनका यह प्रयास नयी कविता को भारत के वातावरण के अनुकूल सिद्ध करना ही है, और कुछ नही।

पंजाबी नयी कविता इस समय अपनी उसी अवस्था मे है जिसमे आज की नयी हिन्दी कविता जी रही है। पंजाबी मे प्रयोगवाद की अवस्था नही आई, जिसका भार हिन्दी कविता को सोलह सत्रह साल उठाना पड़ा। इसका प्रथम श्रेय पंजाबी के साहित्यचेता कवियो को है। अंग्रेजी तथा हिन्दी की कविता पंजाबी कविता की स्थिति निर्धारित करने मे सहायक सिद्ध हुई है। यह पंजाबी कविता के लिए सौभाग्य की बात है। इसी कारण से पंजाबी को अपनी स्थापना के लिए वह संघर्ष नही करना पडा, जितना संघर्ष हिन्दी कविता को करना पडा। किन्तु पंजाबी की नयी कविता के आलोचक अभी प्रयोग की अवस्था मे ही भटक रहे है। वे ऐसी कविता को भी नयी कविता के क्षेत्र मे घसीट लाते है जैसे कोई माखनलाल चतुर्वेदी, मैथिलीशरण गुप्त तथा सुमित्रानन्दन पंत को नयी कविता का कवि मानने लगे। पंजाबी नयी कविता के आलोचको ने अमृता, मोहन सिंह व डा० हरिभजनसिंह को भी प्रयोगवादी अर्थात् नया कवि मान लिया। मै इनकी सूझ को देखकर सोचता हूँ कि यदि वे रोमाण्टिक कवि नये कवि है तो फिर बेचारे फकीर गुरु नानक ने कौनसा अपराध किया है कि उन्हें छोड़ दिया गया है। आलोचक ही नही, बहुत से

नये-पुराने कवि भी नयी कविता में दिग्भ्रम उत्पन्न कर रहे हैं। इतना सब कुछ होने के उपरान्त भी कुछ नये कवि नयी कविता के मूल तत्व को परख कर इसके निर्माण मे लगे है।

नयी पंजाबी कविता मे एक और उपयोगी बात घटित हुई है जिसको मै पंजाबी कविता के लिए सौभाग्य की बात ही मानता है। वह है पंजाबी नयी कविता पर मानवतावाद के नारे का बोझ न लादना। हिन्दी नयी कविता के कुछ आलोचको ने नयी कविता की प्रतिष्ठा बढाने के लिए 'मानवतावाद' को उसके गले जबरदस्ती बाध दिया है जैसे छायावाद के अन्तिम दिनो मे छायावाद के साथ 'सर्वात्मवाद' को जोड दिया गया था। कविता 'वाद' के सहारे नही जीती, न किसी वाद से उसकी कीमत बढती है। कविता की उच्चता या श्रेष्ठता तो उसके आंतरिक कथ्य मे है, वही कविता का सत्य है। पंजाबी की नयी कविता यदि पूर्ववत् इसी दिशा मे आगे बढती रही तो वह अपने वर्तमान में ही साहित्य की स्थायी निधि बन जायेगी। यह उत्तरदायित्व पंजाबी की नयी कविता के प्रबुद्ध कवियो पर है। पंजाबी का आलोचक तो अभी प्रयोग में फँसा हुआ है।

पंजाबी की नयी कविता मे सबसे प्रमुख स्वर 'व्यक्ति वैशिष्ट्य' का है। पंजाबी की रोमाण्टिक काव्यधारा भी मूलतः व्यक्तिवादी ही रही है। किन्तु इसकी व्यक्तिवादिता में तथा नयी कविता के 'व्यक्तिवैशिष्ट्य' मे यही अन्तर है कि रोमाण्टिक कवियो की व्यक्तिवादिता वर्गगत अधिक थी किन्तु नयी कविता का व्यक्ति-वैशिष्ट्य कवि के अपने व्यक्ति तक सीमित है (सबका व्यक्ति है)। इसी कारण 'अमृता प्रीतम' की पीड़ा मे तात्कालिक नारी वर्ग की पीड़ा का स्वर है और नये कवियो में उनके अपने अपने व्यक्ति की अनुगूंज। इस अन्तर के कारण दोनो धाराओ की अभिव्यक्ति-पद्धति मे भी वैषम्य है। रोमाण्टिक धारा की अभिव्यक्ति में समानता है, नयी कविता की अभिव्यक्ति मे परस्पर भिन्नता या पृथकता है। इनमे से कविता के लिए कौनसी उपयोगी है, मै यहाँ इसके बारे में कुछ न कह कर यही कहूंगा कि समान-अभिव्यक्ति पद्धति मे कवि का व्यक्ति तथा व्यक्तित्व पूर्णतः व्यक्त नही हो पाता और व्यक्ति वैशिष्ट्य पद्धति मे व्यक्ति तथा व्यक्तित्व के विकास के लिए पूर्ण अवकाश रहता है।

नयी कविता में दूसरा स्वर 'असंतोष' का है। यह असंतोष व्यक्तिगत अपूर्णताओं, विफलताओ, व यान्त्रिक जीवन की विघटनकारी विसंगतियो के कारण उत्पन्न हुआ है जिसके कारण नयी कविता मे एकांतिक कटुता अधिक व्यक्त हुई है। स्वर्ण तथा सुखवीर में इस भावना का स्पष्ट रूप दिखाई देता है। जगतार में तो एकांतिक कटुता सबसे अधिक तीक्ष्ण है। इन

सब की एकांतिक कटुता विभिन्न मनःस्थितियों के रूप मे अभिव्यक्त हुई है।

असंतोष के साथ अतृप्त काम तथा सैक्स-सम्बन्धो में विघटित होने वाली मनःस्थिति के अनेक रूप भी मिलते हैं। चेतन उपचेतन के द्वन्द्व की सहज और विचित्र क्रियाएँ मोहनजीत मे अधिक है।

पंजाबी नयी कविता मे व्यंग्य का अभाव है। यूं कहना चाहिए कि दो एक कवियों को छोडकर व्यंग्य है ही नही। जिनमे है (जैसे, गुरुचरण रामपुरी), वे रोमाण्टिक काव्यधारा से बह कर आये है। मैं इसको नयी पंजाबी कविता के सौभाग्य की बात मानता हूँ। क्योकि व्यंग्य से कविता मे तीक्ष्णता तो आती है, पर कविता के प्रभाव की गहराई कम हो जाती है। सहज तथा सूक्ष्म व्यंग्य को कविता का विरोधी न मानकर पूरक ही मानता हूँ।

जैसा कि मैं ऊपर लिख आया हूँ, प्रत्येक कवि मे व्यक्ति-वैशिष्ट्य है। इसी कारण इनकी कविता की आकृति एक दूसरे से भिन्न है।

सुखबीर की कविता नवीन, तथा दैनिक जीवन के रूपाभास की कही अस्पष्ट, जटिल तथा कही वास्तविक अभिव्यक्ति है। इधर कुछ कविताएँ अरूपवादी शैली को आधार बना कर लिखी है। उसकी कविता का छन्द मुक्तक है छन्द की लय मे भाव संहिति न्यून है।

तारासिंह मे साकेतिक अर्थ-व्यंजना है। वह जीवन के घृणित जीवन-स्तरो की अपेक्षा जीवन की सहज तथा स्वाभाविक व्यजना के पक्ष मे है। उन्होने अपनी कविता मे नवीन प्रतीको तथा बिम्बो को संजोया है। व्यक्त भाव तथा भाषा की सानुरूपता उनकी कविता का विशेष गुण है।

स्वर्ण अहसास के कवि है। उनकी कविता 'क्षण' मे जीती है। इसीलिए उसमें मूड-खण्डों की भरमार है। जीवन की व्यापकता न सही असंतोष, एकान्तिक कटुता, अजनबीपन, कुंठा आदि अवश्य उनकी कविता के मूल स्वर हैं। वस्तुतः यही उनके अपने जीवन का क्रम है। शैली उनकी अपनी विशेषता लिये दिखाई देती है। यो शिल्पगत् चातुर्य उनकी कविताओ में विशिष्ट है।

जगतार की कविता मे फ्रस्ट्रेशन, कटुता तथा पीडा का आधिक्य है। इसका सामाजिक धरातल भी है और इससे मुक्ति पाकर नव्य समाज की स्थापना का प्रपच भी है। वह घोर निराशा मे आशा का आँचल ओढे रहते है। जगतार का आशावाद (को मार्क्सवाद की देन है) बहुधा उनकी कविता पर बोझ प्रतीत होता है।

मीशा की कविता मे धार है। उनकी कविता भावुकता से मुक्त है। वैसे कविता की लय गद्यात्मक है, भाषा का स्वर भी। उसमे नये प्रतीको का संयोजन अवश्य पाया जाता है।

कृष्ण अशान्त नयी कविता में दार्शनिकता का प्रणयन करने मे सफल हैं। उन्होंने आज के जीवन की विषमताओं को समीप से देखकर तटस्थ द्रष्टा के रूप मे उनका चित्रण किया है। आधुनिक काव्य के विभिन्न रूपों का सशक्त चित्रण उनकी कई कविताओ मे दिखाई देता है। दूसरी ओर सतिकुमार ने परम्परा से हटकर यन्त्रयुग से विगलित व्यक्ति के स्वानुभूत चित्र खीचे है। एक पूर्ण क्षण मे जिये अपूर्ण जीवन की सांकेतिक अभिव्यक्ति उनकी अधिकांश कविताओ का वैशिष्ट्य है। नैतिक सम्बन्धों के प्रति प्रच्छन्न अनास्था, औपचारिकता की अवास्तविकता पर कटु, परन्तु सूक्ष्म व्यंग्य द्वारा सतिकुमार ने अपनी कविताओं मे इधर जीवन के नये धरातलो को छुआ है। व्यक्ति-अहं के साथ जीवन-सत्य की स्वीकृति निश्चय ही पंजाबी नयी कविता की एक नयी दिशा का संकेत है।

(शाँतिदेव)

●●●

भारतीय अंग्रेज़ी कविता : एक अनुलेख

●

भारतीय अंग्रेज़ी कविता को १९४७ से अब तक का लघु समय प्रयोग और विस्तार के लिए मिला है। इस काल मे विकास की यह अवधि बड़ी महत्वपूर्ण है जिसमें कवियों ने एक नयी वाक्शैली की खोज की है। यह बात किसी आधुनिक आलोचना-ग्रंथ से उद्धृत प्रतीत हो सकती है किन्तु कोई भी कह सकता है कि ऐसा है नही। यह विकास एक लघु परम्परा को बनाये रखने के संदर्भ मे काफी महत्वपूर्ण है, यद्यपि राघवेन्द्रराव ने सरोजिनी नायडू, तारुदत्त और श्री अरविन्द को अंग्रेज़ी के 'सर्जक' न मान कर 'कारीगर' माना है। इनकी शैली पर किसी को आपत्ति नही है। आपत्ति है तो उस चेतना के अभाव पर, जिसके कारण तारुदत्त "गुलाबों को जगाने वाले क्षण क्या तुझे नही जगायेंगे" जैसे चटकीले भावुक गीत लिखती चली जाती हैं, सरोजिनी नायडू जान-बूझ कर मनोहर भारतीय बिम्बो का प्रयोग करती है और अरविन्द सर्वश्रेष्ठतावादी हिन्दू आध्यात्म से नाता जोड़ते हैं (उनके अनुयायियों का दावा है कि अरविन्द ने आत्मवाद का प्रयोग कर उसे गहरी काव्योचित प्रतीकात्मकता मे ढाल दिया है।)

१९४७ के बाद किसी कवि मे यह बात नही मिलती। यह एक महत्वपूर्ण आन्दोलन है, क्योंकि वस्तु और शैली की दृष्टि से ये कवि एक विशिष्ट वर्ग के

है। यह कहने के साथ ही कई आपत्तियाँ उठ खडी होती है कि ये कवि कलकत्ता, मद्रास, बम्बई और दिल्ली के शहरी कवि है, कि इनको जीव-चेतना मे एक छिछली अन्तर्राष्ट्रीयता का प्रसार और कृत्रिमता है, जो इन्हे जनसमुदाय से दूर ले जाती है; कि उनके विचार और प्रतिक्रियाएँ स्कूल-कालेजो मे पढी हुई 'Ode to Nightingale' जैसी कविताओ से प्रभावित होती है; कि वे उस भाषा मे लिखते है जिसके विरुद्ध स्थानीय भाषाओं के क्षेत्र मजबूती से अड़े हैं; कि उनके कोई वास्तविक पाठक भी नही है, अतः अंग्रेज और अमेरिकन कवियो की उपेक्षा और भारतीयों की दूषित प्रशंसा उन्हे मिलती है; कि वे आधारहीन है, जैसे निराशा मे टंगे, बेरंगे 'मनी-प्लाण्ट !'

ये सब तर्क मान्य होकर भी विवादग्रस्त है। गत सोलह वर्षों मे ऐसा भी बहुत कुछ हुआ है जो एक आशामय स्थिति का प्रमाण है। डा० श्रीनिवास अय्यंगर ने १९४३ मे भारतीय अंग्रेजी साहित्य पर प्रकाशित पी० ई० एन० पुस्तिका मे लिखा था, 'मेरा विचार है कि हम चूहो के बिल मे है, जहाँ मृत व्यक्तियो की अस्थियाँ भी शेष नही है। हमारे पास न कोई निर्दशिका है, न काई विषय-सूचि, न कोई विश्वसनीय परिचय-पुस्तिका है, और न कोई भारतीय अंग्रेजी साहित्य का विस्तृत सर्वेक्षण।' १९४३ की इस पुस्तिका में केवल ७० पृष्ठ थे। १९६२ मे एशिया पब्लिशिंग हाउस ने डा० अय्यंगर की एक ६०० पृष्ठो की पुस्तक, 'Indian writing in English' प्रकाशित की, जिसमें स्वातन्त्र्योत्तर कविता के ही ५० पृष्ठ है। अंग्रेजी मे लिखने वाले भारतीय कवियो का सजीव व्यक्तिकरण असम्भ्रमित रूप से विकसित और भारतीय परम्परा में समन्वित होती कविता का प्रत्यक्ष प्रमाण है : अंग्रेजी का व्यवहार अधिकाधिक हो रहा है, जैसे वह भी भारतीय भाषाओ मे से एक है। और प्रभावशाली साहित्यिक क्षेत्रो की व्यूह-रचना के बावजूद यह तथ्य सी० आर० रेड्डी के शब्दो मे: 'भारतीय अंग्रेजी साहित्य भारतीय साहित्य से अलग नही है' विस्तृत रूप मे स्वीकार किया जा रहा है।

भारतीय अंग्रेजी कवि को ठीक-ठीक समझने के लिए यह ध्यान रखना आवश्यक है कि भारत की सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक परिस्थितियाँ कभी भी इंग्लैण्ड या अमेरिका जैसी नही रही। भारतीय संस्कृति एक 'गहराई' लिये हुए है, जिसे पं० नेहरू 'पुनर्लिखित पांडुलिपि' कहते है, और भारतीय साहित्य विविध रंगों का सामंजस्य है। इन रंगो में अंग्रेजी का हल्का-सा रंग पहले ऐतिहासिक रूप से और अब भावनात्मक रूप से एक अन्तर्राष्ट्रीयता और अभिजात्य वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। बार्थोलोम्यू का वेदनामय अन्त परावर्तन, साहा के सादे लाक्षणिक व्यग्य, इज्रकिएल की नंगी ईमानदारी, मॉरिस की रूमानी वेदना,

राघवेन्द्र राव के संयमित रंग और छलनाएँ, मेरी एरुलकर की उपचेतन की परिकल्पनाएँ, वी० डी० त्रिवेदी का 'न्यूरोटिक' प्रतीकवाद, प्रदीप सेन के तीखे और निष्कपट ईसाई मूल्य, केवलियन सियो की पीडा छिपाये हुए सरलता; ये सब परिपक्व प्रतिक्रियाओ के लक्षण हैं। ये शायद नगर-संस्कृति की प्रतिक्रियाएँ हैं, किन्तु सत्य होने के कारण कचोटने वाली है। 'क्वैस्ट' मे आधुनिक भारतीय अंग्रेजी कविता की समीक्षा करते हुए डेविड मैक्यूम्चियन ने लिखा था, 'ये अर्द्ध शताब्दी के कवि तरुण, अन्वेषी और वैयक्तिक हैं। अंग्रेज़ी उनकी अभिव्यक्ति का स्वाभाविक माध्यम है—कोई विदेशी भाषा नही, अपितु वह भाषा, जिसमें उनकी सवेदना अत्यत संतोषप्रद आकार ग्रहण करती है; वह भाषा, जिसमे वे प्यार करते हैं, जैसा श्री लाल का कहना है।' आगे उन्होने लिखा है, 'भारतीयो द्वारा अंग्रेजी मे लिखी गयी कविताएँ, इस बात का ठोस प्रमाण देती है कि ये परिपक्वता तक पहुँच रही है'।

(पी० लाल)

●●●

आधुनिक मलयालम कविता

●

अनुकरण युग के आचार्य राजा केरल वर्मा के समय से लेकर शुद्ध आत्मा की अभिव्यक्ति के आधुनिक युग तक की मलयालम काव्य-धारा की विस्तृत चर्चा करना यहाँ अनिवार्य मालूम नही होता। आधुनिक युग के काव्यकारो पर गत काव्य-प्रवृत्तियो का पूरा-पूरा प्रभाव पडा है, यह ठीक है। स्वर्गीय महाकवि श्री कुमारन आशान, उल्लूर और वल्लत्तोल आधुनिक मलयालम काव्य-जगत के सर्वाधिक प्रभावशाली कवि रहे हैं। इनके समय मुख्य रचनाएँ खण्ड-काव्य की कोटि मे आती हैं। कोमल और उच्च संकल्प, दार्शनिक विचार, स्वस्थ सर्गात्मकता, ये सब उनकी रचनाओ मे दर्शनीय विशेष गुण है। मगर इसी समय के अंतिम चरण मे श्री चंङ्पुषा कृष्ण पिल्लै की धूम थी। आप इतनी मधुर एवम् आकर्षक रचनाओ से मलयालम पाठको को हठात् आकर्षित कर सके। आप गान-गंधर्व कहलाने लगे और सर्व-साधारण के प्यारे कवि बने। आपका निधन १९४८ (सन्) मे हुआ। पर आज तक उनकी अमिट छाप मलयालम काव्य-धारा मे परिलक्षित है। उपर्युक्त कवियो की रचनाओ द्वारा सामाजिक, राष्ट्रीय, धार्मिक और सांस्कृतिक क्षेत्रो में ठोस स्पन्दन हो सका और पर्याप्त परिवर्तन आ सका।

सन् १९५० से लेकर मलयालम काव्य-कारो मे श्री जी० शंकर कुरूप का नाम सब से ऊपर मुखरित रहा। आज भी यही हाल है। श्री जी० शंकर कुरूप की रचनाएँ पाठको के अन्तर्मन को सचेत करके उसे सद्भावनाओं के ताजमहल मे प्रविष्ट करा देती है। आपकी काव्य-सरिता रहस्यवाद छायावाद, समन्वयवाद, चेतनतावाद, मानवतावाद आदि काव्योपम मार्गों का अनुसरण-अतिक्रमण कर चुकी है। और जहाँ से होकर बही, पूरे विश्वास के साथ और लक्ष्य पर स्थिर दृष्टि रखते हुए।

श्री वेण्णिकुलम गोपाल कुरूप मलयालम गीति-काव्य-युग के श्रद्धेय प्रथम कवि है। आपकी कविताओ मे ताल-लय का सुन्दर सामंजस्य दर्शनीय है। आधुनिक मलयालम कवियो मे आपका श्रेष्ठ स्थान है।

श्री पाला नारायणन नायर की रचनाओ मे दर्शनीय केरलीयता का भाव अन्य कवियो के समक्ष अलग अस्तित्व का माना जा सकता है। आप केरल की सीमा-मेखला को अपनी कविता के सहारे व्यापक बनाने का अजस्र परिश्रम करते हैं।

श्री वैलोप्पिल्ली श्रीधर मेनोन का अपना अलग काव्य-पथ है। वैज्ञानिक दर्शन की नीव पर सुन्दर कलात्मक अभिव्यक्ति करने मे आप विजय पा गये हैं। आपकी अधिकतर रचनाएँ संवेदनशील अनुभूतियो की उपज है। अदम्य काव्यात्मक प्रेरणा, स्वतन्त्र चिंतन, सच्ची परख आदि आपकी कविताओ की विशेषताएँ हैं।

जहाँ वैलोप्पिल्ली मानवता के वायुयान मे चढ़ कर समूचे जगत का भ्रमण करता है, वहाँ श्रीमती बालामणि अम्मा मातृत्व के काव्य-बिन्दु मे सारे जगत को केन्द्रित कर देती है। सारे स्पन्दनो का एकमात्र केन्द्र उस कवियित्री के लिए मात्र मातृत्व है। आपकी कविताओ मे दुरूहता को गुजाइश अधिक मात्रा में मिलती है।

श्री० पी० कुञ्जिरामन नायर की कविताओ मे आध्यात्मिकता की अधिकता है। उनकी कल्पना जैसी ऊँची उड़ान अन्यत्र दुर्लभ है। फिर भी रचनाएँ अतीव आकर्षक और मधुर है।

काव्यक्षेत्र मे किसी प्रकार के बाह्य एवं आभ्यंतर परिवर्तन न लाने वाले कवि हैं श्री० के० के० राजा। वही पुरानी छंदोबद्धता और वही पुरानी चिंतन-प्रणाली! मलयालम काव्य जगत मे आपका यह अकेला रहना निराला मालूम होता है। श्री० ओ० एन० वी० कुरूप और श्री वयलार रामवर्मा की रचनाएँ नवीन मलयालम काव्य-गति मे विशेष आकर्षक और लोकप्रिय सिद्ध हुई हैं। इनकी कविताएँ गेय तथा विप्लवपरक है। आज इन दोनो युवा-कवियो मे भाव जगत का पर्याप्त अंतर आ गया है। इनकी सृजन शक्ति भी अविरत है। श्रीमती सुगतकुमारी

ऐसी कवियित्री है, जिन्होने अपने लिए पृथक रास्ता ढूँढ निकाला है। उनकी कविताओ मे पीडा तथा व्यथा का सागर उमड पड़ा है। फिर भी उनमें गति है, जो जीवन की झलक दिखा जाती है।

मलयालम काव्य-जगत मे अन्य भारतीय काव्य मे दिखाई पडने वाली प्रमुख सारी प्रवृत्तियाँ मिलती है। भाव-पक्ष और कलापक्ष से सम्बन्धित परिवर्तनशील नवीन काव्य-रूप भी पाये जाते है। टी० एस० इलियट की अव्यवस्थित तथा टूटी हुई कल्पना से युक्त काव्य-रीति भी मलयालम मे स्थान पा रही है। इस दिशा में श्री० एन० वी० कृष्णवारियर, श्री एन० एन० कक्काड़, श्री अय्यप्प पणिक्कर आदि कवियो का परीक्षण चल रहा है। श्री कृष्णन नायर, चेरियान के चेरियान, जी० कुमारपिल्लै, पी० भास्करन आदि असंख्य कवि मलयालम काव्य-भारती की बराबर सेवा कर रहे है। जीवन के विविध पहलुओ का संकेत-निर्देशन करते हुए मलयालम काव्य-धारा नये-नये भावो और नये नये बाह्य रूपो और आयामो को अपनाने की चेष्टा कर रही है।

(एन० चन्द्रशेखरन नायर)

●●●

आधुनिक तमिल कविता

●

तमिल-काव्य की एक सुदीर्घ परम्परा रही है। तमिल मे काव्य-साधना बहुत ही प्राचीन काल से प्रारम्भ हुई थी। ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियो मे रचे गये महत्वपूर्ण काव्य-ग्रन्थ अब भी उपलब्ध है। काव्य-गुणो की दृष्टि से ये काव्य बहुत ही उच्चकोटि के हैं। तमिल की यह काव्य-धारा अबाध गति से प्रवहमान रही। विभिन्न युगो मे काव्य के वर्ण्य विषयों मे भी परिवर्तन होता रहा है। तत्कालीन राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक परिस्थितियो के अनुकूल काव्य की वर्ण्य वस्तु भी बदलती रहती है। संघकाल (ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियाँ) की तमिल कविता मे प्रकृति-प्रेम और वीरता, काव्य की वर्ण्य वस्तु रहा। उसके बाद की शताब्दियो का तमिल-काव्य भक्ति-भावना से ओत-प्रोत है। तमिल की यह भक्ति-काव्य-धारा कई शताब्दियो तक प्रवहमान रही। फलस्वरूप तमिल का अधिकांश काव्य भक्ति-रस स्निग्ध हो गया जिसे हम आधुनिक तमिल कविता कह सकते हैं, उसका आविर्भाव उन्नीसवीं शती के उत्तरार्द्ध से ही मानना उचित है। तमिल-काव्य के क्षेत्र में आधुनिक युग के प्रधान प्रवर्तक

श्री सुब्रह्मण्य भारती थे। भारती ने तमिल के काव्य क्षेत्र मे ही नही, बल्कि साहित्य के अन्य अंगो के क्षेत्रो मे भी नवीन युग का आरम्भ किया। भारती के आगमन के पश्चात् ही आधुनिक तमिल कविता की दिशा निश्चित हुई। भारती की काव्य-साधना महान् थी। यही कारण है कि आधुनिक तमिल कविता का प्रारम्भिक काल 'भारती-युग' के नाम से प्रसिद्ध हुआ है। कविता के क्षेत्र मे उन्होने क्राति मचायी थी। वह युग जन-जागरण का प्रारम्भिक काल था। भारती ने कविता की परम्परागत शैली को त्याग कर नये नये छन्दो में, जन-प्रिय भाषा मे, नये नये भावो एवं कल्पनाओ से भरी गेय कविताएँ रची। भारती-युगीन काव्य मे भाव, भाषा और छन्द, सभी मे प्राचीनता का परिष्कार और नवीनता का समावेश हुआ। भारती के पश्चात् तो अनेक कवि हुए है, जिन्होने भारती की कविता से प्रेरणा पायी है। आज तो तमिल कविता कानन मे अनेक सुकुमार फूल खिले है। भारती के समय से आधुनिक तमिल कविता की उत्तरोत्तर प्रगति हुई और काव्य के क्षेत्र मे बहुमुखी प्रवृत्तियो के दर्शन हुए।

जिस तरह आधुनिक हिन्दी कविता के क्षेत्र मे विषय की दृष्टि से विविधता और विभिन्न प्रवृत्तियो के दर्शन होते है, ठीक उसी तरह आधुनिक तमिल कविता की भी बहुमुखी प्रवृत्तियाँ रही है। आधुनिक हिन्दी कविता की जो प्रमुख प्रवृत्तियाँ रही है, वही करीब करीब आधुनिक तमिल कविता की है। हिन्दी काव्य-क्षेत्र मे विविध वादो का जन्म हुआ। छायावाद, रहस्यवाद, प्रगतिवाद आदि विभिन्न वादो के मूल मे जो तथ्य रहे है, उन सब के दर्शन आधुनिक तमिल-काव्य के क्षेत्र मे भी होते है। किन्तु अन्तर इतना ही है कि तमिल कवि अपने को जान-बूझकर किसी विशिष्ट वाद के सकुचित क्षेत्र मे बाँधना नही चाहता। साथ ही साथ यह बात भी दृष्टव्य है कि तमिल आलोचको ने भी विविध वादो के अन्तर्गत रखकर कविताओ का मूल्याकन करने की पद्धति नही चलायी। परन्तु यह बात अवश्य है कि आधुनिक तमिल कविता के क्षेत्र मे छायावादी रहस्यवादी प्रगतिवादी, प्रयोगवादी प्रवृत्तियाँ देखने को मिलती है। तमिल कवि के विषय मे यह कहना कठिन है कि अमुक कवि छायावादी है या प्रगतिवादी है। एक-एक कवि की कविताओ मे एक से अधिक वादो के दर्शन होते है।

यहाँ आधुनिक तमिल कविता की कुछ प्रमुख प्रवृत्तियो की चर्चा करेंगे। चूँकि आधुनिक तमिल कविता का जन्म भारती की कृतियो से माना जाता है, अतः भारती की कविताओ की प्रमुख प्रवृत्तियो पर प्रकाश डालना आवश्यक है। भारती की अधिकांश कविताएँ राष्ट्रीय भावनाओ से ओतप्रोत है। उनकी कविताओं मे देश-प्रेम, समाज-सुधार आदि विषयों का समावेश हुआ है। इस

कोटि की कविताओ की मूल-भावना है : देश-भक्ति । आधुनिक तमिल कविता की यह एक प्रबल प्रवृत्ति रही है । इस कोटि के कुछ कवियों ने केवल तमिल-भाषा और तमिल-संस्कृति का यशोगान करने से ही सन्तोष कर लिया है, किन्तु अधिकांश कवियो का दृष्टिकोण व्यापक रहा है । राष्ट्रीय-सांस्कृतिक कविता के रचयिताओ में सबसे ऊँचा स्थान भारती का ही है । राष्ट्रीय भावना की कविता के अन्तर्गत गाधी-दर्शन की भी अभिव्यक्ति हुई है । श्री रामलिंगम पिल्ले की कविताओं मे विशेष रूप से गाधी-दर्शन को बहुत सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है ।

हिन्दी की छायावादी कविताओ से साम्य रखनेवाली कविताएँ भी पर्याप्त मात्रा मे तमिल मे रची गई है और रची जाती है । परन्तु तमिल की इन कविताओं को 'छायावाद' की उपाधि नही मिली है । छायावादी कविताओ की सभी विशेषतायें उन तमिल कविताओं मे मिल जाती है । हिन्दी मे छायावादी काव्य का जो सामान्य स्वरूप स्वीकृत हुआ है, वही उन विशिष्ट करने का प्रयत्न किया है । छायावाद वास्तव मे एक विशेष प्रकार की भाव-पद्धति है । जीवन के प्रति एक विशेष भावात्मक दृष्टिकोण है । इस दृष्टिकोण का आधेय नवजीवन के स्वप्नों और कुंठाओ के सम्मिश्रण से वनी है । रूप-विधान अन्तमुंखी तथा वायवी है और अभिव्यक्ति है प्रकृति के प्रतीको द्वारा । छायावाद मे कवि विश्व के कण-कण मे प्राणो की छाया देखता है और उसमे व्यक्तिवादी भावनाएँ प्रकट की जाती है । उसमे विषय नही, स्वयं कवि और उसका राग-विराग प्रधान हो जाता है । छायावाद मे कवि की कल्पना या अनुभूति रहती है ।

जीवन को विषम परिस्थितियो के विपरीत उसे कल्पना-लोक मे सुख मिलता है। अनन्त स्वरूप प्रकृति के क्षेत्र मे वह खुलकर कल्पना का खेल करता है और छन्द का आवरण डालकर अपनी अभिव्यक्ति करता है । छायावादी कविता में कवि अपनी व्यथा-वेदना, सुख-दुख आदि को विश्व की व्यथा-वेदना, सुख-दुख के रूप मे रखकर सर्वग्राहक बनाता है । वह अपनी अनुभूति को प्रधान रखता है । छायावादी कवि प्रकृति का चेतन स्वरूप देखता है । वह प्रकृति को निर्जीव या कोरे उद्दीपन रूप मे नही मानता । उस पर कवि अपनी भावनाओ का आरोपण करता है । प्रकृति पर नारी-भाव के आरोप द्वारा या नारी के अतीन्द्रिय सौन्दर्य के प्रति अपने कोतुहलपूर्ण दृष्टिकोण द्वारा वह अपने अवचेतन मन मे हुई शृंगार-भावना प्रकट करता है । छायावाद की कोटि मे आनेवाली तमिल कविताओ के रचियताओ का भी यह सामान्य रूप रहा है । इस कोटि की कविताओ के रचियताओ मे अनेक तमिल कवियो के नाम लिये जा सकते हैं । मुख्य रूप से 'भारती दासन', 'कम्ब दासन', 'सोमु' आदि कवि उल्लेखनीय है ।

आधुनिक काल की कुछ तमिल कविताओ में रहस्यवाद की भी झलक मिलती है। रहस्यवाद जीवात्मा की उस अन्तर्निहित प्रवृत्ति का प्रकाशन है, जिसमे वह दिव्य और अलौकिक शक्ति से अपना शान्त और निश्चल सम्बन्ध जोड़ना चाहता है। रहस्यवाद हृदय की वह अलौकिक अनुभूति है, जिसके भावावेश में जीवात्मा अपने समीप और पार्थिव अस्तित्व से असीम और सूक्ष्म महत् अस्तित्व के साथ तादात्म्य का अनुभव करने लगता है। इस रहस्यवादी प्रवृत्ति से युक्त कुछ तमिल कविताएँ भी आधुनिक काल मे रची गयी है। योगी शुद्धानन्द भारती, देशिक विनायकम पिल्लै आदि कवियो की अनेक कविताओ मे रहस्यात्मक प्रवृत्ति देखने को मिलती है।

प्रगतिवादी कविताएँ भी पर्याप्त मात्रा मे आधुनिक काल मे रची गयी है। तमिल मे 'प्रगतिवादी' के लिए 'मुर्पोक्कु' शब्द प्रयुक्त होता है। 'मुर्पोक्कु' शब्द का साधारण अर्थ है 'आगे बढना'। तमिल मे 'प्रगतिवाद' से तात्पर्य 'मुर्पोक्कु' शब्द के साधारण अर्थ से ही है। हिन्दी मे भी प्रारम्भ मे प्रयोगशीलता का ही जोर रहा। फिर 'प्रगतिवाद' ने साम्प्रदायिक रूप प्रकट करना आरम्भ किया और वह काव्य 'प्रगतिशील' न रहकर 'प्रगतिवादी' हो गया। प्रगतिवादी मनोवृत्ति के मूल मे जो धारणा है, वह जीवन मे गतिशीलता ही है। यथार्थ मे जीवन, प्रगति ही का पर्यायवाची है। इसलिए उसे प्रत्येक क्षेत्र मे आगे बढने के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए। जीवन मे जीना चाहिए और जो कुछ जीवन के सामने है, वही सत्य है। अतः वस्तु-जगत् से आँखे मेरी नही जा सकती। वस्तु जगत से परे अध्यात्म अथवा परलोक आदि कुछ नही है। जीवन मे साम्य होना चाहिए। जीवन में साम्य के लिए समाज मे साम्य की आवश्यकता है। शोषक-वर्ग का घोर विरोध होना चाहिए। जीवन मे हेय और श्रेय दो पक्ष है, श्रेय का पक्ष प्रबल करने के लिए हेय का चित्रण भी होना चाहिए। प्रगतिवाद की इन मूल प्रवृत्तियो को लेकर तमिल मे अनेक कविताएँ रची गयी है और रची जा रही है। इस कोटि मे तमिल के अनेक तरुण कवि आते है।

हिन्दी मे 'प्रयोगवाद' के नाम से जिस प्रवृत्ति का जन्म हुआ, करीब-करीब वही प्रवृत्ति आधुनिक काल के कुछ तमिल कवियो की रचनाओ मे भी देखी जा सकती है। प्रयोगवादी कविता का मूल तत्त्व स्वभावतः ही काव्य विषयक प्रयोग अथवा अन्वेषण है। हिन्दी मे प्रयोगवादी कविता के नाम से जिन कविताओ की रचना हुई है उनमे पुरानी और नई भावना को ही उलट-पुलट कर सजाने की प्रवृत्ति है। उनमे प्रगतिवाद का विकृत रूप चित्रित हुआ है। ऊल-जलूल भाव और बेसिरपैर की शब्द-योजना मात्र है। लेकिन तमिल मे 'प्रयोगवाद' केवल काव्य विषयक नवीन प्रयोगो के अर्थ मे ही स्वीकृत हुआ है।

शिल्प के क्षेत्र मे नवीत प्रयोग करना ही तमिल की प्रयोगवादी कविता का लक्ष्य दीखता है। अनेक तरुण कवियों ने तमिल मे इस प्रकार के प्रयोगो का परीक्षण किया है। एक अन्य प्रकार की कविता भी तमिल में रची गयी है और रची जा रही है, जिसको हम 'वैयक्तिक कविता' कह सकते है। यह एक प्रकार से अतिशय आत्मपरक कविता है। इस कविता की अपनी अलग बिशेषता है। एक ओर जहाँ यह प्राचीन आत्म निवेदन पूर्ण काव्य से भिन्न है, दूसरी ओर छायावाद की प्रच्छन्न आत्माभिव्यक्तियो से भी अलग है। वैयक्तिक कविता का विषय आज के समाज की व्यक्तिगत समस्याएँ है। ये समस्याएँ मूलतः 'काम' और 'अर्थ' के चारो ओर केन्द्रित है। काम-परक कविताओ मे रसिकता और प्रेम के दर्शन होते है। इनके अभाव और अपूर्त्ति मे निराशा और व्यथा की अभिव्यक्ति होती है। इस कविता का आधार मानव के भौतिक अस्तित्व की स्वीकृति है। अतः मानव के लौकिक संघर्ष की जय-पराजय से ही इसकी उत्पत्ति हुई है। जीवन के सहज सघर्ष से उद्भूत होने के कारण इस जीवन-दर्शन का विकास अत्यन्त स्वाभाविक रीति से हुआ है। इसी कारण से इसमे एक स्वाभाविक आकर्षण भी है। साथ ही वैयक्तिक कविता या तो गीतो में होकर फूटी है या मुक्तक रूप मे। कुछ रचनाएँ ऐसी भी है, जो छन्दो का बन्धन मानकर नही चली है।

आधुनिक तमिल कविता की कुछ प्रमुख प्रवृत्तियो की चर्चा करने के उपरान्त कुछ प्रमुख कवियो और उन की मुख्य रचनाओ का परिचय देना आवश्यक हो जाता है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, सुब्रह्मण्य भारती* आधुनिक तमिल कविता के जन्मदाता है। भारती की अधिकांश कविताओं मे राष्ट्रीय भावना ही मुखरित है। भारती की कविताओं ने जन-मानस मे राष्ट्रीय-चिन्तन और राष्ट्रीय एकता की भावनाओं को अनायास ही जगा दिया है। उनकी कविताएँ प्राणवान् हैं। उन में भावनाओ की उमड़ती धारा है। देश की आज़ादी के लिए कवि का हृदय तड़प उठा। कवि ने उस दिन का स्वप्न देखा था, जब कि भारत माता के करो से बेड़ियाँ गिर पड़ेंगी और भारतवासी दासता के मोह से मुक्त होगे। कवि की तीव्र आकांक्षा निम्न पंक्तियो मे स्पष्टतः प्रकट हुई हैं:

'एन्द्र तणियुम इन्द सुदन्तिर ताहम् ?
एन्द्र मडियुम एंकल अडिमैयिन मोहम् ?
एन्द्र मतन्नै कै विलंकुकल पोहुम् ?
एन्द्रिमतिन्नलकल तीन्तु पोटयाहुम् ?

* ३९ वर्ष की आयु मे सन् १९२१ ई० में ही इस महान् कवि का स्वर्गवास हो गया।

(कब बुझेगी हमारी यह स्वतन्त्रता की प्यास ? कब मिटेगा हमारा यह दासता-मोह ? कब गिर पडेंगी ये बेड़ियाँ माँ के करों से ? कब दूर होगी हमारी यातनाएं ?)

भारत की भावात्मक एकता को चाहने वाले भारती की अन्तरात्मा से जो वाणी निकली है, वह द्रष्टव्य है:

'मुघट्टु कोडि मुखमुडैयाल उयिर
मोइम्पुर ओन्ट्रुडैयाल—इवल
चेप्पुम मोष्ठी पदिनेट्टुडैयाल एनिर
चिंतनै ओन्ट्रुडैयाल'

(हमारी भारतमाता तीस करोड़ (अब चालीस) मुख वाली है। किन्तु उसकी जान तो है एक ही है। यह अट्ठारह भाषाएं बोलती हैं। किन्तु उसका चिन्तन तो एक ही है।)

'पांजाली शपदम। (पाचाली की शपथ) नामक खण्ड-काव्य भारती की अमर रचना है। महाभारत के एक अंश के आधार पर रचित इस काव्य मे भारती ने आरम्भ से अन्त तक सरल लोक-छन्दों का ही प्रयोग किया है। इसे काव्य-रूपक भी कहा जा सकता है, क्योकि द्रौपदी के रूप में भारती ने देश की स्थिति का प्रतीक-चित्र खीचा है और संकेत से यह बताया है कि जिस प्रकार पांचाली की शपथ पूरी हुई, उसी प्रकार भारत के भी शत्रु: दासता, अन्ध-विश्वास, विभेदकारी तत्व इत्यादि, अन्त मे मर जायेंगे और फिर एक बार उस के अच्छे दिन आयेंगे !

भारती प्रकृति-प्रेमी थे। सूर्योदय, सूर्यास्त, वर्षा, वसन्त, आंधी, कोयल, मलय-पवन, नदी, समुद्र आदि विभिन्न विषयों पर उनकी कविताएं विश्व काव्य-कानन के अमर सुमन है। 'कण्णन पाट्टु' (कन्हा के गीत) में भारती ने प्राचीन तमिल काव्य-शैली को नया रूप दिया है। श्री कृष्ण को उन्होंने नायक, नायिका सखा, पिता, शिशु, भृत्य, स्वामी, शिष्य, गुरू आदि विभिन्न रूप मे वर्णित किया है। 'कोयल का गीत' ('कुयिल पाट्टु') एक मौलिक स्वप्न-काव्य है। भारती ने इसमें एक सुन्दर प्रेम-कहानी का वर्णन किया है। सरस रहस्य-रस एवं शृंगार-रस से ओतप्रोत यह काव्य बहुत ही रोचक है।

आधुनिक काल के तमिल कवियों मे भारती के पश्चात् देशिक विनायकम् पिल्लै, "भारतीदासन्' और रामलिंगम पिल्लै, ये तीनों ही अधिक प्रसिद्ध हुए हैं। देशिक विनायकम् की लोकप्रियता का अनुमान इसीसे लगाया जा सकता है कि वे 'कविमणि' नाम से अधिक विख्यात हैं। 'कविमणि' अत्यन्त सहृदय कवि

हैं। उनकी भाषा में जो मिठास है, वह दूसरे कवियो की भाषा में नहीं। उनकी कविताएँ आप ही आप सुन्दरतम रूप धारण कर लेती है। ऊपर से लादी गयी कृत्रिम सुन्दरता उनकी कविताओ में भी नजर नही आती। भाषा मे एक स्वाभाविक बहाव है। 'कविमणि' ने 'एडविन अर्नाल्ड' की 'लाइट ऑफ एशिया' तथा उमर खैयाम की 'रूबाइयात' का तमिल मे अत्यन्त सुन्दर पद्यानुवाद प्रस्तुत किया है। मीरा के गीतो के आधार पर उन्होने 'प्रेम की जीत' शीर्षक मधुर कवितावली रची है।

शिशु हृदय की कोमल भावनाओ का चित्रण करने मे 'कविमणि' सर्वोपरि हैं। उनकी अनेक कविताओ मे शिशु के उद्‌गारो का सुन्दर चित्रण हुआ है। 'प्रथम शोक' शीर्षक कविता मे एक छोटे बालक के हृदय की व्यथा का अत्यन्त मार्मिक वर्णन है। बालक अपनी माँ से पूछता है :

'माँ, जुही खिली, हरसिंगार की कली विकसित हुई, मल्लिका भी खिलकर सुगंध छिटका रही है। उपवन मे तोता बोल रहा है और भौरा गुनगुनाता हुआ उसे खोज रहा है। भैया कहाँ है, माँ? उसके बिना अकेले मैं कैसे खेलूं माँ ?' माँ उत्तर देती है : 'फूल की तरह खिला था वह, अब कुम्हला गया है। नही, वह तो परमात्मा के पास खेल रहा है, बेटा, खेल रहा है।,

'शेफालिका' शीर्षक कविता में सरस कल्पना और यथार्थ चित्रण का जो सजीव एवं सुखद सम्मिश्रण है, वह देखते ही बनता है :

मधुमय सुमन-भरे उपवन मे
चली सुवास-भरी बयार जब
वर्य वधु-सी आकर ठहरी
तब क्या प्रमुदित शेफालिके ?
हरे पत्तो, लाल फलों से
लदा है घना घट का वृक्ष
उसके ऊपर जा बैठी हो
देखूँ कैसे मैं, शेफालिके? ... ...''

'कविमणि' समाज की स्थिति मे परिवर्तन चाहते हैं। उनके कवि-हृदय से यह अन्याय सहा नही जाता कि मेहनत करे कोई और उसका फल भोगे और ही कोई। 'स्वामित्व किसका' शीर्षक गीत मे वे कहते है :

'मन्त्र रटने से कही होती है खेती ?
भूमि के स्वामी तो वही है जो श्रम करें'

'भारती दासन' आज के तमिल कवियों मे सर्वाधिक लोकप्रिय हैं। ये 'पुरट्ची कविञर' ('क्रांतिकारी कवि') कहलाते है। ये सुब्रह्मण्य भारती के अनन्य भक्त है, अतः इन्होंने 'भारतीदासन' का नाम अपना लिया है। 'भारतीदासन' की अनेक कविताएँ 'छायावाद' के अन्तर्गत आती हैं। उनकी प्रकृति-वर्णन की कविताएँ बहुत ही सुन्दर है। एक कविता का भाव इस प्रकार है :

'मेरी आँख बचाकर वह पीछे से आयी।
मुझे कुछ ठंड-सी लगी, वह लेटी मेरे पास।
आलिंगन करने लगी, प्रेम-पाश में आबद्ध हो।
उस सुख का अनुभव करने लगी, जिसे
वह स्वयं नही समझ पाती थी।
मैंने सोचा, वह समझ जायगी
किन्तु यह क्या, सामने एक और स्त्री खड़ी है।
यह बोलने वाली मेरी पत्नी है, पहले वाली 'मन्द पवन' थी।'

'भारतीदासन' की अनेक कविताओं में प्रगतिवादी दृष्टिकोण दिखाई देता है। रूढि-विरोध, शोषितो का करुण गान, शोषकों के प्रति घृणा और रोष, क्रांति का सन्देश, साम्यवाद का समर्थन, नारी का गौरव-गान, मानवतावाद, वेदना और निराशा, सामाजिक जीवन का यथार्थ चित्रण, सामयिक समस्याओ का चित्रण आदि उनकी प्रगतिवादी कविताओं के वर्ण्य विषय है। उनकी एक कविता का भाव इस प्रकार है :

'जीवन के अंतिम क्षण तक
बैल की तरह काम करते रहो,
खून को पसीने मे बहाते रहो,
क्या, तुम्हारा परमात्मा भी आँखें बन्द कर बैठ गया ?
खाली पेट वाले ये दरिद्र 'दास'
अगर जोश में आ जायें तो
भरे पेट 'यजमानो' को क्षण में गिरा दें।
फिर तो 'दास' और 'यजमान' का अन्तर ही न रहे।'

'भारतीदासन' ने तमिल भाषा के प्रति अत्यधिक प्रेम अभिव्यक्त किया है। उनकी कई कविताएँ मातृ-भाषा तमिल की मधुरता की प्रशंसा मे हैं। उनकी कविताओ के अनेक संग्रह निकल चुके है। 'कुटुम्ब विलक्कु' (घर का दीपक) 'अल्लकिन चिरिप्पु' (सुन्दरता की हँसी) 'पाडियन परिसु' 'भारतीदासन कविताएँ' आदि उनके कविता संग्रह है। श्री रामलिंगम पिल्लै गांधीवादी कवि हैं। उनकी कविताओं

में गांधी-दर्शन की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है। इनको मद्रास का 'आस्थान कवि' (राजकीय कवि) माना गया है। राष्ट्रीय भावनाओं से युक्त इनकी कविताओ के अनेक संग्रह निकले है। राजाजी ने इनके विषय मे एक बार कहा था कि 'तिलक का बोया हुआ बीज सुब्रह्मण्य भारती बनकर अंकुरित हुआ, तो गांधीजी का बोया बीज रामलिंगम बनकर निकला।'

'तमिलन इदयम' नामक कविता-संग्रह मे रामलिंगम पिल्लै की बहुत अच्छी कविताएँ संकलित है।

भारती के पश्चात् उपर्युक्त तीन कवियो के अतिरिक्त आज अनेक कवि तमिल कविता को सजा रहे है। योगी शुद्धानन्द भारती की कविताएँ भी उच्च कोटि के काव्य-गुणो से युक्त है। इन्होने 'भारत-शक्ति' नामक एक वृहत्काव्य लिखा है। इसके अतिरिक्त सैकड़ो स्फुट कविताएँ और गीत रचे है। इनकी कविताओ का एक संग्रह है 'कवि स्वप्न'। ये प्रकृति-प्रेमी है। कही कही प्रकृति-वर्णन से युक्त इनकी कविताएँ 'छायावाद' की कोटि की बन जाती है। इनके ऊपर पाश्चात्य कवि 'शैली' का काफी प्रभाव पडा है।

श्री सुब्रह्मण्य योगी की कविताएँ प्रगतिवादी और वैयक्तिक है। 'तमिल कुमरी इनकी कविताओ का संग्रह है। शिल्प के क्षेत्र मे इन्होने कुछ नये प्रयोगो का परीक्षण भी किया है। कवि 'सोमु' की कविताओ मे एक अद्भुत शक्ति है। इनकी कविताओ मे शब्दो का चयन बहुत ही सुन्दर है। सरलता और सरसता इनकी कविताओ की दो विशेषताएँ हैं। 'इलवेनिल' शीर्षक कविताओ मे प्रकृति का विविध कोणो से चित्रण हुआ है। इनकी कुछ कविताएँ छायावादी है।
'मुडियरसन' की कविताओ मे कल्पना का सौन्दर्य, भावो का उत्कर्ष, शैली का गाम्भीर्य, ये सभी गुण विद्यमान है। ये 'भारती दासन' की शैली को अपनाते है। इन की अनेक कविताएँ छायावाद की कोटि मे आती है।

'कम्बदासन' तमिल के मस्त कवि हैं। वह जीवन को मधुमय, रसमय नेत्रो से देखते हैं।

समस्त प्रकृति 'कम्बदासन' को प्रेममय दीखती है। रवि-किरणो मे, लहरो के गीत मे, कमल के सौन्दर्य मे, भ्रमर की गुनगुनाहट मे उन्हे प्रेम ही प्रेम नज़र आता है। कुछ कविताओ मे रहस्यवाद की झलक मिलती है। 'कम्बदासन' की अनेक कविताएँ प्रगतिवादी है। पर इनकी श्रमिकों से सम्बन्धित कविताओ मे वह तीखापन नही है, जो 'भारतीदासन' की कविताओ मे देखने को मिलता है।

कवि 'कृष्णदासन' ने भी अनेक सुन्दर कविताएँ रची है। इनकी कविताओं

मे शब्द-चयन बहुत आकर्षक होता है। कविताएँ कुछ प्रयोगवादी है, कुछ वैयक्तिक। इनके अतिरिक्त आज के तमिल कवियों में पेरियस्वामी 'तूरन', 'वाणीदासन', अण्णामलै, 'सुरदा', 'इलम् भारती', का० मु० शेरीफ, रघुनाथन्, 'तमिलण्णल', भास्करत्तोण्डैमान आदि उल्लेखनीय है। इनकी कविताओं मे छायावादी, प्रगतिवादी और प्रयोगवादी प्रवृत्तियाँ देखने को मिलती है। लोक-गीतो की शैली मे कविताएँ प्रस्तुत करने वालो मे कोतमंगलम् सुब्बु, तिरिल्लोक सीताराम आदि प्रमुख हैं। कोत्तमंगलम् सुब्बु ने ग्रामीण किसानों की बोली मे कविता लिखने की नयी परम्परा चलाई है। उनकी कविताओ की विशेषता यह है कि भाषा के साथ साथ, कल्पना एवं भाव भी ग्रामीण किसानो के होते है। फलतः उनकी कविताओ मे असाधारण माधुर्य पाया जाता है।

बच्चो के लिए सरल भाषा में सुन्दर कविताएँ रचनेवालो मे सर्वाधिक प्रसिद्ध हैं; श्री अल वल्लियप्पा। इनकी कविताओं के अनेक संग्रह निकल चुके है। 'मलरुम उल्लम' वल्लियप्पा की कविताओ का एक अच्छा संग्रह है।

शिल्प के क्षेत्र मे नये प्रयोग करने वालों मे 'पुदुमै पित्तन', पिच्चमूर्ति, 'सुरभी' कि० व० जगन्नाथन आदि के नाम लिये जा सकते हैं। चल-चित्रों के लिए गीत रचनेवालो की एक अलग ही गोष्ठी बन गयी है। इनमें पापनाशम शिवन, कण्णदासन, कम्बदासन, शेरीफ, मरुदकासी आदि कवियो ने कुछ अच्छे गीत रचे है।

तमिल कविता के विषय मे यह कहना कठिन है कि आज किस 'वाद' का प्राबल्य है। जैसे प्रयोगवादी कविता को 'नयी कविता' का नाम हिन्दी मे प्राप्त है, उस तरह तलिम भाषी प्रयोगवादी कविता की 'नयी कविता' मानने को तैयार नही। हाँ ! कविता के क्षेत्र मे नये प्रयोग अवश्य हुए हैं। किन्तु ये प्रयोग हमेशा होते ही रहते है।

(मलिक मोहम्मद)

●●●

कन्नड़ में नयी कविता

●

संसार का धर्म है बदलना। संसार का धर्म ही साहित्य का भी धर्म है। इसका अपवाद नही है कन्नड़ साहित्य। करीब पन्द्रह सौ वर्षों से कन्नड़ साहित्य अब तक उतार-चढाव देखता आया है। उसमे ज्वार भाटा आया है। जैसे युग बदला, वैसे कन्नड़ साहित्य भी बदला। कन्नड़ काव्य में परिवर्तन हुआ।

कन्नड में नयी कविता आई अंग्रेजी के प्रभाव से। लगभग ७-८ साल पहले। किन्तु यह नई कविता धीरे धीरे शक्ति-संचित करके बढने लगी है। प्रारम्भ में इस कविता का विरोध भी हुआ, तो भी विरोध में उसकी प्रगति को बल मिला। परंपरागत मार्ग को तजकर यह नई कविता गतिशील हुई है, इसलिए इस का नाम भी पड़ा। किन्तु आज की नई कविता ने हरिहर, राघवांक, रत्नाकर सर्वज्ञ और मुद्दण की कृतियो में जो सन् १६०० के पहले की है, को दृष्टि में रखा है।

नई कविता की वस्तु, कल्पना, शैली तथा बंदिश सभी नवीन है। यह मुक्त स्वछन्द छंद को पसंद करती है, प्रतिभाओ का सहारा लेती है। किन्तु प्रतिभा सज धज कर आती है। इसकी वस्तुओ मे वही पुरानी वस्तुएँ ही है, जैसे समुंदर, साँझ-सवेरा, आत्मा, मृत्यु, धूलि, विद्यालय इत्यादि।

नई कविता की तुरही बजाने वाले है : विनायकजी (प्रि० वि० के० गोकाक) ही कहा जाय तो अत्युक्ति या धृष्टता नही होगी। नई कविता के रचनाकारो में श्री अरविंद नाड़कर्णी, श्री पशुपति रेड्डी, श्री आर. जी. कुलकर्णी, प्रो० बी० एच० श्रीधर, श्री चेन्नवीर कणवी, श्री जी० एस० शिवरुद्रप्प आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

धूलु

कुलितव सिड़िदेद्दु निंत
गांधी टोप्पिगे कित्तु बिसाड़िद
गोड़ेगे हाकिद देव देवियर चित्र नोड़िद
धूलु ! धूलु !! धूलु !!!
धूलु मुसुकिदे देवर चित्रक्के।

आर० जी० कुलकर्णी

[बैठा हुआ उठ खड़ा हुआ, गाँधी टोपी फैंकी, दीवार पर टँगी देव देवियों की तस्वीरें देखीं, धूलि ! धूलि !! धूलि !!! धूलि चढ़ गई है देवों की चित्रों पर]

सत्तात्ममगल संचु

किटेल किटेल कोशद नूरा ऐव-
त्मूरने पुटदलि सिक्कुव आत्मद
पडियच्चुपलत्यसंख्य सुत्तलु
काणुत्तिवेयो विचित्र राज्यद

नगरदोलब्बा अवुगल कुणितव
कडे कंडे कप्विरिवोडेवनक ।　　　　　　　　बी० एच० श्रीधर

[किटेल साहब के कोश मे एक सौ तिरेपन पृष्ठ पर मिलने वाली आत्मा के ढांचे (ब्लाक) अनगिनत चारों ओर, दीख रहे हैं विचित्र राज्य के नगर में, उन का नृत्य देखा, देखा रे तब तक आँखें न फूट गईं।]

समुद्र मोहिनी

अहा समुद्रवे !
विश्वव्यापी समुद्र लहरिये !
ना हुंब, मण्णिन मडकेयलि प्राणव हूलिट्टु
चप्परिसुत्तिद्दे होटेलिम ऐसक्रीमु
सवियुत्तिद्दे चित्रपटद प्रेमकसरत्तु–
एदुरु नगुत्तित्तु समुद्र नोरेय क्षीरहासदलि ।　　　　अरविंद नाड़कर्णी

[ओह ! समुदर ! विश्वव्यापी समुद्र की लहरें ! मैं बुद्धू हूँ, मिट्टी के मटके मे प्राण को गाड़कर, होटल का आईसक्रीम चख रहा था, चित्रपट की प्रेम की कसरत का आनंद लूट रहा था, सामने समुंदर फेनिल क्षीरहास में हंस रहा था।

जड़े

ललनेयर बेन्निनेडे
हाविनोलु जोल्व जडे
कालिदियंतिलिदु कोरलेडेगे कवलोड़ेदु
अत्तित्त हरिद जड़े !

कुरुकुल जीवाकर्षण परिणत आ
पाँचलिये जडे
सीतेय कण्णीरोलु जडे
ओ ओ ई जड़ेगेल्लि मिंद कड़े !

संजेयलि हगलु केदरुव कत्तलेय
काल जडे
बेलगिनलि इरुलु बिच्चुव बेल्लनेय
बेलकु जडे !

जडेयाद तिरुगिसिद तायमुख मात्रइंदिगू
काणदल्ल ?　　　　　　　　　　　जी० एस० शिवरुद्रप्प

[ललनाओं की पीठ पर सर्प की भाँति लटकता हुआ जूड़ा, कालिंदी (सर्प) की नाईं। गर्दन के पास शाखा मे बंटकर इधर उधर झूलने वाला जूड़ा ! कुरुकुल के प्राण लेने वाला वह पाँचाली का जूडा ! सीता के आँसुओ में भीगा हुआ जूड़ा । अरे, अरे इस जूडे का अंत कहाँ ? साँझ में दिन को कुरेदने वाले अंधकार का काला जूडा ! सबेरे मे रात को खोलने वाला सफेद प्रकाश का जूड़ा ! जूड़े के दूसरी ओर मुड़ा हुआ माता का मुख तो आज भी नही दीख रहा है, तो ?]
इसी प्रकार ओरो की रचनाएँ भी है, जिसमे 'विनायक जी' का 'वैद्य विद्यालय' गोपाल कृष्ण अडिग जी का 'भूमिगीत' भी मशहूर है ।
नई कविताओ की सम्यक समालोचना, इनकी विशेषताओ की जानकारी आदि लेकर जनता का ध्यान, पंडितो का ध्यान, नई कविताओ की ओर खीचा जाय, तो इनका भविष्य उज्वल होने की संभावना है ।

(गुरुनाथ जोशी)

●●●

समसामयिक उड़िया कविता

●

बीसवी शताब्दी के द्वितीय दशक में महात्मा गाँधी के जातीयताबोध और रवीन्द्रनाथ के विश्व-प्रकृति के साथ मानवता के एकात्म्य एवं सौन्दर्य-बोध ने उड़िया काव्य-धारा को विशेष रूप से प्रभावित किया था । किन्तु मधुसूदनदास, गोपबन्धुदास आदि प्रमुख नेताओ का भाषावार प्रदेश-गठन का आन्दोलन तथा उत्कल के प्रतिवेशी बंगवासियों का उड़िया विद्वेष, जातीयता के भाव को अखिल भारतीय स्तर से उतार कर प्रादेशिक स्तर पर ले आया । उत्कल की सारस्वत वीणा से इसके दो स्वरो का जो समाहार उठा, उसका आभास हमे हरिहर महापात्र, मायाधर मानसिंह, गोदावरिश महापात्र, नित्यानन्द महापात्र, कृष्णचन्द्र त्रिपाठी, राधामोहन गौड़नायक आदि प्रमुख कवियों की काव्य-धारा से होता है । 'सत्य-शिव' को ध्यान मे रखकर कविता के रूप और विषय-वस्तु मे समन्वय का तथा कविता मे ध्वनि एवं गेयता के माध्यम से लय को बनाये रखने का श्रेय इन्ही कवियो को है ।
तृतीय दशक के मध्य, भारत को एक समाजवादी राष्ट्र के रूप मे बदल देने के लिए जातीयता-आन्दोलन उग्र हो चला, तो काव्य-धारा को एकाएक नया मोड़

कवि-परिचय
और
कविताऐं

संकेतिका

शम्भुनाथसिंह	—	यात्रा के बाद
शमशेर बहादुरसिंह	—	सारनाथ की एक शाम
श्रीकान्त वर्मा	—	बुखार मे कविता

बंगला

विनयमजुमदार	—	पहली कविता
शक्ति चट्टोपाध्याय	—	गुप्तचर
सुनील गंगोपाध्याय	—	नारी नगरी
मानस राय चौधुरी	—	अनुभव

उर्दू

रफ़त सरोश	—	कल
निदा फाजली	—	तुम्हारे खत
शहरयार	—	इल्तजा
जावेद कमाल	—	नीद
राही मासूम रजा	—	गजल

मराठी

प्रभाकर माचवे	—	लघ्वारण्यकोपनिषद । परोपजीवी, दुख का हिम
बा० भ० बोरकर	—	अभंग
शिरीष पै	—	किसी एक बरसात मे
आ० रा० देशपाण्डे अनिल	—	देर से आई बरसात

गुजराती

थोसफ मेकवान	—	यहाँ भी
अब्दुल करीम शेख	—	अश्वत्थामा
हेमन्त देसाई	—	असहाय कवि
दिलीप जवेरी	—	धब्बा

पँजाबी

कृष्ण अशाँत	—	गंदा रुमाल
तारासिंह	—	निमन्त्रण
सुखवीर	—	होटल : एक मंजिल
स्वर्ण	—	युग्म

अंग्रेजी

पी० लाल	—	एक रंग चित्र
पद्मनाथ शमशेर	—	पशुपतिनाथ-टेम्पुल

●●●

नौ टबीनीक कविताएँ

एलेन जिन्सबर्ग
जैक केरुएक
मिकाएल होरोविज़
एड्रियन मिचेल
ओम्
पाल ब्लैकबर्न
ब्रदर एंटोनिनस
मार्टिन सेमूर स्मिथ
सी० एच० सिसन

•

एलेन जिन्सबर्ग : जन्म १९२६; बीटनीक कवियों में अग्रणी। 'हाउल एण्ड अदर पोयम्स' प्रसिद्ध संग्रह; भारत में भी रहे।

जैक केरुएक : प्रसिद्ध बीट कवि; कई संग्रह प्रकाशित।

मिकाएल होरोविट्स : सम्पादक—'न्यू डिपार्चर्स'; इंगलैण्ड के क्रुद्ध कवियों के एक नेता।

एड्रियन मिचेल : प्रसिद्ध क्रुद्ध कवि; 'न्यू डिपार्चर्स' दल के सदस्य।

ओम् : वास्तविक नाम—ओलिविया डी' हॉलविल, क्रुद्ध नयी कवियित्रियों में अग्रणी, 'न्यू डिपार्चर्स" से सम्बद्ध।

पाल ब्लैकबर्न : जन्म १९२६, कवि, सम्पादक, अनुवादक; कई पुस्तके प्रकाशित।

ब्रदर एण्टोनिनस : जन्म १९१२, बेहद लम्बी कविताओं के कारण प्रसिद्ध, 'दि क्रुकेड लाइन्स ऑव गॉड'—प्रसिद्ध संग्रह।

मार्टिन सेमूर स्मिथ : इंगलैण्ड की सुप्रसिद्ध पत्रिका 'एक्स' से सम्बद्ध।

सी० एच० सिसन : ये भी 'एक्स' से सम्बद्ध।

असली महत्त्वपूर्ण वस्तु • एलेन जिन्सबर्ग

(लाफ़िंग गस द्वारा अचेतनता की ओर कदम)

महान् संवादी सत्ता में मेरी उपस्थिति
की गहरी संवेदना
....जिसमें अब धारणा से परे की
असंवादिता भाग लेगी

'मैं फिर यही वापस आ गया हूँ'—यांत्रिक
भ्रम की अनुभूति अपने मूढ भाग्य पर लौट
आई है—क्षुद्र विजय-संगीत के साथ—
मैं छोड़ देता हूँ

भयंकर वास्तविकता के अनंत समकालिक
रूपाकारों के आभास जो गलती से प्रकट होकर
'कुछ नहीं' के मूर्खतापूर्ण चेतना-प्रदेशों में
छूट गये हैं

शून्य के बंद होते गर्दभ-छिद्र में लुप्त
होते हुए—'रुको' का चिह्न जो चक्कर खाकर
आँख के आकार में सामने ठहर जाता है—
मुझे आँख मारता है और हम लुप्त हो जाते है। •

हड्डियाँ • जैक केरुएक

मैंने
साफ साफ
देखा
इस
सारे
व्यक्तित्व
प्रदर्शन
के नीचे छिपा कंकाल

मनुष्य
और उसके गर्व
का अन्त में
हड्डियों के सिवा
क्या शेष रहता है ?
रातोंरात उसके नृत्यों का
पीपे भर भर शराबों का
जो उसके गले से उतर गईं
....ह....ड्डि....याँ....
कब्र में वह
सड़ता है
कीड़े उसे
खाते रहते हैं •

आगामी युद्ध के बाद • मिकाएल होरोविज़

क्यों हम ध्वस्त क्रेटर नगरो में मरे·······क्यो
हम सितारे नही, जो एक सुन्दर अनंत उद्यान
बना सके···· ·· क्योंकि

ऊँची उडती पतंगे ही मीनारो मे लगी घंटियाँ देख सकती हैं
जिन्हे कोई सुन नही सकता—सब आत्माएँ
और मन नये सफाई-साबुन से
धुल चुके हैं—

'नौटिंग हिल' के
तिमंजिले घर की बात है

पहली मंजिल पर
'हर मेजेस्टीज सर्विस' के
कामकाजी लोग रहते थे
जिन्हे 'बमों पर रोक लगाओ' आन्दोलन से
कुछ लेना देना नही
—अगर क्वीन गई
तो इंग्लैड डूब जायगा—
वे खामोशी से अपना काम धंधा करते और
ऊपर जाते हुए जरा भी किसी से छू गये
तो कहते 'माफ़ कीजियेगा'

दूसरी मंजिल पर
तेरह निष्कासित
सभी शक्लों, आकारो और रंगो के, हर वक्त
शोर मचाते, पार्टियाँ करते—और क्या भयंकर संगीत
जैसे हिस्टीरिया से पीड़ित हों
बसों में उनके बगल में कोई बैठता नही था
वे सभी अपने लिए, अपने साथियों, और पालतू जानवरो के लिए
हमेशा कुछ न कुछ आज्ञा देते रहते

ऐसी ही और भी वाहियात बातें—
और आखिरी मंज़िल का यह दम्पति—
यह तो खुले आम पतित है
—ये दोनो क्यो हमेशा ही भीतर बाहर
ऊपर नीचे, बीच में आते जाते रहते हैं—उनका
विदेशियो से बेहद गहरा संबंध है
जो सितारों के नीचे ज़मीन के ऊपर, सब तरफ फैले हैं
नीचे वाले उनकी परवाह नही करते
सिर्फ जब तब उपहास कर लेते हैं—
पर जब उनके जीवन में हस्तक्षेप होता है
तब दुर्घटनाएँ शुरू होती हैं—
और अब तो बम गिर चुका है
जिसने सभी दिल तोड दिये हैं •

एड्रियन मिचेल

लॉर्ड होम जिन्हें ५००० पौंड मिलते हैं

लॉर्ड होम, लॉर्ड होम जिनका आयताकार चेहरा है
जो सुंदर नही तो एकदम बदसूरत भी नही है
पर सपाट, सपाट, जैसे युग का एक आइना !
और लॉर्ड होम का सपाट आयताकार चेहरा
सपाट आयताकार चेहरे वालों की लम्बी परम्परा की ही उपज है
'सुसंस्कृत,' उनके दर्जी ने कहा, चतुर कैंची से,
कीमती ढंग से, लॉर्ड होम के बढिया कपड़े कतरते हुए ।
अपार दौलत उनकी शिक्षा पर, रंग ढंग पर, बहाई गई है—
योग्य परम्परा के योग्य वंशज !
लॉर्ड होम, लॉर्ड होम ने अपने आयताकार चेहरे का
मुंह खोलना शुरू किया ।
मुंह खुलने लगा, खुलता रहा और पहले आधा,
फिर पूरा, फिर बिलकुल ही खुल गया—

एक साफ़, क्लोरोफ़िल से पूर्ण, खाई, जिसमें
संकट के समय लोग बसेरा ले सकते हैं।
इस खाई से शब्द अंग्रेज़ी में निकलने शुरू हुए
जिनका आशय यह हुआ कि अंग्रेज़ बर्लिन को प्यार करते है—
तुम्हें याद है वह शहर, जिसकी हर आँख पर एक स्वस्तिक था
जहाँ सभी समझदार रोते थे, यहूदी और गैर-यहूदी
उन्होने कहा कि उस शहर से प्यार के लिए सभी अंग्रेज़
अणुबम की राख मे मिल जाने को तैयार हैं
पर उन्होने कहा, पर भूलो मत उन्होने कहा, पर, पर
वे ऐसा करेंगे नहीं।

लॉर्ड होम, लॉर्ड होम कायर हैं, मुर्गी बराबर भी जिनका कलेजा नही
सपाट धूल भरे चेहरो की परम्परा के अयोग्य।
मैं धूल हो जाना चाहता हूँ, लोकतंत्र-प्रेमी, स्वतंत्र उद्योग की धूल।
मेरे शरीर का हर अणु टूटने को व्याकुल है।
ध्वंस तथा अग्निकाण्ड के बाद से मेरे सभी अंग्रेज अणु
उस स्थान पर देश-भक्तिपूर्वक एकत्र होने लगे हैं, जहाँ
पहले मेरा दिल उठते-गिरते बादल देखा करता था।
ध्वंस और अग्निकांड के बाद से अणुओ की सेना
जो पहले मेरे जीवन के कार्यों में काम आती थी
अब उस पुरवा हवा की आतुर प्रतीक्षा कर रही है
जो उसे लौह आवरण के पार उड़ा ले जाय
और मास्को पर तब तक बरसाये
जब तक रूस के बुरे आदमी और बुरी औरतें अपाहिज न हो जायँ। •

पंख और पंख • ओम्

वह पंख
हवा से उडकर
मेरे पैरो पर आ गिरा
मैने उसे उठाया, देर तक देखता रहा,
और गहरी उदासी से एक आह भरी
इस पंख पर सफेद धब्बे थे

मेरे किस भाग्य का सूचक था यह पंख ? मेरी स्मृति घूमी,
आत्मा ने झटका लिया और इन्द्रियाँ विगत की खुशबुओं में
डूबने लगी वह पंख मैंने अपनी जेब मे रख लिया
एक आह भरकर और आँखें बंद करके
उसकी काली भीगी त्वचा चमाचम हो रही थी
खुले हुए ओठो मे सुन्दर दाँत दिखाई दे रहे थे और सफेदी
से घिरी गंभीर आँखे जैसे कुछ कह-सी रही थीं।
जब वह एड़ियों पर घूमी
उसकी छातियाँ लहराईं
और उसके शरीर में भरी शक्ति ने जैसे मुड़कर अंगड़ाई ली।
वह देखता रहा, देखता रहा बिना हिले चुपचाप
इस दृश्य ने उसे जकड़-सा लिया
हृदय में एक इच्छा उठी टूटे फूटे शब्दों में उसे
पास आने को कहा। वह उसकी बगल में आ बैठी
पर वह स्तब्ध ही रहा, एकदम चुप, उस एकाकीपन से
घिरा घिरा जो उसके नेत्रों की कोर में
छिपा हुआ बैठा था
वह प्रश्न-दृष्टि से देखती रही एक संकुचित मुसकान
अजाने ही उठी, उसकी शक्ति से बेखबर।
एक धब्बेदार पंख उसने सोचा, यह बड़ा हलका
और कोमल है, बड़ा पतला और धारियोंदार।
किस चिड़िया से टूटकर यह उड़ आया है कौन सी हवा
उसे यहाँ पहुँचा गई है
क्या वह इतना ही खोया हुआ है जितना दिखाई देता है और फिर
वह खुद अपनी गहराइयों में जाकर खो गया फिर भी....
उसकी त्वचा कितनी चमकदार है
जैसे समुद्र की चट्टान हो
और दूसरी ओर देखकर
वह आगत को सोचने लगा
यह धब्बेदार पंख जिसने उसके भावों को भाँप लिया
और बुद्धि को स्तंभित कर दिया त्वचा का यह कालापन

ऐसा अनोखा और ऐसा सच्चा
क्या यही वह गहराई है, जिसे वह सोचता है कि वह समझ पाया है ?
वह उसे छू नहीं सका   वह निषिद्ध पंख था।
एक धब्बेदार पंख मेरे पैरों के पास उड़ आया,   मैंने उसे
एक आह भरकर अपनी जेब में रख लिया। •

प्रतीक्षा • पाल ब्लैकबर्न

पृथ्वी मुड़ती है
शिशिर की संध्या की ओर
शीतल शारदीय प्रकाश
(पृथ्वी
घूमती रहती है)
सायंकाल के झरोखों को
भर रहा है....मैं अकेला
बिस्तर पर लेटा हूँ

उतरते सूरज की गुलाबी रोशनी में रंगी
सफेद दीवार के पार
एक मक्खी उतरती है
दरवाजे तक आती है
जगह जगह रुकती है
चुपचाप

मेरे असंतोष की आड़ी वक्र रेखाएँ
मेज़ के इधर उधर मँडरा रही हैं
सुस्त, अर्ध चेतन, अर्धमत्त,
मन को मित्रों से भर रहा हूँ •

शब्द-जन्म • ब्रदर एंटोनिनस

एक गहराई,
विराट् अंतर्क्रिया,
शून्यता अपनी ही रिक्तता से आतंकित,
अंधेरा अपनी ही स्वार्थता से पराजित,
किसी संकेत के लिए बेचैन....

क्या संकेत ?

अक्षरांकित,
अपनी मूर्च्छना में प्रकंपित—
बहुत दूर तक।

कौन ?

खिलते हुए,
रूपांतर के अपने गुण में
उभरते हुए।

समर्पित,
अक्षर एकाग्रचित्त,
निश्चय से समन्वित।

धारणा
शुद्ध संगति से उत्पन्न।
इच्छित नहीं, अनुभूत,
घोषित नहीं, स्वीकृत।
आयामों में विस्तृत—
बाह्य अभिनन्दन।

अद्भुत स्वतंत्रताओं में सुधारित,
समोद्भवित,
प्राचीनताएं विघटित।

स्वभव्यता से भी अपूर्व,
पूर्ण से अधिक
विलक्षण। •

मार्टिन सेमूरस्मिथ

एक इमारत के पास मिला ख़त

मेरे प्रिय,

पेग वेस्ट में बनती इस इमारत की बगल में
मैं नंगा पड़ा हूं। सुबह के १ बज कर ५ मिनट हुए हैं,
बड़ी सर्दी है। कुहरा मेरे चारों ओर घिर रहा है, खंभों

की तरह । मुझे बहुत कुछ सोचना है, खास तौर पर यह
कि सुबह होने पर मैं क्या करूँगा ?
यह सब मैं कोयले के टुकड़े से लिख रहा हूँ
एक फटे-चिटे अखबार के दाग़ी टुकड़े पर........
सुबह के घनघनाते साइरन बजने से पहले
शायद यह तुम्हे मिल जाय । न मिले तो,
मेरे बारे में सोचना, पर मेरा पता मत लगाना । ●

युवती ● सी० एच० सिसन

अटलान्टा सी डावाँडोल तुम सड़क पर चलती हो ।
कुछ ही समय पहले तुम किसी की पुत्री थी,
अब इस झुंड की माँ हो ।

तुम्हारा एक हाथ एक छोटे बच्चे को पकड़े है,
दूसरा पैरो के पीछे एक और को थामे है
और हंसती हुई तुम एक तीसरे के पीछे भाग रही हो ।

तुम्हारे स्वस्थ उदर में एक गुफा है
जिसमें से ये इस सुगंधित संसार में आये ।
वे पंखड़ियो की तरह हैं, पर तुम्हारी आँखों पर
रेखाएँ खिचने लगी हैं;
जो शरीर तुमने अपनी सुहाग शय्या को दिया
उसे देखकर लड़के अब सीटियाँ नही बजाते ।

जल्द ही तुम समझ जाओगी कि आशा,
जिसके पीछे अभी तुम भाग रही हो,
कप में रखे पानी की तरह ले जानी होती है ।
अन्तत: तुम इसे ऐसे ही पकड़ोगी,
जब यह सब भाग-दौड़ ज्ञान मात्र में बदल जायेगी
और उसकी लोट-पोट से तुम उल्टी हुई चादर हो जाओगी । ●
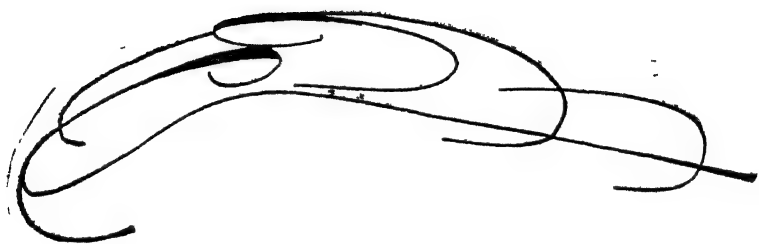
युरोप की कविताएँ

●

फ्रांस :

पियेर रिवेर्डी : अग्रणी आधुनिक फ्रैन्च कवि।

पाल जिल्सन : पेरिस रेडियो से सम्बद्ध रहे, नयी पीढी के कवि एवं उपन्यासकार।

जाकेस डूसेट : अधुनातन अग्रणी कवि।

जर्मनी :

बरतोल्त ब्रेख़्त : (स्व०) विश्वविख्यात नाटककार, कुछ कविताएँ लिखी; बाद मे मार्क्सवादी हो गये।

हेलमुट हीसेन बूटेल : जन्म १९२१, कई कविता संग्रह प्रकाशित।

वर्नर रेफेल्ड : अधुनातन कवि और विद्वान, काफ्का पर थीसिस; कुछ समय भारत में भी रहे।

होर्स्ट लैंग : जन्म १९०४; रहस्यवाद तथा मौलिक तत्वों की अनुभूति के कवि।

इंगेबोर्ग बाख़मान : जन्म से आस्ट्रियन महिला; कविता और कहानियों के दो संकलन प्रकाशित; कविता में युद्ध की तीव्र अनुभूतियाँ हैं।

ग्रीस

रेम्को कैम्पर्ट : प्रसिद्ध ग्रीक कवि एवं विद्वान।

आइसलैण्ड

सिगुरद्धुर ए० मैग्नुसन : नयी पीढी के अग्रणी कवि; कुछ समय पूर्व ही भारत आये थे।

रूस

बोरिस पास्तरनाक : (स्व०) नोबल पुरस्कार मिला और उससे बड़ी हलचल मची; गीतों के कई संग्रह प्रकाशित; काफ़ी अनुवाद कार्य किया। क्रान्त्योत्तर रूस के प्रमुख कवियों में एक।

ब्लादीमीर मायकोव्स्की : (स्व०) ३७ वर्ष की आयु में आत्म-हत्या की, जिसका रूस और यूरोप के साहित्य-मानस पर बड़ा असर पडा। रूसी क्रान्ति और भविष्य-वाद के प्रमुख कवि।

ज्यार्जी इवानोव : (स्व०) रूस त्याग कर फ्रांस मे रहे; अनास्था के कवि।

एव्जेनी एव्तुशेंको : युवक रूसी कवि, अमेरिका घूम चुके, अब क्यूबा में हैं।

एलेक्सांदर येसेनिन : पिता भी प्रमुख रूसी कवि थे!

वोल्पिन ३८ वर्षीय, नयी परम्परा के कवि; गणितज्ञ तथा तार्किक। जेलो मे खूब रहे।

स्पेन

गार्सिया लोर्का : (स्व०) पुरानी परम्परा के स्पेनी कवि; फ्रांको के दलवालों ने हत्या कर दी। जिप्सियों, साँड-युद्धों, प्रेम, घृणा, मृत्यु आदि पर खूब लिखा!

रफ़ाएल आलबेर्तो : पुरानी परम्परा से आरम्भ करके अति-यथार्थवाद तक लिखते रहे हैं। स्पेनिश गृहयुद्ध के बाद अर्जेण्टाइना में रहने लगे।

मिगुएल हरनान्देज : ३२ वर्ष की आयु में मृत्यु, जेलों में रहे। बहुत संक्षिप्त, सरल और भावपूर्ण कविताएँ लिखीं।

यूगोस्लाविया

इवान इवानजी : दूसरे महायुद्ध के समय के बन्दी शिविरों में रहे। दो कविता संग्रह और एक उपन्यास प्रकाशित।

वेस्ना परुन : ४१ वर्षीय प्रसिद्ध यूगोस्लावियन कवियित्री; दो कविता संग्रह प्रकाशित।

तीन फ्रेंच कविताएं

काला ग्रौर सफेद • पियेर रिवेर्डी

इस लैंप के विशाल श्वेत वृत्त को छोड़कर
ग्रौर किसके समीप रहे,
बुड्ढे ने एक-एक करके
ग्रपने सब हाथी-दांत निकाल दिये हैं,
ये बच्चे जो मरते ही नही
इनके गुस्से का लाभ ही क्या,
यह बुड्ढा—
ये दांत—
पर यह वही सपना नही था
जब उसे लगा कि वह ईश्वर के बराबर
बड़ा हो गया है, तब उसने
ग्रपना धर्म बदल दिया ग्रौर
ग्रपना पुराना ग्रंधेरा घर भी छोड़ दिया,
तब उसने नये वस्त्र खरीदे ग्रौर
एक ग्रलमारी खरीदी,
पर वृत्त के समान श्वेत उसका सिर
सीढ़ियों पर पड़ी मामूली गेंद
से ग्रधिक कुछ भी नही रहा,
दूर से गेंद हिलती प्रतीत होती है,
इसके बगल में एक कुत्ता है
ग्रौर यदि यह गेंद ही हो
तो इस रूप में यह कब तक हिलती रहेगी
कुछ पता ही नही चलता। •

ग्रस्थियों का मरसिया • पाल जिल्सन

धूल यह दीवाल की थी
इसे कोई सन्देह नही था
कि इसे उस युग की ग्रच्छी जानकारी थी

जब दीवालो के भी कान होते थे और
नष्ट पदध्वनियाँ गलियारो मे गूँजती थी

कल शाम की गर्मी से अब भी परेशान
स्मृति की राख के भीतर
इतनी चमक अभी बाकी थी
कि द्वारों के बीच खड़े भूतो को
प्रेतों को रोशन कर सके—जो
चाहे खाना खाते लोगो की आकृतियाँ हों
मेज़ के नीचे जिनकी नाव डूब गई
या फैशनपरस्त का चश्मा हो
या लंपट का आवरण हो
या किसी मृत स्त्री के बाल हों

नीम-हकीम का सर्व-रोगनाशक पाउडर
भी कुछ नही कर सका
पर कोई पुरोहित की बात नही सुन सका
आदमी राख ही होता है
राख ही में वह मिल गया है
उसके घर-जीवन में कुछ कमी-सी लगती
कुछ ऐसा अभाव
जो पत्थरों को भी पिघला दे
पर राष्ट्रों की श्मशान भूमि में
अब पत्थर भी शेष नही है

सारी दुनिया पूरी तरह
जाने कहाँ खो चुकी है। ●

तुम्हारे चारों ओर • जाकेस डूसेट

तुम्हारे शरीर के चारों ओर
पारदर्शी माँस वाली मछलियाँ हैं
और नवपक्व अंजीरों का एक स्वर्ग

जिसे अंधकार गुप्त-रूप से काटता है
चुम्बनो के मध्य हँस खेल रहा है

तुम्हारे स्तनो के चारो ओर
दूध से भरी नस-नाडियाँ हैं
कबूतर, जिनका कोई नीड नहीं
और फूलो के खिलते हुए गुच्छ
तुम्हारे चरणो के साया मे उगते हैं

तुम्हारे मुख के चारो ओर
हँसी की फुहारो की दावते हैं
कुतरे हुए फल के स्वाद से पूर्ण
भयहीन शब्दो से युक्त
जो शून्य से भी हलके हैं

तुम्हारी आँखों के चारो ओर
जवान लडको के चेहरे हैं
आंसुओ के नमक से मज्जित
और तुम्हारे नथनो के इधर उघ
फैली सुगंधो से सुसज्जित

तुम्हारे सिर के चारो ओर
तुम्हारे विविध सपने हैं
बचपन की निश्चित नीदे हैं
जो अब कभी नही सोयेगीं
हजारों तरह के विचार हैं
जो जानते नही किधर जायें
खुशियो का टोप और
मेरे तुम्हे कहे शब्द हैं

जब भी मै तुम्हे चूमता हूँ
तुम्हारे गले की बिजलियों के नीचे
प्रस्फुटित पोस्तों का स्फुरण होता है •

बेचारा बी. बी. • बरतोल्त ब्रे ख्त

मै, बरतोल्त ब्रॅख्त, काले जंगलो का निवासी हूँ ।
माँ मुझे पेट में लिये ही शहर आ गई थी ।
और जब तक मै झड़ नही जाता,
जंगलो का शीत मुझसे अलग नही होगा ।

कोलतार के शहर मे मैं खुश ही हूँ,
शुरू से ही मैं मौत के सब प्रतीको से युक्त हूँ :
समाचारपत्रो से, शराब और तम्बाकू से ।
संदेही और आलसी और अंततः संतुष्ट ।

लोग मुझे पसन्द करते हैं । मै उनकी
प्रथा के अनुसार बाउलर टोप लगाता हूँ ।
मै कहता हूँ, ये बड़े नुक्ताची लोग हैं ।
पर कोई बात नही, मै खुद भी ऐसा ही हूँ ।

सुबह के वक्त में कभी कभी कुछ स्त्रियो को
अपनी रॉकिंग कुर्सियो पर बैठाकर खुश-खुश
उन्हे देखा करता हूँ और उनसे कहता हूँ :
मै ऐसा आदमी नही, जिस पर तुम विश्वास कर सको ।

शाम को मै पुरुषों को अपने पास एकत्र करता हूँ ।
हम सब एक दूसरे को 'श्रीमान्' से सम्बोधित करते हैं ।
वे मेरी मेज़ पर पैर रखकर बैठते और कहते हैं:
जल्द ही सब ठीक हो जायगा । पर कब, यह मै नही पूछता ।

सुबह की भूरी उषा मे देवदार उदासी से हिलते और
पक्षी तथा उनके बच्चे रोने लगते है, तब मैं
शहर में अपना गिलास खत्म करता हूँ और सिगार
फेककर चिन्तित मुद्रा में सोने चला जाता हूँ ।

इन नगरों से जो गुजरता है, वही शेष रहेगा—यानी हवा ।
लोग घर में खुश रहकर भी उसे खाली कर जाते हैं ।

हमे पता है कि हम भूमिका मात्र हैं और हमारे बाद
यहाँ जो वस्तु आयेगी—वह उल्लेखनीय नही होगी।

आगामी भूचालो मे, मुझे आशा है कि तल्खी
के कारण मै अपनी सिगरेट नही फेकूँगा—
मै, बरतोल्त ब्रेख्त, काले जंगलो से बहुत समय पूर्व,
माँ के पेट मे रहते हुए ही, कोलतार के नगरो मे फेका हुआ। •

टुकड़ा • हेलमुट हीसेनबूटेल

क्षितिज सभी गोल हैं।
धरती की सपाट चकती पर
मै दूरस्थ घण्टाघरो की ध्वनियाँ हूँ।

रेडियो कहता है :
'स्वाधीनता असम्भव वस्तु है'
फिर एक रिकार्ड
अर्नाल्ड शोएनबर्ग का 'फ़ोर्थ स्ट्रिंग क्वार्टेट'।

सूरज मेरी जेल-कोठरी से दूर है।
हवा मे तैरती
शहर की रेलो की गडगड़ाहट
बडी मीठी लगती है।

अप्राप्य की निराश और कुण्ठित क्षुधाएँ।
जाने के अनेक समय
आने का कोई नही। •

ओठों पर पवन • वर्नर रेफेल्ड

ओठों पर पवन
जायका देती है
अगले दरवाज़े का,
आइने मे मिटाती है
रातों के साये,
गद्दे पर नग्न करती हैं
गोपन को, नामहीनता को,
उतरती है लहरों में,
दम्पति की लय में
पर्दे मे
स्वीकृत समय के सम्मुख। •

रात्रि-संगीत • होर्स्ट लैंग

अब अच्छी तरह सोओ, निद्रा से एकरूप होकर,
दिन को भूल जाओ, तारीख से उतर जाओ,
चाँद और तारों के रस को इंद्रियो मे समाने दो,
भारहीन, शीतल और शून्य बन जाओ।

लंगर पतकारहीन यह नाव—
रक्त-भरे सपनो से फिसल फिसल जाओ,
बाज़ों, तूफानो से मुक्त आसमान को महसूस करने को
पेड़ो के आगे चुपचाप लेट जाओ।

भय को भगाओ, लोगो को भूल जाओ
अभाव के छोटे, नंगे बच्चे बन जाओ,
याद करो उन सख्त हाथों को जिनसे एक दिन
धरती के गर्भ से तुम निकाले गये थे।

अंधेरे की पर्तों मे खतरे भरे हैं,
छिपे रहो, दृष्टि को नष्ट कर दो,
सत्ताहीन कर दो चुपचाप खुद को—
अभी तुम जीवन के विनाश और मृत्यु से अजनबी हो। •

दोपहर को • इंगेबोर्ग बाख़मान

गर्मी के दिनों मे
जब नीबू के वृक्ष चुपचाप फूलते हैं
नगरों से दूर दिन का एक चाँद
रोशनी की पीली किरणे बिखेरता है
दोपहर हो गई है,
धूप फव्वारे मे तैर रही है,
मलबे के ढेर पर अमरता का पक्षी, फोनिक्स,
अपने पीड़ाग्रस्त पंख खोलता है,
और पत्थर फेकने के कारण विकृत हाथ
उगते अनाज मे डूब जाता है।

जहाँ जर्मन आसमान धरती को काला कर रहा है
एक सिरहीन देवदूत मानवी घृणा की कब्र ढूंढने मे लगा है
वह उसे हृदय की कुंजी सौप जाता है।

दर्द का एक गुबार पहाडी के पार जाकर खो गया है।

सात साल बाद
तुम्हारे पुराने विचार वही तुम्हारा इन्तज़ार कर रहे हैं—
फाटक के सामने लगे फव्वारे पर :
ज्यादा मत घूरो, मत घूरो,
तुम्हारी आँखे आँसुओ में डूब जायेगी।

सात साल बाद
उस घर मे जहाँ मुर्दे पड़े हैं
कल के जल्लाद सोने के प्यालों मे
शराबे पी रहे हैं
पर तुम्हारी आँखे झुकी हैं····झुकी हैं

दोपहर हो गई है,
राख के भीतर

लोहा तडप रहा हैं, झण्डे कांटो पर
लटके हैं, और आदिम सपनो की
चट्टाने जजीरो मे जकड़े
गरुड़ को उठाये है।

रोशनी मे अंधी आशा भय से कॉप रही है।

उसकी जंजीरें उतारो, उसे स्तूप से
नीचे लाओ, उसकी आँखे
अपने हाथो से ढक दो
कि कोई भी परछाई उसे पीड़ित न करे।

जहाँ जर्मन धरती आसमान को काला किये है
बादल शब्दो का पीछा कर रहे है
खोहा को मौन से भरते हुए
ग्रीष्म के उन्हे हलकी वर्षा मे सुन पाने से पूर्व।
जो कथनीय नहीं, वह भूमि पर घूम फिर रहा है
फुसफुसाने में व्यक्त होता :
दोपहर हो गई है। ●
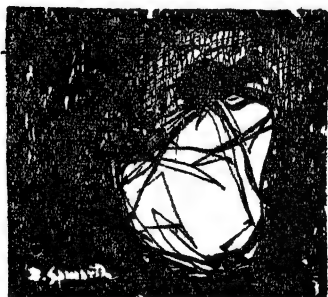
एक ग्रीक कविता

कवि • रेम्को कैम्पर्ट

पूरा तोपखाना
एक हाथ मे लिये
प्रार्थनाओं से गूँजते
काले आसमान के नीचे
मै खडा रहा।

एक खाली दीवाल पर
लोगो ने लिखा :
सं '' क''''ट,
कोई अक्षर अधूरा नही था।

उन्हे मेरी आँखो पर विश्वास नही रहा,
मेरी दृष्टि पर भरोसा छोड़कर
उन्होने मुझे एक घर में भेज दिया

एक घर मे, जहाँ दाँत सड रहे थे,
जो चारो तरफ पानी से घिरा था
पर जिसकी चिमनी चिड़ियो से भरी
एक पुरानी टूटती हुई चिमनी
जो चिड़ियों से जीवित थी।

जिसकी एक दीवाल सफेद थी
फिर जहाँ एक नाव भी आ गई
घर घर जाने के लिए।

उन्होने मुझे घर भेज दिया
एक हाथ में
आवाज़ों भरा थैला
और दूसरे में
पूरा तोपखाना देकर। •

सूर्य • गैरिट आशटेबर्ग

सूर्य मे आरम्भ होती है मौत
आरम्भ होती है एक प्यारा निवाला लेते हुए
बंधन तोड गर्म खेतो पर दौडती हुई धूप।
नंगी सड़को पर अपने पवित्र पाँवो से जाते है हम
उस सर्वशक्तिमान ने हमे विच्छेदित किया........
और कही पराजय सही गई है।
अपना रक्त—काले सूर्यों के साथ मिलाने को हर माँ
स्वेच्छित है
हमारे रक्त कोणो से उठाकर...........
ओ वसन्त—सूर्य नशे मे चूर दौड़ता है बन्धन-मुक्त। •

पिता के लिए • हन्स लोडईजिन

पिता : हम रहे साथ
धीमी चलती रेलों में फूलो बिना
वे राते : फेकती थी हस्तावरणो की तरह
पिता : हम रहे साथ
उस अंधकार में भी पिता
जब तक पिट नहीं गये हम चुप में—
अब तुम गये कहाँ—किधर घुड़सवारी में
एक हरी कार—ठण्डी छोटी हवा में
अथवा दिन ने नहीं उतारे अपने हस्तावरण
उस मेज़ पर जहाँ रोशनी की लकीरें
मुलायम आरामदेही का आगमन निश्चित है।
मेरे ओठ
मेरे नाजुक ओठ बन्द हैं........... •

एक लड़की • आद्रियाँ मोरिश्रन

मेरे ग्रन्दर है, मेरा रक्त भी ध्वनि हीन
जीवन को दोबारा रखने के लिए
मेरे भयभीत हाथ
मेरी गोद—लज्जा से प्रताडित
संकुचित और चकित।
मेरे हिमपिण्ड छोटे हैं—उन्हे आवृत्त करने
मैं पहनती हूँ, गीतमय रेशम अपने अन्दर
ओ मेरे समय
छोड दो मुझे इस अजानबोध और यौवन के मोह मे
मैं बहुत छोटी हूँ
लघुतम………। •

एक बच्चे की मौत पर • मॉरिस गिलियाम्स

हमारी अंगुलियाँ जुदा हैं।
'क्रॉस' के नीचे
तुम्हारे अंधे बाल सो रहे हैं।
अपनी आँखों की स्मृति में
एक बार फिर पहुँचते हैं तुम्हारे पास।
स्वप्न से अधिक
बीते दिनो में और हमारे कार्यो में
एक अदेखी क्रिया
कि—तुम्हे ले लिया गया है। •

डच कविताओं के अनुवादक : गंगाप्रसाद विमल

आइसलैण्ड की एक कविता

? • सिगुरदुर ए० मैग्नुसन

समय के पीछे
किसने मुझे माँ के गर्भ से निकाला
कौन मुझे हाथ मे कसकर पकड़े है
समय के पीछे
प्रश्न यह है :
कुण्डली सर्प सेब के साथ •

गांव • बोरिस पास्तरनाक

शोर थम गया है । मै रगमंच पर आ गया हूँ ।
द्वार के चौखटे पर झुककर
मैं सुदूर ध्वनि मे यह सुनने की चेष्टा करता हूँ
कि मेरे जीवन मे क्या क्या घटेगा !

हज़ारो ऑपेरा-चश्मो से रात्रि का
सर्वग्रासी अंधेरा मेरे ऊपर केन्द्रित हो रहा है।
अब्बा, पिता, अगर यह सम्भव हो तो
यह प्याला मेरे सामने से हटा लो ।

तुम्हारा यह कठोर नाटक मुझे पसन्द है
और मै यह अभिनय करता सन्तुष्ट भी हूँ।
पर यह दूसरा नाटक शुरू हो रहा है,
इसमें मुझे अपनी इच्छा कर लेने दो ।

दृश्यो का क्रम निश्चित हो चुका है
और मार्ग का अंत भी सुनिश्चित है ।
मै अकेला हूँ, सब डूबा जा रहा है ।
जिन्दगी मे चलना मैदान में चलना नही है । •

व्लाडीमीर मायकोव्स्की

तुम्हारा ख्याल है तुम कर सकते हो ?

सहसा मैंने रोज़मर्रा के नक्शे को समुद्री लहरो पर दे मारा
और गिलास के भीतर से रंगों के इंद्रधनुष इधर उधर छितराये ।
जिलेटीन की तश्तरी से मैने निकाली
समुद्र के गालो की तिरछी तिरछी हड्डियाँ ।
नन्ही एक मछली के पंखो मे
मैंने नये ओठो की आकाक्षाएँ पढ़ीं ।
और तुम,
क्या तुम पानी के नलो की बाँसुरी पर
स्वप्न-संगीत बजा सकते हो ? •

उपयोग • ज्यार्जी इवानोव

अमानवी भाग्य से क्या
तर्क किया जा सकता है ? क्या युद्ध
किया जा सकता है ? सब धोखा है ।

पर इस उदास नीली शाम पर
अभी भी मेरा राज्य है ।

और आसमान : शाखों के बीच
लाल, किनारों पर मोतिया........
जामुनी झाड़ियों में कोयल गा रही है,
घास पर एक चींटी चल रही है :
शायद किसी को इसका उपयोग हो ।

शायद इसी तथ्य का कुछ उपयोग हो
कि मै हवा मे सांस ले रहा हूँ,
कि मेरा ओवरकोट बायी तरफ
सूर्यास्त की रोशनी मे नहा रहा है
और दायी तरफ सितारों में डूबा जा रहा है। •

बाबी यार • एव्जेनी एव्टुशेंको

बाबी यार किएव (रूस) के बाहर एक खड्ड का नाम है,
जहाँ नाजियों ने ७० हजार यहूदियों को जीवित
मार डाला था।
••

यहाँ कोई स्मारक नही खड़ा है ।
मुझे डर लग रहा है ।
आज मेरी उम्र उतनी हो गई है
जितनी सम्पूर्ण यहूदी जाति की है
मैं अब अपने को देखता हूँ
यहूदी हूँ मैं ।

यहाँ मैं प्राचीन मिस्र के मध्य से गुजरता हूँ।
यहाँ मैं मारा गया हूँ, क्रास पर चढाया गया हूँ,
और आज दिन तक कीलो के घाव शरीर पर लिये हूँ।
मै अपने को
ड्रेफस के रूप मे देखता हूँ।
यह फिलस्तीनी भेदिया भी है, न्यायाधीश भी है।
मै सीखचो के भीतर हूँ।
घिर गया हूँ।
लोग मुझ पर पत्थर बरसा रहे है, गालियाँ दे रहे हैं, थूक रहे हैं।
चीत्कार करती स्त्रियाँ
मेरे चेहरे पर पट्टियाँ बाँध रही हैं।
तब मै अपने को देखता हूँ—
बियालिस्टाक का एक नौजवान लड़का।
खून बह रहा है, धरती भीग गई हैं।
बार-रूम के उपद्रवी लफंगे
जिनसे वोडका और प्याज की बू निकल रही हे—
असहाय, मुझे एक बूट ठोकर से परे डाल देता है।
इधर वे शोर कर रहे है
"यहूदियो को मारो, रूस जिन्दाबाद।"
उधर एक दुकानदार मेरी माँ को मार रहा है।
ओ मेरे रूसी भाइयो!
मैं जानता हूँ
तुम प्रकृति से
अन्तर्राष्ट्रीय हो।
परन्तु जिनके हाथ साफ नही रहे
वे अक्सर तुम्हारा पावन नाम लेते है।
मै अपने देश की श्रेष्ठता जानता हूँ।
कैसे दुष्ट है ये सैमाइट-विरोधी
जो बिना संकोच के अपने को
'रूसी जातीय संघटन'† कहकर पुकारते हैं।

---

† एक संस्था जिसने ज़ार युग मे यहूदियो का नाश कराया।

मैं अपने को देखता हूँ
एन फ्रैंक के रूप में,
वसन्त की शाख़ सा कोमल।
मै प्यार करता हूँ।
भारी-भरकम शब्दो की मुझे जरूरत नही है।
मेरी ज़रूरत है
कि हम एक दूसरे को समझे।
हम कितना कम देख
या सूंघ सकते हैं!
पत्तियां हमें मना है
आकाश मना है
फिर भी हम यह सब कर सकते हैं—
आलिंगन
अन्धेरे कमरे मे कोमलतापूर्वक।
वे यहाँ आ रहे हैं?
डरो नही।
यह आवाज तो वसन्त की ही है
वसन्त यहाँ आ रहा है।
तो मेरे पास आओ।
जल्दी से अपने ओठ दो।
क्या वे नीचे द्वार तोड़ रहे है?
नही, यह तो बर्फ़ टूट रही है········
बाबी यार पर जंगली घास लहरा रही है।
वृक्ष बड़े अमंगलसूचक लग रहे है
मानो न्यायाधीश हों।
यहाँ सब वस्तुएं मौन रोदन कर रही हैं
और अपना सिर खोल लेने पर
मैं अनुभव करता हूँ कि
मेरे बाल सफेद हुए जा रहे हैं।
और मैं खुद
यहाँ गड़े हज़ारों हज़ारों के ऊपर
एक गहरे, ध्वनिहीन, रोदन से व्याकुल हूँ—

मै वह वृद्ध हर हूँ
जिसे यहाँ गोली लगी,
वह हर बालक हूँ
जिसे यहाँ गोली लगी।
मेरी सत्ता यह सब
कभी नही भूलेगी।
गरजने दो
अन्तर्राष्ट्रीयता को
जब तक इस धरती का
एक एक सेमाइट विरोधी न मर जाय।
अपने आसुरी क्रोध मे
सब सेमाइट-विरोधियो को
मुझसे घृणा करने दो
जैसे मै यहूदी ही होऊँ।
और इसी कारण
मै सच्चा रूसी हूँ। ●

कौआ ● अलेक्ज़ांदर येसेनिन-वोल्पिन

एक रात, आतंक के दिनों मे, मैं थॉमस मोर को पढ रहा था
कि कहीं यूटोपिया की उपेक्षा मेरे ही सिर न मढी जाय
उसके लम्बे उबानेवाले विवरणो मे मैं ढूँढ रहा था
युद्ध-मुक्त देशो में आवारगी के लिए कैद किये जाने का समर्थन
क्योकि इस········जैसी आवारगी के लिए युद्ध की ज़रूरत नही होती
क्या थॉमस मोर गहरी बात कहता है?

··· और मै उस राष्ट्र के बारे मे सोचता रहा, जहाँ
स्वतंत्रता अपमानित होती है ···
सहसा द्वार पर आहट हुई····कौन आया है इतनी रात को?
शंका और दुख से भरकर मैं चिल्ला उठा, 'यह दोस्त नही हो सकता,
मेरे सब दोस्त जेलों में बन्द है····ज़रूर कोई चोर होगा।'

उल्लसित आशा से मैंने पुकारा, 'चोर, आओ भीतर आओ।'
पर आवाज आई काँव काँव, 'फिर नही।'

समझ गया। यह वह पुरातन कौआ था। जल्दी से
मैंने खिडकी खोली और परिचित महान कौए को सामने देखा।
बेसब्री से भीतर घुसकर उसने परीक्षा की दृष्टि चारो ओर डाली,
हडबडाकर मैंने उससे कहा, 'तुम जमीन पर ही बैठ जाओ,
इस घर मे मेज़ कुर्सी नही है, कृपया जमीन पर ही बैठ जाओ।
ज़मीन ही है, और कुछ नही।'

कुछ खिन्न-सा, कुछ रुष्ट-सा वह जमीन पर बैठ गया ......
तभी परदे खुल गये ....मेरे पास किताबे बहुत हैं
फड़फडाकर उसने उन्हें देखा और अपनी काली शक्ल
सामने करके आँखे मिचकाईं और 'मोर' शीर्षक पर चोंच मारी
सहसा उत्तेजित हो वह 'मोर' पर चोंचे मारता ही रहा
और काँव काँव कर बोला, 'यह नही।'

मैं चकित रह गया। बोला 'ऊपर बैठे तुम मेरे आचरण की
ऐसे कठोर शब्दो मे भर्त्सना क्यो करते हो, मायावी पक्षी,
ऐंठना छोडकर अपने मन की बात आधी तो कहो, कैसे
तुम्हारी खाईं को पार करूँ ? मैं डरता रहा हूँ कि इससे पहले
भ्रष्ट क्षेत्रों में ऐसी खाइयाँ और भी अनेक बन चुकी हैं .. ....
पर वह बोला काँव काँव, 'फिर नही।'

कौवे, ओ कौवे, समग्र ग्रह सैनिकों को चाहता है, कवि को नही।
तुम शायद हमारे मतभेदो को अच्छी तरह समझ नही सकते।
क्या पता, इस युग की हमारी लड़ाइयों के विषय में कल की प्रतिभाएँ
क्या लिखे; नयी कृतियो का मुकुट, लोकवार्ता का चतुर उपयोग;
और शायद हमारी कल्पित वार्ता को ही विषय बनाया जाय।
पर कौवा बोला काँव काँव, 'नही नही।'

ओ पैगम्बर, तुम सामान्य पक्षी नहीं, क्या ऐसा विदेश कोई नही
जहाँ कला पर स्वतंत्र विचार भयप्रद न होता हो ? क्या मैं
ऐसे देश में, अगर हो तो, कभी पहुँच सकूँगा और मारा नहीं जाऊँगा ?

पीरू मे या नीदरलैंड मे, क्या मैं यथार्थवादी और रोमांसवादी
झगड़े की पुरातन समस्या का कभी निर्णय कर सकूँगा ?
पर कौवा यही बोला, 'कभी नही ।'

'नही, नही ।' कौआ बोलता रहा ·· ··· 'ऐसा देश समुद्र के पार है '
तभी सहसा दो सैनिक भीतर घुस आये, साथ में चौकीदार लिये,
मैंने उनका स्वागत नही किया, बल्कि मुख पर थूक दिया,
और कौवा, गम्भीर कौवा, कॉव कॉव करता रहा, 'नही नही ।
'फिर नही ।' और अब मैं भी ठेला घसीटता कहता हूँ, 'फिर नही ।'
अब फिर उठना नही है·······कभी नही ।●

आख़िरी कविता • जी० बकोविया

जिसे कोई नही जानता, उसे भूलने के लिए मुझे शराब पीना चाहिए,
गहरे गोदाम मे छिपा, कुछ भी न बोलता मै वहाँ बैठूँगा
धूम्रपान करूँगा और अपने आप से भी लुप्त हो जाऊँगा,
शायद दुनिया से बचने का और कोई उपाय नही है।

जिन्दगी को सडको पर चिल्लाने और मौत को
पटरियो पर चलने दो, सर्दियो मे कष्ट को अकेला छोड दो, पास से
गुजरते सुखी कवियो को शोकगीत लिखने के लिए।
जानता हूँ........
स्वप्न की भूख काफ़ी नही है
स्वप्न की रचना के लिए;
मेरे ऊपर की बारिश, तूफान और ओले
मेरे समय के इतिहास का अन्त होगे।
लोग कहते हैं कि दुनिया मेरा इन्तजार कर रही है।
प्यार करने को........पर मुझे शक है,
प्यार सदा द्वीपद्वीय होता है। यह मै जान सका
उन्ही की तरह कहकर, 'आओ, महान् भविष्य मेरे पास आओ।'

लेकिन मैं, जिसे कोई नही जानता, उसे भूल जाने को छुट्टी चाहूँगा,
अपने अपराधो की माफ़ी मांगता और उनकी भी
जो मुझे सडक के दूसरी पार से देख रहे है, उनके ओठो से
भर्त्सना का कोई शब्द नही निकलता। वे उदासी से मुस्कराते है:
'शायद दुनिया से बचने का और कोई उपाय नही है?' •

माग्दा इसानोस

यदि न्यायपूर्वक बांट लिया होता

ऊपर के पहाडों के दरों में
मैं विभाजित हुआ रहता हूँ

मेरा सिर चट्टानो से मिलता जुलता है
जो शिखरो की प्रशंसा से गूँज रहे हैं
शिखर : जिन्हे मैं कभी छू न सकूँगा
न जो कभी प्रकाशित ही होंगे ।

यदि इस संसार का सब दर्द
न्यायपूर्वक बाँट लिया गया होता,
कुछ दुख तुम्हारे लिए, कुछ मेरे लिए
तो मैं इस जवानी मे न मरता ।
ग्रौर भी काफ़ी समय तक मै
सूर्य ग्रौर हरियाली का ग्रानंद ले पाता,
ग्रौर भी काफी समय तक मै
वनो ग्रौर वृक्षो के वाद्यो पर गीत गाता,
कितने उद्यान लूटे जाने को शेष हैं;
मै सेबो, संतरो ग्रौर फूलो की
गोलाइयो को ग्रच्छी तरह नाप सकता ।

यदि इस ससार का सब दर्द
न्यायपूवक बाँट लिया गया होता,
तो ग्रौर भी कुछ समय तक मैं
खेतो की रोशनी को काट सकता ।
लेकिन मैं ग्रपने दोस्त को पुकारूँ
जो मुझे इन पहाड़ो की सुइयाँ ला दे,
ऊँचे ग्रासमान में, हवाग्रो के पास
जो मेरे सिर के पास चलने को ग्राती हैं;
गडरियों की चुपचाप जलती अग्नि के पास ।
जिंदगी ! कुछ के लिए तुम पकवानो भरी मेज़
होती हो, मेरे लिए घोड़े की सख्त लगाम
जो बेकाबू इधर उधर दौड़ता फिरता है ।
तुममे खुशी का या डर का कोई, संतुलन नही है,
मे तुमसे मिलता हूँ, दुख पाता हूँ, छोड़ देता हूँ, भूल जाता हूँ ।●

तीन स्पेनिश कविताए

आत्महत्या • गार्सिया लोर्का

(जो इसलिए हुई कि तुम अपनी ज्यामिति नहीं जानते थे)

बच्चा चेतना खो रहा था ।
सुबह के दस बज रहे थे ।

उसका हृदय भर उठा था
टूटे डैनो, मुरझाये फूलो से ।

उसे लगा कि उसके मुख मे
एक ही शब्द शेष रहा है ।

जब उसने दस्ताने उतारे,
कोमल राख उसके हाथो से गिरी ।

खिडकी से एक मीनार दिखाई देती थी ।
उसने खुद को खिडकी और मीनार अनुभव किया ।

उसने देखा कि सामने रखी घडी
स्थिर दृष्टि से उसे ताक रही है ।

सिल्क के सफेद दीवान पर
उसने अपनी शात लेटी छाया देखी ।

कठोर ज्यामितिक बालक ने
हथौड़े से आईना चूर चूर कर डाला ।

उसके टूटते ही छाया की एक बडी धार
अयथार्थ विश्रामघर पर हमला करने लगी । •

दुराशंका • रफाएल आलबेर्ती

तुम्हारे पीछे, कंधो के पास,
कोई अपने शब्दों से
तुम्हारे नेत्रों को बाँध रहा है ।

तुम्हारे पीछे, शरीर-हीन

आत्माहीन।
सपने मे धुएँ से भरी आवाज़
जो टूट जाती है।
धुएँ से भरी आवाज़
जो टूट जाती है।

अपने शब्दो से, झूठे झरोखों से।

अंधे बनकर, मृत्यु के साथ चलते
सोने की सुरंग से
जिसमे काले शीशे जड़े है
तुम एक गली मे घुसते हो।

गली में तुम खुद ही
अपनी मौत से मिलते हो।

और कोई तुम्हारे पीछे, कंधो के पास,
जहाँ भी तुम जाओ। •

सांड की तरह • मिगुएल हरनान्देज़

साँड की तरह मै शोक और दुख के लिए
पैदा हुआ, साँड की तरह मै अपनी बगल मे
नारकीय चिन्ह से अंकित हूँ, और मनुष्य के
रूप मे अपनी जाँघो में एक बीज से।

साँड की तरह मैं अपना अमाप हृदय
बहुत छोटा पाता हूँ, और चुंबनयुक्त
प्रेम के समक्ष मैं तुम्हारे प्रेम के लिए
साँड की तरह युद्ध करता हूँ।

साँड की तरह मैं दंड से बढ़ता हूँ,
मेरी जिह्वा मेरे हृदय मे नहाई हुई है,
मेरी गर्दन पर सबल पछुआ हवा चलती है।

साँड की तरह मै तुम्हें भगाता और तुम्हारा
अनुगमन करता हूँ, तुम मेरी आकांक्षा
साँड को चिढ़ाने की तरह, तलवार पर रख दो। •

दो युगोस्लाव कविताएं

रेलगाड़ी • इवान इवानजी

कौन जानता है, कोई कहाँ और क्यों जाता है,
कब, कैसे और किसके साथ वह मिल जायगा ?
सभी ग्रह नक्षत्र आकाश के मध्य
अपनी असमाप्य यात्रा में
बिना कहीं पहुँचे, गुज़रते रहते हैं।

और सभी यह पाते हैं कि
शहरो मे स्टेशनो पर और गाँवो में 'स्टॉपेज' पर
उनकी प्रतीक्षा करने वाला भाग्य अंधा ही है
(क्योंकि कुछ को ज्यादा और कुछ को कम मिलता है)

शायद एकाध मिनिट के लिए
गाड़ी कही रुकेगी और यह कोई नही जानेगा
कि यह चलती क्यो नहीं है ?
फिर चलने पर यात्री अपने गंतव्य का अनुमान करता है;
पर उसी स्टेशन पर बडी देर हो जाती है। •

साया में चेहरा • वेस्ना परुन

यद्यपि मुझे उसका नाम याद नही है
पर मैं जानती हूँ
कि पक्षियों को वह बहुत प्रिय था
और मेरी आँखों में
उसकी मीठी मुस्कान उतर-उतर आती है

चारो तरफ लोग चल-फिर रहे हैं
पर मैं अपना मुँह नही मोड़ती
क्योंकि मैं पुराने तूफानों की
आवाज़ों में डूबी हुई हूँ

समुद्री पक्षी भी अपने मृत मित्र को भूल चुका है
तो तुम्ही क्यो शोक करती हो ?
पक्षी पहाड़ी पर बने अपने घोसले को भूल चुका है
उत्तर और दक्षिण अब उसे समझ नही पड़ता

समुद्र अभी भी अशांत है
पर मैने परदा गिराया नही है
मैं रक्षा माँगती हूँ नुकीले वृक्षों के दंड से
समुद्री गहराइयो के भय से। ●

लैटिन अमेरिकन कविता

•

मैक्सिको :

ऑक्टाविग्रो पाज़ : अग्रणी मैक्सिकन कवि और विचारक, इटली मे राजदूत रहे। अब भारत में राजदूत हैं !

एनरीक़ गोंज़ालेज़ मार्टीनेज़ : (स्व०) पुरानी पीढी के होने पर भी नयी पीढी के कवियों से आगे। गहन बौद्धिक कविताएं लिखी।

लुई करनूदा : स्पेन छोड़कर मैक्सिको मे रहने लगे। कविता पर पर्याप्त यूरोपीय प्रभाव।

ज़ेवियर विलोरूशिया : (स्व०) कवि, नाटककार, अनुवादक, अमेरिकी कविता से प्रभावित।

क्यूबा :

रेने एरिज़ा : क्यूबा के युवक कवियो में अग्रणी।

इसेल रिवेयरो : नयी पीढी के प्रमुख कवि।

पेरू :

सेज़ार वलेज़ो : (स्व.) प्रसिद्ध कवि, राजनीतिज्ञ। फ्रैंच शैलियों से प्रभावित फ्रांस में ही ४२ वर्ष की अवस्था में मृत्यु।

इक्वेडोर :

जॉर्ज करेरा अन्द्रादे : इक्वेडोर के प्रसिद्ध कवि, दुनिया भर में घूमे हैं।

युरुगुवे :

जूलियो हरैरा य ' रीसिग : (स्व०) उत्तर स्पेन की लैण्डस्केप सम्बन्धी कविताएँ बहुत प्रसिद्ध हुईं, यद्यपि वहाँ कभी नहीं गये।

ब्राज़ील :

मानुएल बान्देरा : आधुनिकतावादी कवियो में अग्रणी, कई संग्रह प्रकाशित।

अर्जेण्टाइना :

जॉर्ज लुई बोरेजीज : आतंकपूर्ण कहानियो के कारण पिछले दो वर्षों में बहुत प्रसिद्ध हो चुके हैं। कविताएँ कम ही लिखी।

रिकार्डो ई० मोलीनारी : अर्जेण्टाइना की खुली विस्तृत भूमि, नदियों व पहाडो के कवि। पुराने व नये का अद्भुत सम्मिश्रण।

सिल्वीना ओकेम्पो : प्रसिद्ध कवयित्री, रवि बाबू से घनिष्ठतः सम्बद्ध रही। आपकी बहन प्रसिद्ध पत्रिका 'सूर' की सम्पादिका रही।

चिली :

पाब्लो नरुदा : विख्यात कवि, शक्ति और तेज के धनी, अति यथार्थवाद का अनुकरण करने के बाद कम्यूनिस्ट हो गये।

बिन्सेंते हुइदोब्रो : पेरिस मे दादावाद और अति-यथार्थवाद का अध्ययन किया। फिर अपने देश मे ये प्रभाव लाये।

लपट • ऑक्टावियो पाज़

आकारो और रोशनी के खण्डहर तुम्हारी गहरी छाया को
पूजते हैं; प्यार, जिसकी परछाईं की ओर
मेरी हाँपती हुई साँस भागती है, एक जीवित वृद्ध
जो अपनी अस्पष्ट कडकड़ाहट से पूर्व
विद्युत् की चमक की तरह उगता और उठता है।

एक देवता-प्यार-उन्मत्त और काला,
नाम और वाणीहीन जीवित देवता,
गहरी स्तब्धता को गीत में परिणत करता है,
मेरी शक्तिहीन जिह्वा को चीख मे बदलता है,
मंदगामी दुनिया को लपट बना देता है,
जो अपनी अग्निमय छातियो मे एक और
अतृप्त, गुप्त और भयंकर अग्नि छिपाये है;

इस लपट के लिए बुलबुल विलाप करती है,
बच्चे, आकार, बीज के तूफ़ान, अश्रु और रोदन
रात को पार करते हैं, जब तक कि उनके गुस्से
के झागो के प्रवाह पृथ्वी की सीमा तोड़ नही देते;

दुनिया इसी जीवित लपट के लिए मरती है,
प्रेम की महिमा मे ऊँचे उठकर, और औरते
पृथ्वी पर दौड़ती फिरती हैं, पागल घोड़े अपने
जलागारों की अपेक्षा हृदय की धड़कनो के
काले चश्मो से पानी पीना पसन्द करते हैं,
जब तक कि वे अपनी खतरनाक साँस से
मेरे शरीर के स्थिर प्रभात-तारे को ढक नही लेते;

इस तीखी लपट के लिए रक्त बहता है,
मेरे कानो मे एक तूफ़ान फट पडता है,

मेरी झुलसी हुई ज़बान गूँगी हो जाती है
और दिल की धड़कनो के पुल पर हम मौत
और शून्यता को पहुँचने तक दौड़ते रहते हैं :

इस गुप्त लपट के लिए मैंने दुनिया बुझा दी,
जो भी इसे नहीं चाहता, उसे मैं नष्ट करता हूँ,
छायाओं के भीतर मैं इसे पहचान सकता हूँ
और इसके रक्त में सदा के लिए डूब जाता हूँ। ●

बंद बग़ीचा • एनरीक़ गोंज़ालेज़ मार्टीनेज़

मेरे प्रतीक्षारत हृदय पर, भविष्य या विस्मृत भूत से
उठती आवाज़ें, जो कभी जीवित थीं, और आत्माएँ,
जो कभी जन्मी ही नही, यूँ द्वार खटखटा रही हैं
मानो, यह कोई बेहद पुराना घर हो :

प्यार की पहली रात की मधुर ध्वनि
चाँद की रोशनी का तरंगहीन संगीत
जीवन भर व्यर्थ चेष्टा से पालित आदर्श.......

मैं इस खटखटाने का रहस्य जानता हूँ :
बीते हुए दिनों में इसने वह दाहक ज्वर दिया
जिसको आज ज़िन्दगी विनयपूर्वक छिपाना चाहती है—

आत्मा ने साग्रह मौन होकर रात्रि का दीप
जला लिया है, द्वार बन्द कर लिये हैं.......
और अब वह कोई उत्तर नहीं देती। ●

बहुत पहले का वसंत • लुई करनूदा

अब इस संध्या के बैंगनी सूर्यास्त में
जब फूलो मे गिरी ओस से मैग्नोलिया भीगे हैं
उन सड़कों से गुजरना, आसमान में चाँद को

बढ़ते हुए देखना, एक जाग्रत स्वप्न-सा होगा....

पक्षियों के दल अपने विलाप से आकाश को
विस्तृत कर देंगे, फुहारे का जल अपनी शुद्धता से
पृथ्वी की गहरी आवाज़ को ऊपर बिखेरेगा
और तब आसमान और धरती एकदम चुप हो जायेंगे....

निर्जन के किसी कोने में, अकेले अपना सिर
अपने हाथों में लिये, प्रतिहिंसक प्रेत की तरह,
तुम यह सोच सोचकर रोते रहोगे कि
ज़िन्दगी कितनी खूबसूरत थी और कितनी व्यर्थ ... •

बर्फ़ में कब्रिस्तान

ज़्येवियर विलौरुशिया

बर्फ़ में कब्रिस्तान जैसी चीज़ दुनिया में दूसरी नहीं है।
श्वेतता पर रखी श्वेतता के लिए क्या नाम है ?
आकाश ने कब्रों पर बर्फ़ के अनुभूतिहीन पत्थर फेंके हैं
और अब बर्फ़ पर बर्फ़ के सिवा कुछ भी शेष नहीं है—
हाथ पर सदा के लिए रखे हाथ की तरह।

पक्षी आसमान को पार करना चाहते हैं
हवा के अदृश्य गलियारों को घायल करने के लिए
कि बर्फ़ के एकांत को कोई भी बाधा न रहे
वह समग्र हो सके
बर्फ़ की ही भाँति जीवित रह सके

क्योंकि यह कहना पर्याप्त नहीं है
कि बर्फ़ का कब्रिस्तान स्वप्नहीन निद्रा की तरह,
खुली-खाली आँखों की तरह होता है—
यद्यपि इनमें कोई अचेतन और निद्रित शरीर होता है
एक नीरवता पर दूसरी नीरवता के गिरने-सा
विस्मरण के रिक्त आग्रह-सा,
पर बर्फ़ के कब्रिस्तान जैसी दूसरी कोई चीज़ नहीं है—

बर्फ़ यद्यपि सभी वस्तुओं पर नीरव होती है
पर रक्तहीन समाधि पर, उन ओठों पर
जो अब कुछ नहीं बोलेंगे, उसकी नीरवता और भी बढ़ जाती है— •

दो क्यूबियन कविताएं :

लौटने पर • रेने एरिज़ा

मैं उस यात्रा से लौटा हूँ
जिसमे स्वतः को निर्वासित समझता था
मैं आईनों में देखता हूँ
अरे, यह मैं ही हूँ ?
शायद मेरी आँखें अब
नगर जैसी हो गई हैं
पर यह मैं ही हूँ
मैं पुरातन आईनो के
मकड़ी-जाल से पराजित हूँ

पारदर्शिता
विदेशी ईश्वर को दिये
चुम्बन के अंधेरे मे
डूब गई है
पर उस अंधेरे मे भी
डहलियो का प्रसव सम्भव है

उस कोण के भीतर छुपा हूँ
जहाँ मेरे अश्रु मुझे पा नही सकते,
उस भूमि को खाली हाथ
गुप्त रूप से लूटता,
हँसी को घसीटता, हड्डियों से ढका
....पीछे....नीचे....मै हूँ। •

कितनी धीमी • इसेल रिवेयरो

कितनी धीमी है यह उडान
नगर से ऊपर उठते कबूतरो की
रोशनी के उनके पंख कितने सड चुके है

जिन पर नयी तरह के कीड़े पैदा हो रहे हैं
गेहूँ की बालियो पर हवा कितनी धीमी है
कितनी धीमी है गति इस नये विनाश की
इस नगे युद्ध की ।

मेरे ओठ इस युग की प्रशंसा करने को अभिशप्त हैं
धीमी ध्वनियों और संहारों का यह युग
प्रशंसा करके भूल जाने को ।
जी नहीं,
मैं इसमें कोई भाग नही लूँगा ।
इस नये हत्याकाण्ड से
मेरा नाम अनुपस्थित रहेगा ।

कितनी धीमी है बोध की यह प्रतिक्रिया ! ●

पेरू की एक कविता

अनंत चौपड़ • सेज़ार वलेजो

हे ईश्वर, मै जो हूँ उसके लिए रो रहा हूँ
तुमसे अपनी रोज़ की रोटी लेने के लिए मैं दुखी हूँ
यह बेचारी विचारशील मिट्टी तुम्हारी बग़ल मे
सूख सूखकर उखड़ती पपडी नहीं है—

हे ईश्वर, अगर तुम आदमी होते
तो तुम जानते कि ईश्वर कैसा हो
पर तुम, जो हमेशा ईश्वर ही रहे,
अपनी सृष्टि को कुछ समझ ही न सके
आदमी धीरज से तुम्हे सहता है—ईश्वर वह है।

आज जब मेरी मंत्रमुग्ध आँखो मे मोमबत्तियाँ
यूँ जल रही हैं जैसे मैं दण्डित व्यक्ति होऊँ, तुम भी,
हे ईश्वर, अपनी रोशनियाँ जला लो और आओ
हम चौपड़ का पुराना खेल खेले····पर शायद, ओ
जुआरी, जब सारी दुनिया तुम्हारे सामने आ गिरेगी,
तब मौत की खाली आँखें मिट्टी के दो पासे बन
उसे आखिरी तौर पर जीत लेगी।

हे ईश्वर, इस अंधी और बहरी रात मे
तुम खेल नहीं सकोगे, क्योकि पृथ्वी एक
घिसी हुई चौपड़ है, जो लोट-पोट होने के कारण
गोल हो गई है, और इसलिए कब्र के
खोखले के अलावा यह कही रुक नही सकती। •

इक्वेडोर की एक कविता

मिट्टी के घर • जॉर्ज करेरा अन्द्रादे

मै ताश की इमारत मे रहता हूँ,
रेत के घर मे, हवा के महल मे,
और हर मिनिट दीवाले ढहने के,
बिजली गिरने के, इन्तज़ार में बिताता हूँ,
स्वर्ग से न जाने कब नोटिस आ जाये,
ततैये की उड़ान में मौत आ धमके,
खूनी कोड़े-सा धुप्पम आकर
फरिश्तों की राख हवा में उडा दे।

तब मेरा मिट्टी का घर नही रहेगा
और मैं खुद को नये सिरे से नंगा पाऊंगा,
मछलियाँ और चमकते सितारे, अपने
उलट चुके स्वर्ग मे, वापस लौटने लगेगे।
जो भी यह रंग है, पत्तों या नाम है,
मिलकर मुश्किल से एक रात हो सकेंगे,
और सिफ़रों, डैनो और प्रेम के शरीर पर,
जो फलों और संगीत का बना है,
आखिरी तौर पर, निद्रा या छाया की तरह
असमरणीय धूल छा जायेगी। •

युरुगुवे की एक कविता

कृगाणयों का रंगमंच • जूलियो हरेरा य' रीस्सिग

लैण्डस्केप है बाइबिल के एक अबोध पृष्ठ-सा·······
मृत्योन्मुख संध्या एक पर्वत पर झुकती है और
सूर्य की अन्तिम किरण इधर उधर बिखरे घरौंदो मे
एक बेहद महीन-सा धागा पिरो देती है—

एक भाप उठती है, चुपचाप, गले के अनवरत
भारीपन की, एक गहरी असंगति की·······
गाँव के सामने रात धीमे से मुस्कराती है
श्वेत चेतना लिये खुशनुमा मौत-सी

जैतूनी और हरे-नीले मैदानो में भेड़ों के दल
मेघाकार कुहेलिकाओ से एकत्र होते हैं
जैसे सौ रुचिर वर्ष एक एक कर खुल रहे हों

एक टिड्डा गुलाब-गंधित शान्ति को भंग करता है
बगल मे खडी, चाँद का आलिंगन करती, फैक्ट्री
आज की वस्तुओ में विगत का रोमांस भर रही है। •

ब्राजील की एक कविता

पूर्ण मृत्यु • मानुएल बान्देरा

इस तरह मरना
कि कोई निशान
कोई छाया शेष न रहे
छाया की स्मृति भी शेष न रहे—
किसी मानव हृदय में
मानव मस्तिष्क मे
मनुष्य की त्वचा मे ।

ऐसी पूर्णता से मरना
कि किसी दिन यदि कोई
तुम्हारा नाम किसी पृष्ठ पर देखे
तो पूछे, 'यह कौन था ?'........

इससे भी ज्यादा पूर्णता से मरना
कि यह नाम भी न रहे । •

उपवन • जॉर्ज लुई बोरजीज़

शाम होते ही
उपवन के दो या तीन रंग थकने लगे।
पूर्ण चन्द्र की महती मित्रता
पहले-सी हलचल नही पैदा करती।
आज आसमान तीखा है
शायद किसी फरिश्ते की मौत का संकेत दे।
उपवन, आकाश और शिखर से संचालित।

उपवन वह खिड़की है
जहाँ से ईश्वर आत्माओ को निरखता है।

उपवन वह ढाल है
जिस पर लुढककर स्वर्ग घरो में आता है।
गम्भीर अनन्त
सितारो के चौराहे पर प्रतीक्षा करता है।
कुआ, छज्जा और पेड़-पत्तियो की दोस्ती मे
जीवन बिताना कितना खूबसूरत है। •

नहीं आयेगा • रिकार्डो ई० मोलीनारी

नही, यह वापस नही आयेगा, यह प्रकाश,
यह सबेरा, न यह सुन्दर वसंत, जो खो गया है।
अब ये वापस नहीं आयेगे, असम्भव, नही,
न जीवन, न नाश, न पवन, न मानवी आकांक्षा।

नही, वे क्यों आयें ? कोई नही लौटता— व्यर्थ है सब—
न कुछ दिन पहले का गुलाब जो झड चुका है,
न वह रंगबिरंगी शाखा, न वह जली हुई पत्ती,
न वह चेहरा, न वह नदी, न जीवन का वह गर्वित समय।

नही, कभी नहीं, ओह मेरी मृत्यु–कितनी भयंकर !
मुझे समृद्धि में रहने दो या दरिद्रता, अपमान,
चरम अत्याचार और पूर्ण नाश मे फेक दो ।

मेरे लिए अंधी और आतंकपूर्ण,
कठोर, नीरव—शून्यता—शायद एक लहर,
प्रेम, हाँ, जो अप्रमाणित ही आ गया है । •

निद्राहीन पैलीनरस • सिल्वीना ओकैम्पो

(पैलीनरस, नग्न तुम एक अज्ञात तट पर पड़े रहोगे)

लहरें, समुद्री सेवार और डैने,
टूटे और घोषपूर्ण शंख, नमक
और आयोडीन की बू, दुष्ट तूफान,
अस्थिर डालफिन मछलियाँ और

थके हुए सायरन-वादकों के दल भी
उन शान्तिमय देशों की पूर्ति नही कर सकेंगे
जहाँ तुम गहरे जहाजों को दूर रखने वाले
स्थिर चरणों से घूमते फिरते थे ।

पैलीनरस, तुम्हारा बंद समुद्रोन्मुख चेहरा
स्तब्ध रात्रि को जाग्रत रखता है ।
नग्न, यहाँ पड़े रहकर

तुम फिर सदा के लिए रेत पर मर जाओगे
और पत्थर की सी जड़ असावधानता से तुम्हारे
नख और बाल लताओ के साथ उगने लगेंगे । •

चिली की दो कविताए

स्थिर बिन्दु • पाब्लो नरूदा

मै कुछ नही जानूँगा, न कल्पना करूँगा :
कौन मेरी असत्ता को सिखायेगा
प्रयत्न के बिना सत्तावान होना ?

जल कैसे यह सहन कर सकता है ?
पत्थरो ने किस आकाश का स्वप्न देखा है ?

अचल, जब तक वे प्रव्रजन
दूरस्थ देश जाने को ठहरे
अपने वाणो पर चढकर
शीतल द्वीपो की ओर उड़ न चले ।

अपने गोपन जीवन में स्थिर
भूमिगत नगर की भाँति,
दिन उतरते चले जायं
पकड न आने वाली ओस की तरह :
कुछ नष्ट नही होगा, न असफल होगा,
जब तक हम फिर जन्म नही लेते,
जब तक आज दिन लुटी हुई भूमि
फिर पुराने वसन्त से भर नही जाती—
अनवरत रूप से निस्तब्ध, स्वत: को
असत्ता से बाहर निकालते हुए, अभी भी,
फूलो लदी डाल होने के लिए । •

स्त्री • विन्सेंते हुइदोब्रो

उसने दो कदम आगे रखे
फिर दो कदम पीछे रखे
पहले कदम ने कहा नमस्ते श्रीमानजी

दूसरे कदम ने कहा नमस्ते श्रीमतीजी
बाकी कदमो ने फुसफुसाकर पूछा बालबच्चे कैसे है
यह दिन बेहद खूबसूरत है मानो कबूतरो भरा आसमान

वह एक चटखती चोली पहने थी
समुद्र ने उसे झुलाकर सुलाया था
वह अपने सपने एक हवादार कमरे मे गाढ आई थी
वह अपने दिमाग मे टँगे एक मृत व्यक्ति को साथ लाई थी ।
जब वह यहाँ पहुँची उसका एक सुन्दर भाग अभी भी मीलो दूर था
जब वह चली कुछ उठा और आसमान मे पहुँचकर उसका इंतजार
करता रहा
उसकी दृष्टि बडी पीडित थी और पहाडी पर खून बरसाती रही
जब उसकी छातियाँ खुली जैसे उसकी उम्र की शाम कम्पित हो उठी
वह कबूतर को घेरे आसमान सी खूबसूरत थी
उसका मुख जैसे इस्पात का बना था
और मौत का झण्डा उसके ओठो पर लहरा रहा था
समुद्र की तरह वह हँसती और उसके पेट मे भरे अंगारो का
अनुभव करती थी
समुद्र की तरह जब वह अपने सब तटों की हत्या कर देता है
समुद्र जो उफनता है और शून्यो में गिरता है
जब जिन्दगी बहुत हलकी हो जाती है
जब सितारे हमारे सिरो पर गुनगुनाते है
उत्तरी पवन के आँखे खोलने से पहले
हड्डियो के लैण्डस्केप में वह बड़ी खूबसूरत लगती थी
उसकी जलती हुई आँखे और गिरे हुए पेड़ सी दृष्टि
जैसे कबूतरो के घोड़े पर चढा आसमान । ●

दस कनाडियन कविताएँ

बॉब डाउनिंग : कनाडा के नये कवि, कविताओ में दार्शनिक पुट, एक संग्रह प्रकाशित !

फिलिस वेब : जन्म १९२७, कोलम्बिया विश्वविद्यालय मे अंग्रेजी की प्राध्यापिका। कविताएँ शक्ति और नावीन्य से पूर्ण। अनेक बार पुरस्कृत। प्रकाशित संग्रह—'द सी इज ऑल्सो ए गार्डन'

बिल बिसेट : २३ वर्षीय कवि व चित्रकार। अपूर्व मौलिकता के धनी। भाषा की विचित्रता के कारण कविताओ का अनुवाद काफी कठिनाई से हो पाता है।

के० वी० हर्ज : नयी पीढ़ी के युवा कवि, 'कैटेक्ट' के सहायक सम्पादक। 'माउन्टेन' नाम से टाइप्ड पत्रिका निकालते हैं।

फ्रंक डिवी : २३ वर्षो से वस्तुओ के भीतर की मनोवैज्ञानिकता खोजने मे लगे है।

मार्टिना विलण्टन : २३ वर्षीया कवियित्री एवं चित्रकर्त्री। कविताएँ 'पैशन' और कामनाओ से पूर्ण।

●

सत्य • बॉब डाउनिंग

चारों तरफ शान्त स्थिर बर्फ
का विस्तार
चिल्ला चिल्लाकर यह सत्य
घोषित कर रहा है
—यह नग्न सत्य
कि अब कहने को
कुछ भी शेष नहीं है। •

टूटे हुए • फिलिस वेब

हमें पूर्णता दो, हम टूटे हुए हैं।
लेकिन यह पूछना किससे, और क्यों ?
विनाशक तत्त्व घर तक आ पहुँचा है,
वर्षों का कार्य तरंगों से टकराकर टूट चुका है।

खण्डित देवता, खुद ही मूर्तिभंजक,
क्या हम लेज़ारस से सम्बन्धित हैं ?
(कोयल का पतन ही अटूट गीत है)
'क्रॉस' धरती पर गिरकर टूट गया है,
ईसा पेरिस में एक साल बिताकर,
मेट्रो में घूम-फिरकर, 'सेन' में डूब चुके हैं।
हम अपने व्यर्थ देवता फिर से खड़े नहीं करेंगे।
ईसा के घाव अभी तक हरे हैं, अचानक ही वे
जिस-तिस आदमी पर प्रकट हो जाते हैं।
पीडा हो, तो उसका कारण भी होता है।

ऑफीलिया, हैमलेट, ऑथेलो, लियर,
किट स्मार्ट, विलियम ब्लेक, जॉन क्लेयर,
वान गोग, पिरांडेलो का हेनरी चतुर्थ,

ज्रेरार्ड डी नेर्वालि, एन्टोनिन म्रार्टोड—
ये सभी म्रन्धकार का मुकुट पहने हैं
यही ठीक भी है।

म्रपने आक्रमण के प्रति खुद जिम्मेदार
हमें उनकी परम्परा म्रौर म्रपनी मृत्यु मिली है।
ग्रीक संगमरमर, पश्चिम के इतिहास में टूटता,
श्वेत म्रौर श्वेततर होता जाता है।
यदि हम भी ऐसे ही श्वेत हो सकें—
ग्रीक सभ्यता के प्रकाश से खण्डित हो सकें—

विनाश मे एक न्याय होता है
क्यूँकि शायद वही ठीक हो।
पागलों के लिए पागलखाने बनाये जाते हैं
म्रौर मरीजों के लिए म्रस्पताल;
युद्ध म्राक्रमण का शिल्प होता है,
जिसका प्रतीक है घावों-भरा ईसा का शरीर।
हम पूर्ण या सुन्दर या म्रच्छे क्यों हैं ?
क्या बिलकुल टूट-फूट जाने के लिए ? •

नग्न कविता • फिलिस वेब

बढते हुए
हमारे घरों के बीच का
म्रंतर नापने को।
लगता है
मैं तुम्हारा स्वागत करूँ।
तुम्हारा मुख चारो म्रोर से
मेरी म्रभ्यर्थना करता है।
जगह है।
म्रौर
यहाँ
म्रौर यहाँ भी म्रौर
यहाँ भी
म्रौर तुम्हारे मुख के
चारों म्रोर, सब म्रोर।
म्राज रात
स्तब्धता। मेरे भीतर
म्रौर कमरे में।
मैं घिरी हूँ
एक विचार से
कुछ दीवारों से।
यह घाव !
फिर तुमने म्रपना
निशान छोड़ दिया।

या हमने
छोडा
त्वचा चुपचाप
सिहरती रही।
यह ब्लाउज
मेरे कमरे मे
एक मेज़ है, एक लैप,
एक मक्खी और
मेरियाना मूर की दो किताबे।
मैंने अपना ब्लाउज
नीचे डाल दिया है।

जब तुम नही आये थे
तब मैं तुम्हे अपने मन में
लिये थी। अच्छा मन है यह
जो पूर्णता को समग्र रूप में
ग्रहण करता है।

तुम अब जाओ।
मै पालथी लगाये
बिस्तर पर बैठी रही।
मैंने कहा
आत्म-करुणा के लिए
जगह नही है।
मैं झूठ बोली।

सुबह की सुनहरी
रोशनी मे
तुमने कपड़े पहिने।
मैंने अपना चेहरा
बालो से छिपा लिया।
जिस कमरे में तुम रहे
वह यहीं रहेगा।

तुमने मुझे स्पष्टता दी।
कितने ही उपहार
पहिनाये।
कविताएँ, नग्न
सूरज की रोशनी मे
धरती पर नाच रही हैं। ●

हृदय में • बिल ब्रिग्नेट

लताएँ इस घर को
घेरे हैं
एक महावृक्ष
बवासीर की गाँठो की तरह
मेरे हृदय को
जकड़े हैं
बगीचे में बिल्ली
जिसे मॉरिस देखता है

जिसकी नाक पर हमेशा
एक तितली होती है
कल्पना की फुडिया की तरह
काले पक्षी वृक्ष के भीतर झूम रहे हैं
मॉरिस की नाक हिलती है
और वस्त्र काँपते हैं। ●

कवि • बिल बिसेट

उसकी नीली कमीज़
घुटनों तक आती थी।
और ज्यादा ग़म मत करो
उसके पादरी ने कहा।

बच्ची
तुमने बहुत कुछ देख लिया।
अब और गुब्बारे नहीं हैं,
या हैं ?

खड़िया-रंगे चेहरे
पुराणों की कीमती मृत कथाओं पर रो रहे हैं

बच्चे ! तुम पीले सूर्य में
वापस जा सकते हो
घास की कुल आठ पत्तियों ने
ही उत्तर दिया

चीनी मिट्टी के हाथ
सोने की अंगूठियाँ पहिनने में संकोच करते रहे

हरियाली की एक लहर
और यह विरत है
बच्चे चले गये हैं। ●

मृत मां का स्वप्न • के० वी० हर्ज़

मैने सपना देखा—
मेरी माँ मेरे भीतर आ गई है और
अर्ध-चन्द्र की तरह मेरे सिर में बाते कर रही है;
मेरे बंद ओठों के पीछे उसके बोलते ओठ
मेरी बाँहों के पीछे उसकी घूमती-फिरती बाँहे
मेरे काँपते पैरों के पीछे उसके पैर :
मेरे शरीर में एक आत्मा उतर आई।

मेरे सपने जम आये हैं और
मेरे आसमानों में झण्डों की तरह उड़ रहे हैं;
नये नये सपने मुझे आ रहे हैं, पता नही
उनका अंत कहाँ होना है........

पीढियाँ मेरे भीतर खदबदा रही हैं
नए नए शिशु जन्म ले रहे है
आत्माएँ मेरी शुष्कता में कम्पित हो रही हैं;
मैं, जो मौन और अन्धेरे का पिता हूँ—
ऐसा अन्धेरा जो जमकर ठोस नहीं होता,
चुप बैठा हृदय में हो रहे इन अद्भुत आन्दोलनों
पर विचार ही करता रह सकता हूँ। •

पैग़म्बर नहीं हो • के० वी० हर्ज़

तुम पैग़म्बर नहीं हो—
तुम ऐसे देश के एक आदमी ही हो
जहाँ के लोग भेड़ें हैं
वेदी पर झुकी, मूर्खों सी।

ये मेमने, जिनकी खालें उतर चुकी हैं,
चुपचाप अपने जलाये जाने का इन्तज़ार कर रहे हैं।

उनके पात्र भेड़ों के उपहास के गोश्त से भरपूर हैं
जो मृत्यु के वसंत की हरारत मे
और भी तेजी से नाचने लगती हैं
लाल रंग के उस गलीचे पर
जो मन्दिर के वक्र तोरण से
उजलते सूरज तक बिछा है।

पर द्रष्टा ने वनप्रांत में बैठे
सूरज को देखा :
बढ़ती हुई कालिमा जैसा
फूलते आसमान में
वह तुम्हारे नर्तन पर
स्तुतियां नही गा सका
भेड़लोलुप तुम
साड से हिंसा-प्रिय
सूर्य पर गुर्राते
और ज्यादा कब्रें खोदने से थककर
जब वह सांस लेने को रुका
तब चिता की आग में से
ज़िन्दगी की कामना प्रकट करती भेड़ को
पैग़म्बर ने उत्तर देना भी उचित नही समझा।

तुम पैग़म्बर नही
एक आदमी ही हो, ऐसे देश के
जहाँ के लोग भेड़ें हैं। सच्चा संत
तुम्हारी तरह ज़बान
नही चला सकता। वह
अन्धेरे आसमान में धुएँ की एक लहर
देख कर ही
अपने हथियार रख देगा
और मृत सूर्य के शव के समीप
खुद भी लेट जायगा। ●

महादिवस • फ्रैंक डिवी

ग्राज
पुरानी कविताएँ नष्ट करने का
दिन है
नाश्ते से पहले ही उन्हे नष्ट कर दें
ग्राठ
शराबी
महान् चित्रकार
दो ग्रौरो के भी चिथड़े
टोकरी में
रद्दी हुए पड़े हैं।

ग्रौर ग्रब ये रकाबियाँ
बची हुई चाय ग्रौर टोस्ट
जिन्हें
मैं फेक सकता हूँ
उन बनावटी चेहरों पर
जो मुझे चारों तरफ से
बाँधे है। •

मैं और वे • रेमण्ड जे० फ्रेजर

बड़े बंगलों वाले ग्रौर बड़ी कारो वाले
लोग मुझे नहीं जानते—
मेरे प्रश्नों भरे बादलो के पार वे मुझे नही देख सकते;
शहर के वे लड़के भी मुझे नही जानते
जो मदिरा के एक घूँट से ही तृप्त हो जाते है—
वे दोस्त तो हैं, ग्रौर बनने की कोशिश भी करते हैं
पर मेरी ग्राँखें उनसे तृप्त नहीं होती
यह बड़े ताज्जुब की बात है—

नशे मे ही मैं जीवित हो पाता हूँ
जब हम सब घुलकर एक हो जाते हैं—
'परदेसी' बनकर मैं सुखी नही हो पाता
मैं रोमास का अभिनय भले ही करूँ
पर यह भी उतना आसान नही है—
मैं लोगो की आवाजे सुनता रहता हूँ
यद्यपि वे कहते कुछ भी नही हैं,
मैं कमरे के मध्य को घूरता रहता हूँ— •

लघु कविताएँ • मार्टिना क्लिन्टन

वह जायेगा
ऐसे दिन जैसा कि आज है
लोहे के
गर्डर पुल पर लगे
कठोर
हो उठे हैं और कान्तिहीन
नगर वहीं है जहाँ मैं हूँ
पर अब ताले मे बन्द।

• • •

आज रात मैं लड़की हूँ जवान
उठे हुए स्तन गिरा हुआ पेट
आज मै रोएँदार बकरों की सवारी करूंगी
अंधेरी गुफाओं में मीठे अंगूर खाऊंगी
मेरे सपनो को कोई नही जानता।

• • •

मैं लड़की हूँ नशीली आंखो वाली
तुम्हारे लिए मैं एक गाना गाऊंगी
जो बीच में श्वेत है
रेनायर मेरा पिता, तुम्हारे लिए चित्र अंकित करेगा
मेरे स्वस्थ शिशुओं का। •

कैरेबिया की कविताएँ

ए. जे. सिमूर	: ब्रिटिश गायना के प्रमुख कवि; 'क्यिक-ओवर-अल' के सम्पादक। एक एन्थॉलॉजी भी सम्पादित की। विदेश विभाग में कार्य करते हैं।
फ्रैंक ए. कौलीमोर	: प्रमुख कवि, 'बिम' त्रैमासिक के सम्पादक। चार संग्रह प्रकाशित।
डेरेक वाल्कॉट	: कवि, नाटककार। तीन संग्रह प्रकाशित। 'ट्रिनिडाड गार्जियन' के स्टाफ मे हैं।
सैमुएल सेलवाँ	: कवि, कथाकार। अंग्रेज़ी भाषा को एक नया मोड़ दिया है। लन्दन मे रहते है। कई पुस्तकें प्रकाशित।
मार्टिन कार्टर	: ब्रिटिश गायना के युवक कवि और आलोचक।
ट्राम कौम्ब्स	: 'बारबेडोस' के नवीनता प्रेमी युवक कवि। दो संग्रह प्रकाशित।
एल्फ्रेड प्रेग्नेल	: भावुक कवि

●

सूर्य सुडौल अग्नि है • ए. जे. सिमूर

सूर्य सुडौल अग्नि है अन्तरिक्ष में घूमती
श्वेत झरनों से पोषित
और पृथ्वी है शक्तिहीन सूर्य।

सूर्य आज मेरी हड्डियों मे गहरा जा घुसा है।
सूर्य मेरे रक्त में है, मेरी त्वचा के नीचे रोशनी बह रही है,
सूर्य शक्ति का ध्वज है, जो धुंधलाते सितारे पर
बरस रहा है।

वृक्ष और मै परस्पर भाई है। वे ऊँचे वृक्ष
जो खोखले आकाश में अपनी शाखाएँ उठाये
पत्तियों के छोटे-छोटे हाथ ऊपर के देवता तक
पहुँचा रहे हैं, जो सूर्य का दूसरा नाम है,
और कभी-कभी मेरा भी। हम भाई हैं।

रोशनी की परत, श्वेत शक्ति, हवा मे से गिरती आती है,
—यहाँ की सब रोशनी ऊपर से नीचे ही फैली है—
वह हरी पत्तियों से जादू खेलती है और फूलों को छूकर
खुशबू से भर देती है।
यह सभ्यता
सूरज ने अपनी लौह-किरणों के बल
नदी की कीचड से उत्पन्न की है।
सूर्य मेरे रक्त में है। •

विद्रोही • फ्रैंक. ए. कौलीमोर

विद्रोही सदा ही हुए हैं; परम्परा के
विरोधी; कुछ शहीद हो जाते हैं,
कुछ बच निकलते हैं; चंचल व्यक्ति ही
परिवर्तन करने में समर्थ होते हैं।

नियमों को क्लेशप्रद पाकर ग्रमीवा
बन्धन तोड़ देता है, बीज धरती से बाहर
फूट पड़ता है। पैगम्बर, पादरी ग्रौर राजा
सदा सीमाएँ खींचते रहे, ग्रौर वे टूटती रहीं।
विद्रोही सदा अपने राज्य की योजना करता है
कभी ग्रासमान मे, तो कभी धरती पर :
सर्वोत्कृष्ट राज्य, मणि की तरह उज्ज्वल।
फिर जब विद्रोहियों की बनाई सड़के पक्की
हो जाती हैं ग्रौर विद्रोह ग्रधिकार में बदल जाता है।
लाल झण्डे, लाल-फीताशाही बन जाते है,
तब फिर नये विद्रोही जन्म लेते हैं।
उनके लिए ईश्वर को धन्यवाद। वे सदा
होते ही रहेगे।

अग्निमृत नगर • डेरेक वाल्कॉट

जब उस तप्त उपदेशक ने गिरजा-युत ग्राकाश को छोडकर
सब एकसात कर दिया, तब मैं उसकी मज्जा से ग्रग्निमृत
नगर की कहानी लिखने बैठा। ग्रांसुग्रों मे धुंधुग्राती मोमबत्ती
की ग्रांख-तले, विश्वासों के मोम से कुछ ज्यादा ले, मैंने यह कहा :
दिन भर मैं बाहर ध्वस्त कथाग्रो के बीच घूमता रहा,
सडक पर ग्रभी भी प्रवंचको-सी खड़ी दीवारों पर चकित होता,
पक्षियों भरा ग्रासमान गूँजता-सा, बादल रूई के गट्ठरों से
लुटेरों द्वारा फटे हुए ग्रौर सफेद ग्रग्नि के बावजूद;

धुग्राँ भरे ग्रासमान से, जहाँ ईसा खड़े थे, मैंने पूछा ग्रादमी,
क्यों रोता पीटता है, ग्रपनी काठ की दुनिया टूट जाने पर ?

नगर में पत्ते कागज़ थे, ग्रौर पहाडियाँ विश्वासो के समूह,
जो बालक दिन भर घूमता रहा, हर हरी पत्ती उसके लिए एक साँस थी;

ग्रौर वह प्यार फिर उठने लगा जिस मैंने मृत मान लिया था,
मौत का ग्राशीर्वाद, ग्राग का बपतिस्मा लेकर। •

सूर्य • सैमुएल सेलवाँ

क्या हम कभी उष्ण कटिबन्ध को पा सकेंगे ? सूर्य,
आकाश में रहकर तुम हमें आजादी के लाल लाल सपनो से
भिगोते हो, तुम जलते हो, पर हम नही जलेंगे। कैसी
आसानी से तुम इन हरे हरे द्वीपों में लपटें फैलाते हो,
किस उद्देश्य से तुम हो आसमान पर, हम धरती पर,
नही जान पाते। हम तुम्हें तिरछी नजरो से देखते हैं
गन्ने के खेतो मे, तुम्हारी जहर भरी मुट्ठी के नीचे मेहनत
करते, तुम्हारी तपिश मे पसीने से नहा नहा जाते, और
जो बुद्धिमान है वे पुराने सवाल पूछा करते हैं, वर्षा
के लिए आसमान निहारते बैठे रहते हैं। सूर्य,

मेरी पीठ पीछे खीसें निपोरते, मैंने तुम्हे कंधो से
जून मे झुका दिया घने जंगलों की झाडियो बीच,
एक और दिन उगाने के वादे से धोखा देते हुए,
मेरी मौत के लिए मेरे ही बच्चो को फुसलाते हुए
कि उनका जीवन ही संकट में पड़ जाय। मेरी आँख में
आग की लपट, हवा मे पीली रोशनी, इन हरे द्वीपों पर
लहराती उत्तरी लोगों को इधर आकृष्ट करने को, यह जानते
कि धरती को उलटते कितनी चिड़चिड़ाहट से हम
पडोसियो से सीना उठाये रखने को कोमल शब्द कहते हैं,
भले ही वस्तुओ की असारता उनके घुटने तोड़ तोड़ दे। •

आवाजें • मार्टिन कार्टर

सारा आकाश इस हरे वृक्ष के पीछे मर रहा है
वर्षा के सूर्यास्त में, पक्षियों के अभाव मे।
जल के विशाल कुण्ड सड़क पर यूँ पड़े हैं
मानो स्मृतियो के समुद्र रेत में धँसे जाते हो।
सूर्य ने बड़ी जल्दी हार मान ली है

उस संघर्ष मे जहाँ जय होती है वर्षा—
हवा के विशाल गमले में रखे ओ आग के फूल
आओ, वापस आओ इस घर-संसार में।

सिन्दूरी पत्थर मृत्यु का रत्न है
जो समुद्र सूखने पर रेत में मिलता है
और प्रकाश की ज़िन्दगी कही और ठहरेगी
वर्षा और सूरज के पास जब ये अकेले हो।
उगने वाले ओ प्रथम पत्र और गिरने वाले अन्तिम फल
तुम्हारी जड़ें तुम्हारे हवा पाने से पहले पड गई थी।
आसमान इसलिए फैला, क्योकि आदमी लम्बा होने लगा
जल की सतह से जहाँ पत्थर गिरते और डूब जाते है।
और आकार की आत्मा मे वह विलक्षण विलयन
एक घोंवे से जाना गया और शब्द में पाया गया :
हवा के विशाल गमले में रखे ओ आग के फूल
आओ, वापस आओ, इस घर-संसार में। ●

? ● ट्राम कौम्ब्स

एक छलिया मित्र
पीले पुआल के कम्बल पर
गुलाबी, सफेद और काले
निष्कलंक बाल
आन्तरिक संगलियों से पूर्ण
काढने आती है

सहानुभूति····विरोध····अनासक्ति
(?)
मेज़ कुर्सी, जानवर और दोस्त,
मुद्रित विचार,
जटिल मन की सभी खुशियाँ हैं। ●

दोस्त को खत • एल्फ्रेड ग्रैग्नेल

तुम और यौवन लौट आये थे,
और एक अजनबी देश में
हम एक पहाड़ के
ऊंचे घासदार ढलानों पर
चढ रहे थे।

सहसा एक नुकीली कगार पर
दो ग्रीष्मगृह और स्पष्ट दृश्य।

अभ्यस्त व्यक्तिगत जीवन मे
हम ठण्डी हवा को पीते रहे
(एक सुनहरे गोचर में खड़े खड़े)
और नीचे दूर तक फैली घाटियाँ।

ज्यो ही तुम कुछ कहने को मुड़े
सपना ओझल हो गया।

मेरे दोस्त,
तुम क्या कहना चाहते थे ? •

न्यूज़ीलैण्ड की नौ कविताएँ

चार्ल्स ब्रेश : जन्म १६०६। प्रमुख कवि एवं 'लैण्डफॉल' त्रैमासिक के सम्पादक। न्यूज़ीलेण्ड के साहित्य को गति देने मे अग्रणी। कई संग्रह प्रकाशित।

डब्लू हार्ट-स्मिथ : जन्म १६११। कवि और पत्रकार। आस्ट्रे-लिया भी रहे। छह संग्रह प्रकाशित।

लौरी रिचर्ड्स : नई पीढ़ी की कवियित्री। 'मेट' त्रैमासिक एवं 'लिटिल जर्नल' ग्रुप से सम्बन्धित।

मौरिस डुग्गन : प्रसिद्ध कवि एवं कथाकार। कई संग्रह प्रकाशित।

कैनेथ मेक-कैनी : नई पीढ़ी के प्रतिभाशाली कवि। 'मेट' ग्रुप से सम्बन्धित।

पीटर ब्लैन्ड : इस दशाब्दी के प्रमुख कवि।

हु बर विथरफोर्ड : प्रमुख कवि।

गोर्डन चैलिस : नई पीढी के अग्रणी कवि।

रूथ डैलास : जन्म १६१६। सुप्रसिद्ध कवियित्री, कथाकार और पत्रकार। दो संग्रह प्रकाशित।

●

पहाड़ियों पर जलती हुई अग्नि-शिखाएँ कैसी है
जैसे मशाल लिये तीर्थ-यात्रियों का कोई दल हो।
द्वार खुला छोड दो
अन्दर आ जाओ
रात ठंडा रही है;
दीप उजाल लो। ●

श्मशान गृह ● लौरी रिचर्ड्स

मजबूत स्टील और कंकरीट की तीसवी मंजिल पर
हिरोशिमा के रक्त-लथपथ बच्चों के साथ
उन्होंने उसे रिपिट कर
नागासाकी के मरोडदार स्टील से
उसके पार्श्व को बिद्ध कर दिया है।
उसकी प्यास माताओ की सिसकियो से बुझा दी है;
न जाने कितनी बार चिल्ला-चिल्लाकर
ताने मार-मार कर
कहा है—तुम खुदा हो तो मेरे बम को कितने
ख़ुदा खत्म करने पडेगे ?
उसके चेहरे पर उन्होने मनुष्य का खून थूका है
जब पृथ्वी पर नर्क फटा और सारी जाति रोई
उन्होने कहकहे लगाए।
वह इस बार लौट कर जन्म नही लेगा। ●

एक निवेदन : उन सबसे ● मौरिस डुग्गन

जहाँ मेरी वासना है निश्चय ही वहाँ मेरा प्रेम भी है।
जहाँ अत्यधिक प्रेम है वहाँ अत्यधिक वासना भी है।
जानता हूँ कि जहाँ प्रेम की मृत्यु होगी
वहाँ वासना की मृत्यु हो जाती है।
और प्रतीत होता है कि यहाँ प्रेम छलछला रहा है
हाय! वहाँ वासना उभर आती है।

किन्तु, कुछ ने न जाने किन
तरल माध्यमों से मेरे मन पर अधिकार कर
लिया है;
वासना मर गई है,
प्रेम सदा के लिए प्रतिष्ठित हो गया है।

तुम्हे यह कैसे समझाऊँ ?
और यह भी कि,
अब मैं प्रेम अथवा वासना के लिए क्या करूँगा ? ●

गली की औरत ● कैनेथ मेक-केनी

फ़र्श सूर्य की किरणों से तड़क गया है
गली को आवृत्त करने वाला वस्त्र
छाया की रेखाओं और जालीदार त्रिकोणों
तथा सिंह आकृतियो से जैसे बुना गया हो।
बेतरतीब अतीत के ढेर से
एक स्मृति धड़ाके से फूटती है
विस्मृति के समुद्र से
चमकते हुए स्टील की तरह एक चेहरा
झाँकने लगता है।

कोई दस वर्ष पहले
एक रात वह चुपचाप खिसक आई थी
और एक रंगीन अनुरक्ति-पूर्ण भेंट
मे बाँधे रही
नक्षत्रो की परिक्रमा को देखा की
मेरी तप्त जिह्वा के समीप।

लेकिन अब वही
एक अस्वीकृति सी
अँधेरे के स्तूप मे अन्तर्धान हो गई है।
समय उसे भूल गया है,
जहाँ उसके वक्ष स्पंदित थे, अब केवल राख है।

केवल मेरी आँखें
समय के उस कुहासे को विद्ध कर देखती हैं
कि गुलबहार का एक छोटा सा पौधा
घास पर लहलहाता है
सूर्य ने फर्श चटका दी है
छाया की रेखाएँ और सिंह आकृतियाँ
तड़क गई हैं ।

वह जिसने मेरी मधु-ऋतु को धन्य किया था
वह न तो मुड़ी और न विदा का संकेत दिया
बस चली गई,
मृत्यु तक । ●

एक कुत्ते की मौत ● पीटर [illegible]

शैले मर गई है,
श्वेत लिली पुष्प की तरह बालक उसे घेरे हैं ।
किसी ने अत्यन्त त्वरा में
उसकी रक्त-जिह्वा को सदा के लिए मौन कर दिया है ।
अभी-अभी जहाँ जिन्दगी बह रही थी
वहाँ अब मात्र फटे चिथड़ों जैसा बर्फ का ठण्डा ढेर है
जिस पर मेरी पुत्री के अनगढ़ आवेश युक्त हाथ हैं ।
उसकी दृष्टि में कुछ नहीं हुआ है, कोई हानि नहीं हुई ।
वह बार-बार समीप जाती है
उसके लिए मृत्यु की परम नीरवता का कोई अर्थ नहीं है ।

सदा की भाँति वह उन्मुक्त घूम रही है
शिशुओं सी हठ करती, अविश्वस्त खड़ी है
अस्वीकार है उसे यह कि उसके समस्त साहसिक कार्यों
का साझीदार,
प्रात: होने पर भी रहस्यमय नींद में उलझा पड़ा है
मैंने उससे कहा : 'यह मृत्यु है'

मात्र इतना ही
किन्तु वह न रोई और न चिल्लाई
केवल सब जगह भग-भग कर कह आई
यह जो नया उसने मुझसे जाना और सीखा।
पडोस की स्त्रियाँ बनावटी सहानुभूति से पीडित है
दर्द उनके लिए उतना ही वजनदार है
जितनी कि ढेर सी रकाबियाँ।
लेकिन उनसे कहीं अधिक कामकाजी उनके दुनियादार पति
एक दिन की इच्छाओं के साथ
अनिवार्यतः बँधे,
बसे पकडने को भागते है
उस लडकी को प्रतीत होता है कि इस सम्पूर्ण
व्यस्तता मे,
उसे नही सुना गया है
और मोठी झिडकियाँ खाकर वह लौट आई है।
वह फिर बच्चो से घिरी जगह आ गई है
जहाँ अब कुछ भी शेष नही है।

आज रात्रि को शव दफना दिया जायगा
और कल अवकाश होगा
कि जिससे छोटी लडकी खुशी के साथ
कल की घटना कण्ठस्थ कर सके
और दुनिया को सुना दे। ●

केक्टस ● हुबर्ट विथरफोर्ड

यह नारंगिया पुष्प है,
अपारदर्शी श्याम और उत्तेजित वृन्त पर।
या धूल-धक्कड, रेत और पत्थरों मे
इतनी कोमल चमकीली माँसलता के लिए
यह मेरुदण्ड है।

जिसने इस सजी सजाई चातुर्यपूर्ण सृष्टि रचना के लिए
कही थोड़ा द्वेष-युक्त प्रेम जगा दिया है।

पुण्य और पाप की भ्रांतियों से अस्पृश्य
इसका जन्म महानाश के आन्तरिक अवशेषो से हुआ है
अपने उदय और विस्तार के लिए
छोटा सा वायु-मण्डल ढूँढा है
जिसके साथ न तो हमारी और न अन्य किसी की
कोई प्रतिद्वन्द्विता है।
लेकिन युगों-युगो के उपरान्त
जब हम इन छोटी-छोटी उपस्थितियों का स्वागत करते हैं
तो हमारी शिराओ मे ताज़गी दौड़ जाती है
और जिह्वा रस-स्निग्ध हो जाती है। ●

समान रखे हुए ताप का मनुष्य
गोर्डन चेलिस

संसार किसी भी क्षण खण्ड-खण्ड होकर गिर सकता है
भाग्य है कि ऐसा नही होगा
क्योंकि अभी तक ऐसा नही हुआ है।
यह सत्य है कि दरारें दिखाई देती हैं
लेकिन ये दरारे नष्ट हुए समय को पूरा करने का उपक्रम है
जिनसे जन मिल सकें, विस्तार कर सके।

लेकिन मैं जो अब तक एकदम सीधा तना हुआ चलता था
गेहूँ की बाली की तरह झुक गया हूँ।
कैसे विश्वास करूँ कि मैं सह लूँगा प्रचण्ड आतप
सूर्य का साक्षात्कार कर लूँगा
अपनी रेंगती हुई परछाइयाँ नही देखूँगा
अनुभव करूँगा कि अखण्डित हूँ

मैं अनेक प्रकार की धातुओ का बना हूँ
सूर्य के नीचे असन्तुलित, उबड-खाबड़ बढा हूँ
चीत्कार नहीं कर सकता कि कही एक बूँद आँसू
किसी धातु को नम्र बना दे और दूसरा कठोर हो जाय
मैं होने के लिए झुकता हूँ।

मेरी आत्मा जो समान ताप से धीरे-धीरे सुलगती है
एक दिन कदाचित् और भी अधिक मानवीय-संवेदना की
अग्नि से गरम हो
एक ही धातु मे सब धातु मिल जाय
और तब मे अधिक सीधा खडा रह सकूं
गिरने के लिए तत्पर। ●

समुद्र पर बादल • रूथ डैलास

मै विशालकाय मनुष्यों के बीच चलती फिरती हूँ,
जिनके पैरो मे चमड़े के जूते हैं, जिनके मुख गुलाबी हैं;
मुझे कही कोई भिक्षा का पात्र लिये नही मिलता,
सब के पास रहने को जगह है।

मेरे देश में
हर बच्चे को लिखना पढना सिखाया जाता है,
हर बच्चे के पास गरम कपड़े और जूते होते हैं,
हर बच्चे को सुबह शाम खाना मिलता ही है,
किसी को दुबला होने की इजाज़त नही होती,
खटमल या जुएं कही दिखाई नही देती,
उनका होना ही एक अजूबा है।

अरे! हम अमीरो की तरह रहते हैं,
स्विच-स्पर्श पर संगीत बज उठता है,
मध्यरात्रि को भी रोशनी रहती है,
घरों में जल जैसे झरनों की तरह आता है—
गरम या ठंडा, जैसा भी आप चाहें;
अपने शरीर के सुख के लिए,
मेरे देश मे।
दुनियाई फोड़े के किनारे नई बनती त्वचा का
एक टुकड़ा।

['न्यूजीलेण्ड' की कविताओं के अनुवादक : नंद चतुर्वेदी]
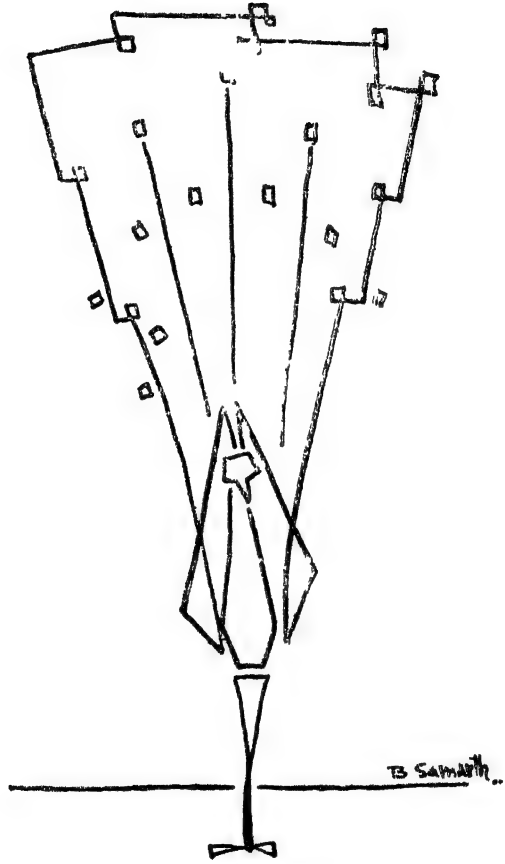
भाऊ समर्थ का रेखाकन

नौ ऑस्ट्रेलियन कविताएँ

जूडिथ राइट : जन्म १६१५। ग्रॉस्ट्रेलियाई युद्धोत्तर काल की प्रमुख कवियित्री। चार संग्रह प्रकाशित। 'ग्रॉक्सफोर्ड एन्थॉलोजी ग्रॉफ ग्रॉस्ट्रेलियन पॉइट्री' का सम्पादन।

डोरोथी ह्वीवेट : जन्म १६२३। कवियित्री एवं कथाकार। ग्रनेक पुरस्कार प्राप्त। ग्रनेक संग्रह प्रकाशित।

क्लेम क्रिस्तेसेन : जन्म १६१२। मैलबोर्न विश्वविद्यालय मे ग्रंग्रेजी के प्राध्यापक। 'मियाञ्जिन' त्रैमासिक के सम्पादक। कई संग्रह प्रकाशित।

जेम्स कार्बेट : नयी पीढी के कवि। एक संग्रह प्रकाशित।

डोरोथी ऑक्टरलोनी : नयी पीढी की कवियित्री। एक संग्रह प्रकाशित।

ग्वेन हारवुड : नयी कवियित्रियो मे ग्रग्रणी। शैली ग्रौर विषय मे निखार ग्रौर चुस्ती।

डेविड मार्टिन : प्रसिद्ध कवि एवं लेखक। कई संग्रह प्रकाशित।

•

प्रेमियों का दल • जूडिथ राइट

सारी दुनिया में अब हम मिलते और जुदा होते हैं।
हम भूले हुओ का दल
रातो को एक साथ हाथो में हाथ लेता है,
अपनी संक्षिप्त प्रसन्नता में चुपचाप
विस्मृत हो जाता है।
हम, जिन्होने अगणित वस्तुओ की चाह की,
इस एक वस्तु के लिए, बस एक ही के लिए,
सब कुछ छोड छाड देते हैं।
जानते है कि संकडी कब्र मे सब
अकेले ही रह जायेगे।

हमारे चारो ओर अब मृत्यु की सेनाएं खडी है।
उनके कदम पास आते जा रहे हैं।
थरथराते हृदय पर अपने गर्म हाथो का ताला डाल दो,
और कुछ देर मुझे और निर्भय रह लेने दो।
अंधेरे मे ढूंढ कर मुझे अपने से बाँध लो,
क्योंकि नगाड़ो की काली भूमिकाएँ बजने लगी हैं,
और हमारे चारों ओर, सब प्रेमियो के चारो ओर,
मौत का घेरा जकडता आ रहा है। •

नाविक की वापसी • डोरोथी ह्वीवेट

हाथों मे सपने सजाये मेरा प्यार घर लौट आया है
ओ मुर्गे, सुन, इस अद्भुत देश मे मेरा प्यार लौट आया है !

सूर्य-सी आँखें लिये वह द्वार से फटा पडता है
उसकी झोली मे उसकी खोजी अनगिनत निधियाँ हैं

यह मोती की सीपी ब्रूम से आई है, डार्विन से आई है कहानी
और यह प्रवाल, यह मूंगा, और यह ह्वेल का जबड़ा

मेरी रसोई समुद्र की सुगन्ध से भर-भर उठी है
मेरे प्यार की लाई हरी मछलियाँ उछलती फिर रही हैं

अरे डार्विन से ब्रूम तक अपनी निधियाँ फैलाते चलो
और इस छोटे से कमरे को अपनी महिमा से भर दो

उसके सीने पर सुबह का सूरज जगमगा रहा है
मेरा प्यार उत्तर-पश्चिम के भी उत्तर से यहाँ आया है

अब हम अपनी शय्या पर लेट कर प्यार मे डूब जायेंगे
हम चुम्बनो की बौछार मे वर्षा की आवाज़ सुनते रहेंगे।●

कविता ● क्लेम क्रिस्तेसेन

पक्षी के गीत मेरे अन्तर को मोडते हैं
तुम्हारी आवाज़ ! वहाँ कोई शान्ति नही है
सुबह की चमकदार आँखो मे,
न गर्म दुपहरी की चुप में, साँझ मे
इल्थम पहाडियों के साथ।
सारिकाओ के गीतो का अनुकरण करता है एक
वेग,
रोशनी में, ध्वनि में फल-बागानों तक
अंगूर लताओं से आच्छादित दीवारों तक
रिक्तता तक मे प्रतिध्वनित होता है
जहाँ लाल पत्तियाँ गिरती हैं।
एक लम्बा पेड गोधूलि वेला में
अचानक चमकता है तारो के साथ।●

['कविता' के अनुवादक—गंगाप्रसाद विमल

दुर्घटना • आर० ए० सिम्पसन

किसानो ने एक धमाका सुना
और रोशनी लाई गई देखने के लिए
वह क्यामत जो शीशे और मॉस ने की,
सामान टूट कर बिखर गया था सडक पर
किसी भी जिन्दगी की तरह। फौलाद
हो गया एक संघर्ष और व्यर्थ बिखरा रक्त।

और शीघ्र ही वे दोनो आदमी मर गये।
मैं खडा था ठण्डा और परेशान सडक के
किनारे
जिसे मैंने अपशकुनी पाया, टकराई
हुई दो मोटरगाड़ियो से घण्टे भर के लिए
बन्द
गाडियाँ ऊपर को मुँह किये, जिन्हे कोई
क्रेन ही हटा सकता था।
मैंने सुना भीड को प्रकट करते
मोड़ो, गलियो और पहाडियो के विश्वास—
घात को,
और तब यह कहते कि क्या करेंगे वे,
जब कि अर्धरात्रि देर हो जाने की
शिकायत करने लगी,
और दया दीख रही थी एक भयंकर
दाग की तरह।
मलवा हटा दिया गया होशियारी और
घृणा के साथ। ●

मृत्यु-लेख • जेम्स कार्बेट

मेरी पहुँच में
किन्तु स्पर्श से परे, तुम,
इस गूंजते हुए छल मे,
बन्दी हो
यद्यपि किसी हाथ ने तुम्हे पकडा नही है ।

यद्यपि कोई हाथ नही मिलाते,
मै अपनी जकड को परिवर्तित करता हूँ
तुम्हे ठीक से पकडने के लिए
और तुम्हारे भविष्य को ।

तुम नही जानोगे मेरा नाम,
क्योकि यह अकाल है ।
तुम नही पहचानोगे
मेरा चेहरा,
मेरी आकृति युद्ध से मलिन है ।
मेरी छिपी हड्डियाँ तक जहरीली हैं ।

तुम नही समझते हो
मेरे अजीब शब्द ?
मेरा दुष्काल, और मेरा युद्ध ?

तब सुनो,
मुझमे कुछ कुशलता थी
अपने उद्देश्य को स्पष्ट करने की ।
मुझे समझाने दो ।

मैने जापान में एक अगस्थ बनाया
पुराने सहारा के अगस्थ के समान ।
वह एक रेगिस्तान था,
सबसे शून्य केवल ढही हुई शान्त के अलावा ।

जहाँ अब तुम्हारा गेहूँ
खूब फलता है।

मैंने हवा के लिफाफे को भर दिया
भयंकर सन्देशो से,
तटस्थ आकाश को
मैंने छुरा भोक दिया
जिसमे से तुम्हारे मार्ग-दर्शक
जीवन को ले जाते है शनिग्रह पर।

लहराते हुए समुद्रों के नीचे
जहाँ नमक के खेत हैं
मैंने एक शार्क को जन्म दिया
अपने तेज़, गर्म दाँतो से काट लेने को
दूर दूर के नगर।

मैंने गलियों को खून से जोत दिया।
मैंने समुद्र को आँसुओं से धो दिया।
मैंने इससे भी अधिक
और बहुत कुछ किया।

लेकिन तुम, जिसका हाथ मैंने पकड़ा है,
तुम, जो मेरे स्वप्न बनोगे
अपनी इस पकड की विजय को शक्ल देने के लिए,
तुम नही समझ सकते।

तुम मेरी प्रेताकृति को देखते हो
और देखते रह जाते हो।
तुम मेरी अजीब भाषा को ढूँढ़ते हो।
मेरे दुष्काल, और मेरे युद्ध को,
और कोई उत्तर नही पाते।

तब चुपचाप मेरा स्वागत करो
यह बहुत है कि हम मिलें

जहाँ हरे, 'ग्रोक' शीतल करते हैं
तुम्हारे निर्भय शहर के
नर्म पाँवों को।

क्योंकि मै ग्रागे चलता हूँ
तुम्हारे राजसी ग्रश्वारोहियों के।

मैं समझता हूँ। मैं समझता हूँ। ●

विदा गीत • डोरोथी ऑक्टरलोनी

सब वैसा ही था जैसा—जब मैं भीतर गई :
तसवीरें दाहिनी ग्रोर ऊपर, कुर्सियाँ ग्रपने स्थान पर
फूल सीधे सजे हुए मेण्टल-पीस पर;
मैंने चीह्न ली वह ग्रावाज़, पहचान लिया चेहरा।
बाहर वही ग्राकाश, उसी धरती को मज़बूती से पकड़े था,
हरे पत्ते चमक रहे थे, कुत्ते भोंकते थे, बच्चे खेल रहे थे;
लेकिन ग्रचानक, भीतर, हवा ठण्डी हो गई,
साँझ जाते हुए रुक गई; मैं भयभीत हो गई।

कुर्सियाँ नाचने लगी, तसवीरें चीख उठी;
सड़ते हुए फूल बीमार गंध देने लगे;
सफेद दीवारे ग्रापस मे टकरा उठी, शान्ति गुर्राने लगी,
फर्श मेरे पाँवो पर ढह गया ग्रंधेरे में।

दरवाजा धक्के से बन्द हो जाता है, हवा मेरे बालो में है,
ग्राकाश चला गया है ग्रौर उसके स्थान पर खड़ा
है भयानक ग्रजनबी,
सूरज को सोखता हुग्रा :

मै मुड़ती हूँ ग्रौर ठण्डे, ग्रंधे हाथो से
रास्ता ढूँढ़ती हूँ।
लेकिन जहाँ मैं मुड़ती हूँ, वह मेरे सामने

खडा है अब भी,
समय को समाप्त करता हुआ, 'स्पेस' पर सवार;
कयामत आ गई है, मेरी लडकी अजन्मी है,
और मेरे छोटे लड़के का चेहरा शून्य और आकृति-हीन।

पहचान का कोई विन्दु नहीं, केवल घास—
वृक्ष भी मुझे धोखा देता है अन्त मे—
ओह अँधे हाथो, घास की कठोरता को देखो।
और उसके नीचे की ठण्डी जमीन को अपने मित्र की तरह। ●

पानी के किनारे ● ग्वेन हारवुड

चिकनी, सर्प की तरह, ऊपर को उडती
एक समुद्री चिडिया भाग जाती है इस चट्टान से
मेरे फेके हुए टुकड़ो को छोडकर।

और फिर बैठ जाती है झाग और हवा के उफान पर।
जंगली समुद्री घास मेरी छाया मे लाल होकर रंगती है।

चिडिया की उडान मेरे कंधों मे दुखती है।
उसमे कोई परिवर्त्तन नही होगा, वह परिवर्तित
हो नही सकती, उसे कोई पीड़ा हो नही सकती।

मिट्टी से उत्पन्न आकृतियाँ मिट्टी से ही
पोषित होती हैं, शरीर-रक्षक, निष्कपट।
'सत्य क्या है ?' हृदय पूछता है, और बताया
जाता है :
तुम भोगोगे, और संसार के तथ्य को देखोगे
जब तक कि पीड़ा की प्रतिछाया भी उतनी ही
सत्य नही हो जाती, जितनी स्वयं पीडा :

तुम्हारी सारी शक्ति बिखर जायगी
निराशा के कण-कण होकर;

तुम संसार से बोलोगे; जो कुछ तुम दोगे
वह बुराई और अच्छाई के बीच टकरायेगा
छीन लिये जाने या घृणा किये जाने के लिए।
तुम प्रकृति के सारे सौन्दर्य को समाप्त पाओगे
यद्यपि तब भी वह रहस्य की तरह
आलोकित होगी।
'सत्य क्या है ?' चीखता है हृदय,
जबकि वह चिड़िया वैसे ही बैठती है
यहाँ और वहाँ
और मै अपने दु:ख के बदलते हुए
साम्राज्य की ओर मुड़ता हूँ। ●

मरते हुए संसार पर पुनर्विचार

डेविड रोज़र्स

दिन की रोशनी अधी हो रही है, फिर भी अभी रात
प्रतीक्षा कर रही है, देर तक रुकी हुई साँस की तरह,
चुपचाप दे दिये जाने वाले दिल के लिए।

मेरी खिडकी के बाहर कपास के पत्ते
शान्ति को फटक कर अलग कर रहे हैं
सारे संसार को धोते हुए पानी की आवाज से,
लेकिन एक रूखी तेज़ आवाज़ काट देती है
इस ठहरे हुए दिन को ठीक बीच से,
और मूक आवाज़ो को मकानो के शिखर तक पहुँचा कर
चली जाती है, अचानक नर्क मे गिरी हुई किसी आत्मा की तरह।

रक्त नही है। बहुत कुछ प्रतिबन्धित रहा है।
हम बहुत बोलते हैं और देखते नही हैं उन चीज़ों को
जो हम हैं, चीजें- जिन्हे हम नही जानते।
आह, लेकिन इस अवाक् अर्धरात्रि मे शय्या पर आओ
जब व्यक्तित्व के तमाम नकली चेहरे अलग हट गये हैं।

देखो, आँखे—जो मनुष्यों की आँखे नहीं हैं
लेकिन चक्र की चमकदार धुरी की तरह घूमती हैं
हाथ, जो एक जीवित हाथ को थाम नही सकते,
फिर भी सावधान रहते हैं, हिसाब लगाने के लिए,
फौलाद के हृदय गर्मी में तपे हुए,
प्यार के लिए उपयुक्त गर्मी से बहुत अधिक,
मस्तिष्क बनाये हुए, प्रतिबन्धित, मनुष्य-विनिर्मित।

आओ प्रिय! चुपचाप जब तक कि संसार
प्रतीक्षा कर रहा है अपने ही दैत्य की
हमारे अविश्वासो के लबादो को फाड देने के लिए।
अविश्वास—हमारे अपने ही होने मे, हम जो कुछ हो गये हैं उसमें,
क्योकि मैंने सुना है, स्वप्न मे घायल हृदय को चीखते
और देखा है, भूरे भौकते मनुष्यो को गली में मार्च करते
अपने आप से घृणा की मदिरा बांटते,
और अपने बच्चो को पार्टी और देश को देते
किसी तरह की मानवीय शिक्षा के लिए नही।

मेरी खिडकी से बाहर कपास के पत्ते
शान्ति को आवाज़से अलग फटक रहे है।
चुपचाप आओ प्रिय! क्योकि रात आ रही है
जब कोई काम नही करेगा,
और ऊँची पहाडियो के ऊपर
शान्त चट्टानों के शिखर है
जो निर्बन्ध सितारो के लिए शान्ति का गीत गाते हैं,
जहाँ हम बैठ सकते हैं और अपनी निरन्तर प्रार्थनाओ मे
मूर्त्त कर सकते हैं, स्वर्ग के सबसे मूल्यवान वरदान, क्राइस्ट को
संसार अन्तहीन है, आमीन! ●

निर्बन्ध विचार • डेविड मार्टिन

कठिन है विचार को निर्बंध करना, क्योंकि यह प्रविष्ट हो जायगा
तमाम सम्भावनाओं के अजाने प्रदेश में, जहाँ पर भ्रमणकारी
शायद ही जानता है अपना उद्देश्य और कभी नही बताता
कि उसने एक समुद्र देखा, वहाँ, जहाँ पर्वत होने चाहिए।
अनजाने मे जो भयंकर है, वह यह कि वहाँ क्षितिज कम है :
कोई अन्त नही है किसी भी दिशा में, इधर या उस तरफ।

तब झूठा यात्री घोषित करता है, पार तक पहुँच जाना।
'यह', वह लिखता है, 'है वह जमीन जो गत वर्ष हमने खोजी थी।
हमने नदियो को ढूंढा; मिट्टी ऊसर है, स्रोत जमे हुए हैं—
हम लौटे हैं उस सडक से। वहुत से सच्चे साथियो को खोकर,
मैंने एक विश्वासघाती को उडा दिया जो कहता था कि वह पसन्द करेगा
वही अजनबियो के बीच रहना, बजाय उन आशाओं और मुसीबते को
झेलने के
जो हमारी प्रतीक्षा कर रही हैं घर पर।'

लेकिन अज्ञात, ज्ञात के अन्तःकरण पर सशय करता है।
एक नया अभियान निश्चित होता है, नये नेता चुने जाते है,
फिर सीमा पार की जाती है और वह झूठ पकड़ लिया जाता है।
ज्यो ज्यो वे जाते है अविजित की ओर, प्रत्येक एक कंकरी गिराता है
उस कब्र पर, जहाँ विश्वासघाती पहरे पर खड़ा है।
पर्वत अधिकृत होते है, मिट्टी अच्छी पाई जाती है, नदियाँ
भरी हुई हैं मछलियो से। स्रोत जमते नही है, और
उस प्रदेश को उस व्यक्ति के नाम से पुकारा जाता है
जिसने पीछे मुडने से इन्कार कर दिया।

यह वह व्यक्ति है, जो भूल जाता है स्वतन्त्रता के भय के कारण को,
जो केवल याद रखता है कि कोई वायदा हमसे नही हुआ है—
सुरक्षा का, पूर्णता का, निश्चितता का; केवल वादा है—
चैन से बैठ सकने की नितान्त असमर्थता का। •

['दुर्घटना' से 'निर्बंन्ध विचार' तक के अनु: ज्ञान भारिल्ल]

अफ्रीकी कविताएं

आठ दक्षिण अफ्रीकी कविताएँ
यूगाण्डा की तीन कविताएँ
नाइजीरिया की चार कविताएँ
मेडागास्कर की एक कविता
घाना की एक कविता
काँगो की एक कविता
सेनीगल की तीन कविताएँ

●

दक्षिण अफ्रीका :

उईस क्रीग : जन्म १६१० । पेङ्गुइन की 'एन्थॉलॉजी ऑफ अफ्रीकन पोइट्री' के एक सम्पादक ।

जेक कोप : जन्म १६१३ । कवि, कहानीकार, पत्रकार । केपटाउन से प्रकाशित मासिक 'कण्ट्रास्ट' के सम्पादक रहे । उपरोक्त एन्थॉलॉजी के सम्पादको मे एक !

सी. एम. वान डेन हीवर : (१६०२–१६५७) पुराने कवियो मे प्रमुख ।

गाई बटलर : जन्म १६१८ । रोड्स विश्वविद्यालय मे अंग्रेजी के प्राध्यापक । कई संग्रह प्रकाशित ।

इन्ग्रिड जाङ्कर : जन्म १६३३ । नयी पीढी की अत्यन्त तेजस्वी कवियित्री । एपार्थेड के विरोधियों मे अग्रणी ।

राय मैक्नाब : जन्म १६२३ । लन्दन स्थित दूतावास में कल्चरल अटैची । कई संग्रह प्रकाशित । दक्षिणी अफ्रीकी कविता की एक एन्थॉलॉजी सम्पादित की है ।

रूथ मिलर : जन्म १६१६ । एक संग्रह प्रकाशित ।

तानिया वान ज़िल : जन्म १६१३ । प्रखर कवि । दो संग्रह प्रकाशित ।

यूगाण्डा :

कॉलिन राय : यूगाण्डा के सफल कवि । लोरका का अनुवाद किया है ।

जोजफ जी० मुटिगा : मैकरेर विश्वविद्यालय मे पढ रहे हैं। कई प्रखर कविताएँ लिखी।

अल्बर्ट बी० ओंगारो : क्लर्की की। फिर अध्ययन। तेजस्वी कवि।

नाइजीरिया :

अइग हीगो : प० नाइजीरिया मे सेण्ट एण्ड्रूज़ कॉलेज, ओयो, में अंग्रेज़ी के प्राध्यापक।

क्रिस ओकिगबो : नये कवियो मे अग्रणी। रजत नियोगी द्वारा सम्पादित 'ट्रेंजीशन' में सहायक।

वोल सोयिनका : कवि व नाटककार। रचनाओ मे गहरी व्यथा और व्यंग्य।

घाना :

क्वेसी ब्रू : घाना की नवचेतना के प्रमुख कवि।

सेनीगल :

डेविड ड्याप : सेनीगल के प्रमुख कवि। कई रचनाओ का अंग्रेज़ी मे अनुवाद।

●

काले गिरिशृंग : काली हवा • उईस क्रीग

काले गिरि शृंगो के ऊपर, काली खाडी के पार
स्याह रात मे काली हवा बहती है।
कृशकाय चट्टानों की ओर श्वेत दाँत खोले सागर
किचकिचाता
झपटता है
आज भी बढ़ता और लौट जाता है।

मध्य निशा। तारा नही एक भी। अन्धकार।
एक निर्जन सडक खुलती है
बन्द समृद्ध घरो के पार्श्व मे। और आसमान में
गरजती
समुन्दर पर चिल्लाती काली अंध हवा से आहत
मनुष्य अपने ही मस्तिष्क के मरुथल मे
घिसटता है।

हृदय की कठोर शिला पर मंथर जल की तरह
प्रवहमान
प्रेम-विच्छिन्न तम, विषाद और रुग्ण नैराश्य;
केवल काली हवा बिछलती है—
वर्गों, विश्वासो और महाद्वीपो पर
समुद्रो और जलयानो पर;
जब कि अचानक सडक की बगल से
अंधेरा चीरता एक प्रकाश उछलता है
और दूर दूर विचरता मस्तिष्क
घाटी के ऊपर इस ठण्डी सडक पर लौट आता है
जहाँ आँखो के आगे फुहारे शीत पाँखो के
झपट्टो-सी लगती और झिल्ली की कमजोर आवाज
गरजती हवा मे खो जाती है।

किसी जर्जर कनस्तर से आग फूटती है
गिरती है, फिर उछलती है।
वही अधबने मकान के आगे

फटे कोट मे आवृत्त एक काला पुरुष
अपने हाथ सेकता नज़र आता है।
चौकीदार सनसनाती हवा मे
अभिवादन फेकता है। आवाज़ लौट आती है
और वह हँसता है : श्वेत दाँतो की चमक
और चौड़ी काली हँसी।
यह अग्नि-जिह्वा पुच्छल-तारे सी जलती है—
स्याह रात मे अध्रुव ज्वाला।
यह निर्जन उजाड़
अब लोगो से भर गये हैं
और तुम्हारे प्रकाश मे—
मै चलता हूँ। •

यदि तुम लौट आओ • जैक कोप

यदि तुम लौट आओ
एकाकी आँखो से निकले, लौट आओ
धुँआरे दिसम्बर मे
और बिखरे आसमान के मखमली मोम से
चुने गये मंद हीरक कण, विचित्र
सम्मोहक नक्षत्रों को यदि
एक एक कर ढुलका दो;
यदि सूर्य को जलते आईने की तरह उठायं
आ जाओ, तो मैं क्या कहूँगा ?

यदि तुम पुनः बालक हो जाओ
लम्बे, क्षीण-गात बालक
धवल कुमुद फूलों की तरह हिमानी त्वचा
मेगनेशियम धातु-सा तुम्हारा शरीर, आग भरा,
यदि तुम गरजते सागर बन

पहाड़ी पर सजे सायरन यंत्रों और लघु तोपो की
गणना बन्द कर दो—तब भी मै क्या कहूँगा ?

यदि गिरे हुए शिलाखण्ड पिघल जाये
और सरकते जहाजों की तिरछी कटानों पर
कोई सागर सोता न रहे,
अतलांतिक निश्वासो-सा रिक्त हो जागे,
गिरजाघर स्वप्नो और प्रार्थनाओ से शून्य,
और तुम कुमारियों के रहस्यो पर चकित होते
पास आओ
और रात के साये में नहरें, जंगली बकरियाँ
गीली आँखे उठाये दीख पड़ें;
यदि तुम्हारा हृदय फिर से स्पन्दित हो—
वह लिली फूल की आभा, सिन्दूरी और नीलाभ
शब्दो को इन्द्रेणी अनुभावे
शारदीय सरिता पर जमी बर्फ से टकराते क्षणो
को पहचाने और तुम
वायु कुसुम—जड़हीन पुष्पों को
गंध सिंचे घास पौधों मे खोजते आओ
तो मैं क्या कहूँगा ?

रेत के लहरीले टीले
शोकाकुल हो चीखते हैं मेरे पदचिन्हों पर
यदि मैं उन्नत, लजालु बरखा मेघो की तरह
नृत्य करूँ
तो क्या मैं अपने में जलद-पुञ्जो को नही
बाँध लूँगा ?
पाषाणी गुलाबों का रेगिस्तान—क्षार फूलो का
ऊसर।
यदि तुम फिर कभी क्रॉस की घड़ी से
समय देखोगे
पंखुड़ियों पर महक और धान में रक्त होगा,

शायद तुम सदा-वसन्त मे हेमन्ती भयावह
नीलिमा फैला दोगे;
शब्दों के कारण ही तो मै मौन हूँ
क्योकि कही दूर मेरे ही शब्दो के
बीज उमग रहे हैं। ●

आहत ज़ुलू सरदार • सी. एम. वान डेन हीवर

हरित भूमि पर ताम्र ज्योतित तुम्हारी देह;
घास की उकसी बालियाँ सुबह की ओस
ढुलकाती है यहाँ,
जहाँ तुम निंदाये हो—अपनी अन्तिम नीद।
दूधिया परो का तुम्हारा वसन काँप रहा है,
मानो अभी तक युद्धरत हो।
जब कि तुम्हारे पार्श्व मे एक खूनी रेले ने
धूलि को सोख लिया है।
भाले के प्राणलेवा फल पर
तुम्हारा हाथ निर्जीव पडा है, टेढ़ा और भूरा हाथ।

युंगुनगुन्धलोवू मे राजा तुम्हारी प्रतीक्षा करेगा
उसका हाथ आँखों पर छाया करने के लिए उठेगा, और वे
देखेगी दूर दूर तक नीलाई में
जिधर तुम गये थे—युद्ध में।
वह धमधमाते कदमो और घिसटती ढाल की प्रतीक्षा
करेगा। प्रतीक्षा करेगा नृत्य-रत टाँगो पर
श्वेत, चमकती बैल-पूँछों की।
भयावह, बनैली टाँगे।
पहाड़ी ऊँचाइयाँ तुम्हे पुकारेंगी,
ढलती रात मे आग के समीप बैठी
वह ज़ुलू-लड़की अकेली तुम्हारी प्रतीक्षा करेगी
और उसकी आँखे उगते हुए दिन को घूरेगी।
पहाड़ियो के साथ चमकता सूर्य

चरवाहों को जगा देगा
उनके गीत संकड़ी पहाड़ियो में कोहरे के साथ
बल खायेगे। और फिर से
सभी जीएंगे, हँसेगे
जब कि तुम नही होगे।
....और जब बहादुर लड़ाके लौट आयेगे
तब पहाडियाँ गगनाते नाचों,
कटकटाती चर्म ढालो और सूर्य की ओर अभिमुख
झलकते नुकीले भालो से
जीवित हो जायेगी।
तुम सोये रहो, अपनी गहरी नीद मे सोये रहो;
तुम्हारे पंख धूप और पानी मे
छितरा गये हैं,
शरीर जंग खाये तवे-सा अब नही रहा;
और तुम ?
घास की उमगी बालियाँ अब भी गिरेंगी,
पशु रंभायेगे, और जीवन पुकारेगा,
परन्तु........तुम ?
जहाँ तुम सोये हो........नीद घूमती रहेगी। ●

मैं : ● गाई बटलर

नग्न शिशिर प्रकाश में जूझता वन।
दूर, कोहरे के रोंओं से ढकी मूँगिया चट्टानो के पार
उद्वेलित, भारी, सदैव उद्धत् समुद्र के पंजे।
धुँआ उगलते, विलोडित नगर : यहाँ सूर्य का
समतल आलोक पहले बिखरता है; निष्कपट, धुली किरणें
आँखो और चेहरे पर झुक आती हैं,
मेरे शीतल खुले हाथो को चूमती हैं।

मैं अपनी पीड़ा को स्वीकारता हूँ : क्योंकि
मैं अपूर्ण हूँ, स्वतः को तौल नहीं सकता,

बना नही सकता, न संयोजित कर सकता हूँ।
आयतन नही मुझमे, मोड की शिला-सी दृढता नही,
एक अपेक्षित उत्प्रेरक व्यक्तित्व का अभाव है
मेरे भीतर।

ओह, यह परिक्रमित धरित्री और मानव हृदय
मेरे लिए अभी तक आवृत्त है, अपरिचित हैं;
तुम्हे पाने के लिए
विनमित हो, मुक्त-इन्द्रियो से अभिमुख
स्वप्नों को ढककर, शब्दो के समस्त नगरो से
बाहर निकल, निसृत हुआ हूँ।

मै बालक की भाँति जिज्ञासु बन, अथवा
क्षति पहुँचाने वाले प्रणयी के अनुरूप घूमता रहूँगा।
मेरे उन्मुक्त प्रवाहों पर
सूरज सुख मे या दुख मे
आश्चर्य, क्रोध या चुम्बनो में ज्योति दे। ●

मैं नहीं चाहता • इन्ग्रिड जोन्कर

मै नही चाहता और अधिक मिलने वाले
न चाय पर, न कॉफी पर, विशेषत: ब्राण्डी के प्यालो पर
बिलकुल ही नही।

सुनना नही चाहता कि किस कदर वे
हवाई पत्रों की प्रतीक्षा करते है;
मै यह भी सुनना नही चाहता कि वे आँखों की
कुहाओ मे जाग्रत लेटे हैं
जब कि अन्य क्षितिज-से आश्वस्त होकर सुख-नीद
सोये हैं।
और मुझे क्या करना है उनकी छोटी पीडाओ को
जानकर

कि अमुक गर्भाशय-हीन हैं, तो अमुक को 'लुकेमिया'
हो गया
कि वह बालक बिना बाजे-गाजो के आया और वह
बूढा जिसे लोग भूल गये है, बहरा है।
हरे चकत्तो मे मृत्यु-आरोहण की भाँति
वे लोग जो समुद्र तट के पास रहते हैं, जैसे कि
सहारा मे,
मुर्दा चेहरो से ईश्वर की तरह जीवित होते हैं।
मै केवल स्वतः ही भ्रमण करना चाहता हूँ
अपने एकान्त क्षणो के साथ,
हाथ की छडी की तरह
जिससे विश्वास कर सकूँ कि
मैं अभी भी विचित्र हूँ। ●

यूरोप और अफ्रीका • रॉय मेकनाब

यूरोप प्राचीन मल्लाह था
अभय, समुद्रो से आश्वस्त
एशिया की भाँति ही अफ्रीका को भ्रष्ट करता रहा।
दो अमरीकी और सभी इण्डीज़
एक पत्नी से सहवास करते रहे हैं, पर
उससे कभी विवाह नही करते।

अफ्रीका एक शान्त नीग्रो युवती
पूर्ण तराशे अंगो मे खिली,
केप के निकट टखने पकड़ने के हेतु
समुद्रो के लाड-प्यारों से उसे प्रलोभित किया गया।

यूरोप उसका प्रेमी था, किन्तु सूर्य के नीचे प्रेम का
अभाव था।
ऊपर हवा मे एक बादल उठा
मिलावटी सदियाँ आरम्भ हुई थी
समुद्री किनारे डिज़ क्रॉस लगाता है

वेन रीबीक उसकी घातक बागडे
और हम मल्लाह के किसी पुराने गुनाह के
पतन-हीन भूत से आक्रान्त हैं ।
पुराने यूरोप ने उस चेहरे की तलाश की
जिसे बचपन मे महाद्वीप ने उसे दिया था ।
'उसने' विश्वास और रीति-रिवाजो को खोजने
की उम्मीद की
जैसे अंगो पर जन्म के चिह्न खोजे जाते है ।

उसने त्वचा के नीचे कभी नही देखा
न हटकर आत्मा को शोधना चाहा ।
कभी न जाना कि अतल तल मे
कही अफ्रीका के हृदय का स्पन्दन है ।
'नकोशी शिकेलेला अफ्रीका'—ओ अफ्रीका
जिसके लक्षण ही गलत थे
अब मन्ना † सहित दिखावटी नगर
सहानुभूति के गीतो से भीगे हैं । •

भटकाव • रूथ मिलर

वह दिन याद करो जब सागर लाल हो गया था
लहरो की लालिमा जैसे सूरज थी
लहरे—'स्वर्ग भोग'—तुरन्त गिर पड़ी,
हम देखते रहे एक श्वेत टीले से,
और चकित- कि परिवर्तित तत्व इतना बदल सकता है
गहरा-लाल, चक्र चलित लोहित····किन्तु तट के इस ओर
बिल्ली की आँखो की तरह हरा, हमेशा की तरह हरा ।
लहरो की तैरती हुई उत्तेजना से
एक बूँद मे असंख्य पीले गुलाब फिर खिल उठते है
एक में, दूर····रक्तिम धब्बो मे ।

---

† यहूदियो को चालीस वर्ष रेगिस्तान में रहने पर ईश्वर द्वारा दिया गया भोजन ।

तट मे दूध धारा लहरों पर हमने
धुले, अतिरिक्त धुले हवा सदृश कण देखे
विराट समुद्र ने उठाया, हमे लिया, गोद मे, हाथों मे
और हमे खीचा।
हमे बहुत गहरे लिया, अगले के बाद अगला ...पार
बहुत हरा—विशद्—एक कदम और.... ....
अपशकुनी ज्वार हमसे दूर मर गया।
हमसे दूर—चमकदार दिन भी मरा
अलग, बिल्कुल एक दूसरे से अलग, अजीब सागर को हमने
छोडा, अपने ही अन्दर से। ●

मृत ● तानिआ वान ज़िल

कभी-कभी मृत देखने से मुझे आघात पहुँचता है,
यद्यपि कई है जो जीवन से बचे हैं
अपने को रिक्तता से आवृत्त किये हुए। आश्चर्य होता है—
क्यो वे इतने कम परे है, और परे रहने में ही
वे एक रास्ते बाँध देते है जीवन।
केवल कुछ—कलात्मक निर्णयो से, तर्क से जानते हैं जीवन खोलना,
कैसे पवित्र चिह्नो से अत्र भी गुप्त रखा जा सकता है।
अग्नि-लौ को हाथो में बन्द कर देना, जब तक वह धोखा न दे
कई, जिन्होने कुछ नही किया, नही दुराग्रह को दिया
अपितु पाया अलग बन्धन, जो पर्वतो को जानता था।
उस दिन पीली वर्जीलिया खूब खिली,
'पक्यू पाइन' की पत्तियाँ ज़मीन मे धँसी,
यहाँ, हत्यारो के लिए पर्वत मे कोई भूमि नही
बचने के लिए कोई जगह नही
फिर भी संसार आनन्दमय है। ●

['भटकाव' और 'मृत' के अनुवादक : गंगाप्रसाद विमल अन्य द० अफ्रीकी कविताएं डॉ० श्याम परमार द्वारा अनूदित]

युगाण्डा की तीन कविताएं ·

अफ्रीका • कोलिन रॉय

स्याह हो तुम सुबह की ओस भीगी धरती को जलाकर
भूमध्यरेखिक धूल बनाने वाली उज्ज्वलता के बीच मे—

स्याह हो तुम तेज़ नीली मूसलाधार वर्षा मे
प्रकाश का स्तम्भ-सा गाडते हुए उस सबके सामने—
स्याह हो तुम चाँदनी मे जकेरेन्दा वृक्ष के नीचे
मादल की लय पर नाचते हुए यौवन के बीच मे—

स्याह हो, ओ अफ्रीका, तुम स्याह हो—यहाँ
जहाँ दर्जन भर अनाम माताओ के स्तन
चूसती है नील नदी—यहाँ
जहाँ समय की तरह रोशनी
अपना ही पीछा करती हुई कूदती है, फाँदती है—

स्याह हो तुम हाँ, स्याह हो
तुम्हारी गति लय और तुम्हारी भूख—सब स्याह है,
एकाकार आपस मे मनहूस नीद मे डूबे
या यकायक दौडते तूफ़ानी पलायन मे
—कहाँ से ? कहाँ को ?—अपनी गहनतम असगतता मे—

स्याह है कमर, स्याह है आँखे
स्याह हैं बन्दर की खाल और छाल ओढे,
भालो और मशालो के साथ आदिम रस्मो रिवाज की
अनाम रूप-मुद्राएँ—

स्याह है दिन और स्याह है रात
जहाँ पर अजनबी चलते हैं अकेले पगडंडी पर
ओठो पर रस्सी के कलाबाज़ो-सी मुसकाने सजा कर—

मैं भी हूँ स्याह, ओ अफ्रीका
स्याह हूँ तुम से भी अधिक—तुमको मै जानता हूँ,
तुम नही जानते हो इस तथ्य को
और मैं डरता हूँ तुम्हारी रोशनी से। •

अफ्रीक रात को भोगो • जोज़फ़ जी. मुटिगा

अब रात है, अंधी, अंधेरी;
आकाश में बदली; रोशनी कोई नही नभ मे;
तुम पग बढाओ सामने से अंधेरे को ठेलते।
तुम डर रहे हो, देखते हो हर तरफ़ परछाइयाँ घातक
हर मोड पर मासूम आवाजे डराती हैं तुम्हे।
लो, आ गया चीता—या कोई खूंख्वार डाकू ?
एकाकी तुम साहसी बन बढ रहे हो, किन्तु एकाकी नही हो,
भनभनाते कीढ, कोलाहल मचाते खग, तुम्हे हतप्रभ किये रहते :
रूप की गोलाइयाँ आनन्द से भरती तुम्हारा दृष्टि-पथ
वातास है मादक, तुम्हे शीतल बनाता है,
तुम देखते हो, पर कुछ नही पाकर ठगे से चकित रहते हो,
तुमको न देखा था किसी ने, सिर्फ देखा स्तन पिलाते
किसी मादा जानवर ने।
तुम अकेले बढे चलते हो, उधर चीते झाँक कर चलते बने,
शल्यकी औ' हिरण पाँते घूमती है शम्ब-वन मे,
उधर दलदल के घरो मे छिपे मेढक टरटराते हैं।
देखता तुमको न कोई, और न तुम किसी को देखते हो, अकेले ही हो
अपनी संगिनी के साथ, तो फिर तुम कहाँ हो, तुम्हे कैसा लग रहा है ?
निजी दुनिया मे अकेले—भला तुम क्या नही कर सकते ?
क्यो रहे ऐसे समाजो मे जो स्वयं को यातना देता है
सोच कर, तुम कर रहे हो क्या, और कैसे कर रहे हो ?
चलो, अब अधेरे मे चले और अपनी मुक्ति पाये।

अब उजाला है गगन मे, बडी उज्ज्वल आभ है;
तुम चल रहे, सब ओर है सुख-शान्तिमय परछाइयाँ,
तुम अकेले आत्मचिन्तनलीन, पवन कितना शीतल औ' मधुर है ?
लोग लापरवाह-से घूमते-फिरते चले जाते;
हवा है शान्त, इतने मधुरतम थे कभी क्या ये फूल ?
वायु है ताजी, मगर फिर भी नींद मे डूबी हुई।

भोगने दो तुम स्वयं को संक्रमण का काल,
चाँद के पंछी अदेखे गा रहे हैं,
मधुरतम संगीत, संगीतज्ञ हैं अब तो सभी अदृश्य;
और लघु कीटाणुओ के शोरगुल की तान, जो अब गा रहे है
मेढकों के असंगत स्वर मे मिलाकर स्वर,
निजी नन्हे से जगत मे कही पर छिपकर,
भोगने दो स्वयं को सुख, उधर हानि-रहित चीते,
सडक पर करते परेडे, उस ओर मासूम से खरगोश
लॉनो पर कुदकते घास नोचते है सब निडर होकर।
क्यो डरो तुम ? निपट एकाकी बढे जाओ।
या संगिनी हो साथ, जिसकी कमर पर हो हाथ,
या फिर बैठकर चुम्बन करो, इस चाँदनी-से मधुर चुम्बन;
और रातो को, मधुर, ताजी, सुखद रातो को—
भोग डालो जब कि सारे लोग दमघोटू घरो में बन्द
बैठे ऊँघते है, धू-धुआँती आग के नजदीक।
मित्र, अफ्रीका यही है, जहाँ वर्षा या कि रातो का
अर्थ है केवल बसेरा; इसलिए तुम रात मे निकलो
मुक्त कर दो स्वयं को इन तिक्त दमघोटू हवाओ से :
गाँव से निकलो कि अधी रात को लो चूम,
चौकन्ना बनाये रखे तुमको झीगुरो-चमगादडो की जाति,
तारे और जुगनू स्वयं रोशन राह कर देगे तुम्हारी। •

प्रत्युत्तर • अलबर्ट बी. ओंगारो

ऊपर वहाँ स्वयं सर्वशक्तिमान,
एक वृक्ष पर
पीड़ा और प्यार से परिपूर्ण
हमको मुक्ति देते।
यहूदी—वे प्रश्न पूछते हैं ?
पहले अपनी ही रक्षा करो।
यूरोपीय—वे हमको दिखाते हैं गम्भीर मुखमण्डल

भगवान् खुद हमारे लिए यातनाएँ सहता है।
कहा जाता है यह सभी हमदर्दी मे ।
वे अफ्रीकी—वे मन में खिलखिलाते है,
जब तुम पूछते हो पानी के लिए :
कितना स्वाभाविक है यह हँसी–मजाक,
मुसलमान—वे मुस्कुराते है,
बस एक और पैगम्बर ।
हिन्दू—वे चकित होते हैं,
मगर वे चिन्ता नही करते ।
कम्युनिस्ट—वे कहते हैं,
उसका कोई अस्तित्व नही ।

सब कुछ हमारा है :
पाप दरिद्रता, पुण्य और सम्पत्ति ।
पूजक—वे आराधन करते हैं
पत्थर, नद–नदी और पेडो का
सिर्फ जीव है ।
क्यो वे प्रकट नहीं करते हैं,
समानता का कोई तत्व,
पाप के सिवाय,
जिसके लिए तुम वहाँ लटके रहते हो।
फिर मर जाते हो, और वे
सभी कहा करते हैं
चलो, हम कोई पाप करे ।
वे पाप करते है, करते चले जाते है।
और तभी तेजी से कोई आवाज़ आती है,
जो सुनायी नही देती, फिर भी आ जाती है,
'मै हूँ तेरी पुण्य भावना और
मै कहती हूँ कि तुमने किया है पाप
अपने भगवान के विरुद्ध ।
आज्ञा पालन के लिए,
वे सभी घुटनो के बल झुक जाते हैं,

'हे भगवान, मेरा पाप क्षम्य है
मेरा पाप मानवोचित था, हे भगवान।'
और फिर अंत मे
'नहीं, मै तो मौत के समय पश्चाताप कर लूंगा,
क्योंकि मुझे पुनः पाप करना है।'
इस तरह जीवन को जीवित रखा जाता है।
उधर कोई मरता है,
इधर कोई जन्मता है। ●

[युगाण्डा की कविताएं राजीव सक्सेना द्वारा अनूदित]

रीति-हिंसा • अइग हीगो

कोई जानवर जीवित न रहेगा
नदियाँ सूख जायेंगी
गोलाकार मुद्राएँ टूट जायेंगी
और सम्मुख आयेंगी गिद्ध बाढें .... ।
पवित्र वसन्त, तीव्र कामनाओ से रक्त दूषित है ।

हमारे द्वारा पैदा 'बीज-पौधा' चट्टानो पर परिपक्व,
ताजी पत्तियाँ पीडा मे त्वरित
काले वस्त्रो से आवृत्त कुमारी देवियाँ—यहाँ लाल आँखों में,
प्रश्वासित संतापो में, खुले ओठो शिकार खोजती हुई
मैं शमन करने वाले उनके 'वूडू'* नृत्य सुनता हूँ
और उनके पिघलते हुए, प्रशान्त करते हुए क्षति के तनाव को,
वे पवित्रस्थल के पुंसत्वहीन प्रेत को दु ख-चिन्ह दिखाने
आये हैं । •

मूक बहनों का गीत • क्रिस ओकिग्बो

हम छोटे मुग्दर हैं
हम छोटे मुग्दर हैं
द्वारों से बाहर
एक रिक्त प्राकृतिक दृश्य में

बिना स्मृति हम वहन करती हैं
हम मे से हर एक
अपने ही देश की मिट्टी के पात्र हैं
परन्तु अग्राह्य धूल के नही ।

* 'वूडू'—नीग्रो तथा अन्य अफ्रीकी जातियों का एक रस्म नृत्य ।

यहाँ केवल नमक-मुँह
पीली रेत-तटो पर चमकती है स्मृतियाँ
हम वहन करती हैं
हमारे संसार मे प्रवाहित
हमारे संसार मे जो असफल बीत गया
यह गीत हमारा राजहंस गीत है
यह गीत हमारी साँसो का स्थैर्य प्रतीक है।
तुम्हारा कोई गीत राजहंस गीत नही
हर साँस की अपनी ध्वनि रहने दो।
यह गीत हमारा राजहंस गीत है ।

यह गीत हमारे संवेगो का चुप है
तुम्हारा मौन रात्रि हवा मे फैल गया
इस गध मे बिखरने दो गोताखोरो के सुरीले गीत
यह गीत हमारा राजहंस गीत है ।

हर गीत तुम्हारी उत्तेजना की आह है
अदेखी छायाएँ जैसे लम्बी अगुंलीनुमा
हवाएं तुम्हारे सूत्रो से तोड रही हैं ....
यह गीत—नभमण्डल का संगीत है । •

[नाइजीरिया की उक्त कविताएं गंगाप्रसाद विमल द्वारा अनुदीत]

टेलीफोन वार्त्ता • वोल सोयिनका

किराया तो लग रहा था संगत, और स्थिति
निरर्थक थी । मालकिन सौगन्धे खा रही थी कि वह रहती है
उस जगत से अलग । कुछ और नहीं रह गया था
केवल अपना राज कहना था । 'मैडम,' मैंने चेताया,
'मैं सहन नही कर सकता कि यात्रा बरबाद हो—मैं हूँ एक अफ्रीकी ।'
एक मौन । भद्रलोक की दबाव से बनी हुई शिष्टता का
मौन संचारण । और वह स्वर जब आया तो
लिपस्टिक की पर्त चढ़ा, सोने से मढ़े हुए लम्बे से
सिगरेट होल्डर के पाइप से सुसज्जित । मैं पकड़ गया बुरी तरह

'कितने काले हैं ?'....मैंने गलत नही सुना था....**'आप हलके रंग के है**
या, है बहुत काले ?' **बटन** बी । बटन ए । सडी हुई बदबूदार
किसी सार्वजनिक टेलीफोन-घर की साँसे ।
लाल बूथ । लाल पिलर बॉक्स, लाल-लाल दो-मंजिली
बसो की कोलतार पर खिच्च-पिच्च । वह सब था यथार्थ !
झेप कर अशिष्ट खामोशी से, आत्म-समर्पण कर
अवाक् मै विवश था फिर बात को स्पष्ट पूछने के लिए ।
और देखो तो, वह शब्दों पर जोर कुछ और ही बढा रही थी—

'क्या आप काले हैं ? या बहुत हलके रंग के ?' रहस्य प्रकट हो गया ।
'आपका मतलब है—रंग शुद्ध चाकलेटी या दूधिया चाकलेटी है ?'
उसकी स्वीकृति रोग-संक्रामक थी, जो अपने प्रकाश से कुचलकर
रख गयी निर्वैयक्तिकता को । शीघ्र ही स्वर का संचरण सम्भल गया ।
मैने कहा, 'पश्चिमी अफ्रीकी सीपिया'—और फिर जैसे यह बाद मे
खयाल आया हो, 'मेरे पासपोर्ट मे दर्ज है ।' कल्पना की उड़ान के लिए
एक खामोशी, उस समय तक, जब तक ईमानदारी ने उसका स्वर
टेलीफोन के माउथपीस पर झनझनाया, **'यह क्या होता है ?'** और
मान भी लिया, **'मैं नहीं जानती यह क्या होता है ?'** 'ब्रूनेटे की तरह ।'

'वह तो काला ही होता है, क्यों, क्या नहीं ?' 'नही, बिल्कुल तो नही
चेहरे से मै ब्रूनेटे हूँ, मगर मैडम, आप मेरे बाकी
शरीर को भी देखे । मेरे हाथ की हथेली, मेरे पैर के तले
सुनहरे भूरे रंग के है । और बेवकूफी से, मैडम, मेरे बैठे रहने के कारण
मेरा पृष्ठ भाग बहुत काला है । एक क्षण सुनें तो मैडम,' मैने अपने कान पर
उसके रिसीवर की तूफ़ानी गर्जना सुनकर यूँ कहा,
'मैडम', मैने विनय की, 'क्या आप स्वयं नही देखना चाहेगी मुझको ?' •
[राजीव सक्सेना द्वारा अनुदीत]

रेत तट पर एक रात • गेबरिअल ओकारा

सागर से आती है दौड़ती हुई हवा
लहरे सर्पों की तरह पटकती है फन

रेत और पुनर्मुद्रित फूत्कारे, उत्पात मे
'आलड्यूरा' के पाँव धो रही है, रेत पर कडा दबाव देती हुई,
आँखे कडी रखे हुए केवल हृदय देख सकते है
वे चीखते हुए प्रार्थित हैं
आलड्यूरा की प्रार्थना मे, छोटे घरो के पीछे से बाहर आ रहे
है वे
उच्चजीवन के प्रति बाध्य, श्रवण शक्ति से,
और कार रोशनियाँ चकित करती हैं जोडो को बाँहो मे बाँह
लिये, धुले शब्द पीछे छोडते हुए
और आगे क्रेता-विक्रेताओ की तरह मोल-भाव करते हुए।

और खडे हैं मृत रेत पर
मै अपने घुटने जीवित रेत पर महसूस करता हूँ
पर दौडती हुई हवा उगते हुए शब्दो को मार देती है। ●

[गगाप्रसाद विमल द्वारा अनुदीत]

मैडागास्कर की एक कविता :

हमारी प्रेयसि • ज्यां—जोज़फ़ रिबेयरिवेलो

वह
 कि जिसके नयन निद्रा के अनूठे प्रिज्म
जिसके अधर स्वप्न-गरिमापूर्ण
जिसके पांव सागर पर टिके हैं सुदृढ
जिसके दीप्त हाथो मे सुशोभित
सीपियां, उज्ज्वल नमक के खण्ड

वह
 रखेगी उन्हें कुहरे भरी इन खाडियो के किनारे पर
बेच देगी अभी नंगे नाविकों के हाथ
जिनकी उस समय तक कट गयी है जबाने
जब तलक वर्षा नही आती

वह
 तभी फिर से प्रकट होगी
और हम तब देख पायेगे
केश उसके पवन मे फैले हुए, बिखरे हुए
मानो समुद्री घास के तिनके
और शायद मिले हमको नमक के निःस्वाद कण। •

घाना की एक कविता

याचना • क्वेसी ब्र

तेरे मन्दिर मे पूजा के लिए आज हम आये हैं—
हम धरती के पुत्र।
नंगे गोपालक ले आये हैं वापस
घर अपनी गौओ को बहुत सुरक्षित,
भौंहो से वर्षा के जल को पौछ
खडे हुए खामोश बाँसुरी सम्भाले ;
चिडियाँ अण्डे सेती हैं अपने कोटर में
अनगाये स्वर से करती हैं इंतजार फिर नयी भोर का;
छायाओं की भीड़ तटो पर जमी हुई है
अपने ओठो को सागर की छाती से चिपकाये;
घर लौटे हैं सब किसान श्रम की दुनिया से
बैठे है अलाव के पास,
कहानी कहते है प्राचीन युगों की।

हम धरती के पुत्रों की प्रार्थना भला अब
तेरे मंदिर में अनसुनी रहेगी क्योकर,
जब कि हमारे हृदय गीत से भरे हुए है
और काँपते हैं कातर से अधर हमारे ?
होडें करते है नन्हे जुगनू तारों से
इस अलाव की आँच सूर्य से,
इस तूम्बे का जल सशक्त वोल्टा धारा से।

फिर भी हम आये हैं जर्जर दरिद्रता को ओढ़े,
अपने स्वामी के द्वार याचना करने। ●

कागो की एक कविता

जन्त्र-मन्त्र के साथ नाचो

जी० एफ़० डी० चिकाया ऊ तामसी

यहाँ तो आओ
हमारे तृण बड़े स्वादिष्ट
आओ यहाँ पशु-पक्षियो

भंगिमाएँ और ये आघात रोगी हाथ के
कभी बल खाते, कभी हर धारणा का गर्भ करते चाक
वह—कौन है ?—जो हमारे भाग्य का निर्माण करता है
यहाँ तो आओ ज़रा पशु-पक्षियो
यहाँ हर भोर आती है नज़ाकत से
खून ओढे है नकाबें
इन्द्रधनुषी, स्वप्न हैं—गर्दनों में फाँसियों की रस्सियाँ

यहाँ तो आओ
हमारे तृण बड़े स्वादिष्ट
अपना आगमन पहला
बना चकमक पत्थरों का तीक्ष्णतर विस्फोट
कैसा है अकेलापन
वायदा करती हमारी मां नवीन प्रकाश का। •

सेनीगल की तीन कविताएं :

तुम्हारी उपस्थिति • डेविड ड्याप

तुम्हारी उपस्थिति मे मैने फिर से अन्वेषित किया अपना नाम
अपना नाम—अब तक जो छिपा था जुदाई के दर्द में
फिर से अन्वेषित की आँखे, जिन पर अब नही है तापो का परदा
तुम्हारी हँसी ने परछाइयो को बेधती हुई मशालो-सा
उद्घाटित किया है अफ्रीका को, कल के जमे हुए हिम-खण्डो को चीर कर

दस वर्ष, प्रियतमे, दस वर्ष
हर दिन मरीचिका और ढहे हुए विचारो का
हर रात शराब के जामो से बेचैन
और वे यंत्रणाएँ, लदा है जिनसे आज, कल के कटु स्वाद मे
रूपान्तरित करती हैं जो प्रेम को सीमाहीन नदी मे
तुम्हारी उपस्थिति मे मैने फिर से अन्वेषित किया है अपनी रक्त-स्मृति को
और हँसी के मुक्ता-हार गले मे चमकते हैं हमारे दिनो के
नित नये उल्लासो से प्रभावान। •

नीलिमाएँ • लियोपोल्ड सेडार सेंघोर

वसन्त ने बुहार दिये हैं मेरी हिम-जडित नदियो के अंचल
नवोदित पौधा सिहर उठता है कोमल त्वचा पर पहले प्रेम-स्पर्शों से।
लेकिन देखो तो जुलाई के मध्य मैं ध्रुव-क्षेत्रीय शीत-सा हूँ अन्धा !
मेरे पंख नीले निलय की सीमा से टकराते हैं, टूटते हैं
मेरी कटुता के बहरे लौह-द्वारो को चीर नही पाती है कोई किरण।

खोजूँ मैं कौनसा निशान ? कौनसा परदा मैं बजाऊँ ?
भालो को फेंक कर कैसे मैं पा सकूँगा अपने आराध्य को ?
सुदूर दक्षिण के राजसी ग्रीष्म ! तुम आओगे बहुत देर से मनहूस सितम्बर मे !
तुम्हारी अनुगूँज का विकम्पित उल्लास किस पुस्तक मे पाऊँगा ?
किस पुस्तक के पृष्ठों पर, किन असाध्य अधरो पर

पाऊँगा तुम्हारे मदमाते प्यार का मधुर स्वाद ?
तिलाजलि दे रहा है अधीर प्रलाप मुझको ! आह, पत्तों की वर्षा की
मनहूस टप-टप
खेले जाओ ए ड्यूक, अपनी निर्जनता का खेल यह तब तक
सो न जाऊँ जब तक मैं सिसकते-बिलखते ! ●

मुझको बताओ ए अफ्रीका

डेविड ड्याप

अफ्रीका, मुझको बताओ ऐ अफ्रीका
वह जो कमर है झुकी हुई— वह क्या तुम्ही हो ?
वह जो लदा है कमर-तोड अपमानों का बोझ–वह क्या तुम्ही हो ?
वह जो पीठ पर टीसते है घावो के लाल-चिन्ह
और कहते हैं— हां, दोपहर की धूप मे कोड़े और मार लो
वह क्या तुम्ही हो ?

एक गम्भीर स्वर उत्तर देता है मुझको
अधीर पुत्र, वह तरु नव पल्लवित और सशक्त
वहां, वह वृक्ष श्वेत औ' मलीन मुख
फूलों के बीच गौरवपूर्ण एकान्त का भोगी
वही है अफ्रीका—तुम्हारा प्रिय अफ्रीका
जो बार-बार धैर्य सहित उठ खडा होता है बलात्
जिसके फल प्राप्त कर लेते है
स्वतंत्रता का कटु फल। ●

एशियाई कविताएँ

*

अल्जीरिया :

अब्दुल वहाब अल-बयाती : सुप्रसिद्ध कवि। राष्ट्रीय आन्दोलन को जगाने मे प्रमुख भाग लिया।

फिलस्तीन :

इब्राहिम तौक़ान : अरब राष्ट्रवादी। अल्पावस्था मे मृत्यु। 'कबूतर' अरबी की सुप्रसिद्ध कविता है, जिसका स्वर फडफडाहट जैसी ध्वनि देता है।

इराक़ :

मुहम्मद क़ासिम : बगदाद निवासी, सुप्रसिद्ध कवि एवं विद्वान। प्राचीन काव्य शैली मे नवीन का उत्तम समावेश किया।

अकरम फ़ादिल : नये कवियों मे अग्रणी। सुप्रसिद्ध कवि।

जापान :

शिन ऊका : जन्म १९३३। जापानी कविता के प्रमुख आलोचक तथा कवि, दो संग्रह प्रकाशित।

हिरोसी इवाता : जन्म १९३२। आधुनिक कवियो के 'वानी' दल के सदस्य। एक संग्रह प्रकाशित।

यू सूवा : जन्म १९२९। दो संग्रह प्रकाशित।

मिनोरू योसिओका : जन्म १९१९। 'वानी' दल के सदस्य। दो संग्रह प्रकाशित।

फिलिप्पाइन्स :

जी० बर्स बुनाओ : 'कमेण्ट' के सम्पादक। कविताओ मे जापानी शैली के प्रयोग।

कोरिया :

किम सू युंग : जन्म१९२१। नये कवियो मे अग्रणी।

को वॉन : जन्म १९२५। कवि और अनुवादक। कोरियाई कविताओं का अंग्रेजी मे अनुवाद किया है।

इण्डोनेशिया :

चयरिल अनवर : जन्म १९२२। २७ वर्ष की अल्पायु मे मृत्यु। बड़ी तीखी और आधुनिक प्रभावो से पूर्ण कविताएँ लिखी हैं, वरन् यह कहना अधिक संगत है कि इण्डोनेशियन कविता को नया मोड दिया है।

सितोर सितुमोरंग : २९ वर्षीय युवक कवि। अनवर के सीधे उत्तराधिकारी। परन्तु कई दिशाओ मे उनसे भी आगे।

डब्ल्यू० एस० रेन्द्रा : जन्म १९३५। लम्बी कविताएँ लिखने मे सिद्धहस्त। पुरानी शैली मे भी नवीनता का चमत्कार उत्पन्न करते है।

वियतनाम :

तो थुई येन : कवि, कहानीकार एवं आलोचक। मात्र २५ वर्षीय।

लंका :

जॉर्ज केट : लंका के विश्वविख्यात चित्रकार एवं कवि।

वर्मो शिवरासू : युवक कवि। आधुनिक चित्रकला में भी अग्रणी।

अलजीरिया को • अब्दुल वहाब अल-बयाती

मैं संग्राम मे जाता हूँ
राइफल और गोली लेकर।
और सूरज जलाता है
ढलानो और खेतों को
उगो, ओ सूरज,
उठो, ओ बच्चो,
क्योकि अलजीरिया भी
मेरा देश है ।
मैं गीतों को पीता हूँ....
रोओ मत, बच्चो।
जगमगाओ ओ सूर्य !
शत्रु द्वार पर है ।
केवल एक शब्द—
सूरज रोक दिया गया है ।
गोली की एक आवाज सुनाई देती है
और शत्रु मर जाता है !

ग्रीष्म प्रवेश करता है
एक जले हुए घर के किनारे।
····और उसके साथ मै भी।
मेरे लिए नही है
रास्ते से अलग हटना।
लेकिन कौन चीखता है वहाँ ?
अलजीरिया के बच्चे !
वापस लौट जाओ
विदेशी सैनिको !
'धाँय' की एक गूँज
और शत्रु मरता है....
मैं भी घायल होता हूँ
लेकिन मैं चलता हूँ।
और घायल सूर्य
जीवन को अग्निकुण्ड-सा जलाता है,
मै क्रोध से घुट जाता हूँ
और मूर्च्छा में बडबडाता हूँ।
'एक बूँद पानी चाहिए मुझे
साथी, मुझे दो,
ताकि दर्द मिट जाय
आग को बुझादो।'

रोओ मत, ओ माँ !
मै सचमुच मरा नही हूँ
मृत्यु मेरे लिए प्रतिबंधित है
अभी, इस समय !
ध्वज से लपटे उठ रही है
विद्रोहमयी
मेरे देश के एक रक्त से आरक्त
चमकती हुई ··· ·······
फ्रांस का सिपाही
मेरे कान मे चिल्लाता है
'गंदे अलजीरियन,
मै तुझे मार डालूँगा,
अगर तू नही कहेगा—
'अलजीरिया फ्रास का है !'
लेकिन मै कहता हूँ
'अलजीरिया की जय हो !
विजय हो—अलजीरिया के मेरे भाइयो की
स्वतन्त्रता आयेगी
और हमेशा के लिए शान्ति भी !'

रोग्रो मत, ग्रो माँ,
सूर्य डूबता है
ग्रौर पीडा समाप्त होती है,
मेरे हृदय की।

ग्रौर मुक्त, खुले कण्ठ से
मैं दुहराता हूँ:
'ग्रलजीरिया की भूमि
हम कभी नहीं खोएँगे!' •

वसन्त और बच्चे • अब्दुल वहाब अल-बयाती

मृतको की ग्राँखो के समान
बगदाद के रास्ते पर
बच्चों की ग्राँखे ग्राँसू बरसाती हैं।
वसन्त
हमारे देश मे लौट ग्राया है,
ग्रौर हमारे खेतो मे,
गुलाब ग्रौर तितलियो से विहीन।
ग्रौर हमारे देश में मदिरा बनाई जाती है
मृतको के ग्राँसुग्रो से,
बच्चो के रुधिर से,
ग्रौर बंद दरवाजो में
मेरे नगर के ग्राँगन मे
सूर्य को सूली पर चढा दिया जाता है।
मेरा नगर बगदाद;
गीतो से विहीन, उत्सवों से रहित;
बच्चों की ग्राँखों में दिन घिर ग्राया है।
वह हमारे खेतो में लौट ग्राया है
हमारे मृतकों को दफनाने, बिना गुलाब के
बिना तितलियो के,
मोर्चे के रक्त को सुखाने के लिए
ग्रौर हमारे बच्चो के
ग्रौर ग्राँखों के रग से ग्राकाश को झनझना देने के लिए
लपटों के रंग से
ग्रौर वेदना से। •

'ग्रलजीरिया को' ग्रौर 'वसन्त ग्रौर बच्चे' ज्ञान मारिल्ल द्वारा अनूदित]

जो इतिहास बन गये • मलेक हद्दाद

वे इतिहास बन चुके हैं—
इतिहास, जिसकी बाँहों में सब समा जाते है
वे, जिन्हे मै जानता था, जो बहस करते थे,
संतति उत्पन्न करते थे, संकट झेलते थे,
रात गहराने पर जिनकी सफेद मुस्काने चमकने लगती थीं।

अखबार खरीदते मैं उनसे फिर मिलता हूँ।
मेरे दोस्त, जो अब केवल शब्द है, संख्या हैं, नाम हैं।
अपनी जिन्दगी के दस साल और हजार दिन,
हमने साथ खाना खाया,
सिगरेटे उधार ली,
बच्चो के साथ खेले।
मैंने उन्हे अपनी कविताएँ पढाईं।
मेरी माँ ने उनकी देखभाल की;
वे मेरे हमदम थे।
हमने बातें की····

पर अब वे इतिहास बन चुके हैं—
इतिहास, जिसकी बाँहों में सब समा जाते है
वे बन चुके हैं
एक आत्मा, एक देश। ●

मैं जानता हूं • मलेक हद्दाद

मैं जानता हूँ मैड्रिड के आँसू अभी सूखे नहीं हैं
उसका लहू अभी भी सड़कों की नालियों मे बहता है

मुझे याद हैं ग्रेनोबिल के करीब
शहीदों की सूची टँगी है

मैं जानता हूँ सियूल अभी भी अन्धा है
उसकी आँखे नष्ट है

वियतनामी धान के खेत लाशो से आबाद हैं
मेरे कानो मे मैडागास्कर की कराहो का संगीत गूंज रहा है

आज हममें से हर किसी को
भय का एकाधिकार प्राप्त है

रोज मै अपने दोस्तो की संख्या गिनता हूँ
मेरे दोस्त कितनी जल्दी मरते जाते हैं

संख्या खत्म होने पर मै गिनना बन्द कर देता हूँ
नामो के संख्या मे बदलने पर मै गिनना बन्द कर देता हूँ।

●

पोर्ट सईद का गीत • उमर-अबू-रिशेह

इज्जत से ज़्यादा बचाने की चीज़ कोई भी नहीं है
ऐ सागर की रानी, उसके लिए लड़ना भी पड़ सकता है,
अरे, सौन्दर्य के गर्व मे तुम तट पर झुकी हो
गम्भीर, निरासक्त········

सौन्दर्य वरदान कब हुआ है ?
ये लुटेरे—हर लहर पर—प्रतीक्षा में है—
कितने बेशर्म, कैसे गा रहे है, चिल्ला रहे हैं
—पर तुम्हारे कान, इन्द्रियाँ बन्द हैं !........
····पर नही ! देखो, देखो—
वे आते हैं—वासना और घृणा से भरे आते हैं !
फिर भी तुम खडी हो—स्थिर, निरुत्साहित ।
यह मुद्रा—शोभा का तीर्थ !
·· तट लाल हो गया है
और वहाँ तुम पड़ी हो;
वे वार पर वार कर रहे हैं
पर तुम आह भी नहीं भरती;
तुम्हारी दृढता ढाल बन गई है
न तुम समर्पण करती हो
न मरती ही हो !

शर्म और नफ़रत से वे पीछे हटते हैं
तुम सुनती हो, वे कह रहे हैं
'इसके हृदय नही है····नही है—
'यह जड़ है····'
तुम मुस्कराती हो,
और उस किनारे पर अदेखा
प्रभात अवतरित होता है ! •

प्रश्न • उमर-अबू-रिशेह

ओ पहाड और आसमान
तुम मेरे आलिंगन से
दूर क्यों भागते हो ?
मैं तुम्हारे कदमो के पास
हर दफ़ा क्यों लड़खडाता हूँ ?

खो गये रास्तो के सामने
मुझे अकेला छोड देने को
क्या पत्थर उग आये हैं ?
मेरे खेल के मैदान खत्म होते जाते है,
यह सब परिवर्तन क्यों हुआ ?

और यह शराब भी
—जो दैवी पेय है—
अब मुझे क्यो नही जलाती
क्यो नही उस स्वर्ग तक पहुँचाती
जहाँ कामना समाप्त हो जाती है ? •

दो प्रेमी • अनवर नफेह

कल के दो प्रेमी
आज उर्वरा धरती मे सो रहे हैं
उनके चारो पैर सेब के बगीचे मे गड़े है
गर्मियो में गाँव के पक्षी उन सेबो को खाते हैं
और उनकी शाखे आसमान के मैलानियों को साया देती हैं
उनके हाथ जंगली कबूतरों के खेलने को खुले हैं
और उनकी आवाजें और साँसे समुद्र मे मिल गई हैं
प्यार के सब प्रकार और मनोहरताएँ

कब्र मे या नये पालने मे खो गई हैं
उनका यौवन वसन्त के साथ मिल गया है
और आँसुओ के यन्त्र पतझर की नीली आँखो मे खो गये है
और शिशिर की काली अंगुलियो के समक्ष बर्फ़ की चमक
और प्यास से मुक्त दो पंखुडियो का फूल
सदा के लिए फव्वारे मे नुचा पडा है
प्यार के सब प्रकार और कोमलताएँ
कब्र मे या नये पालने मे खो गई हैं
सिवा उनकी प्यारी आँखो के, जो अंधेरे मे भी चमकती है
चार मोमबत्तियाँ आँसुओ से नष्ट हो चुकी है । ●

फिलस्तीन की एक कविता

कबूतर • इब्राहिम तौक़ान

सफेद कबूतरो के लिए सही है कहना कि वे धीरे से फुसफुसाते है;
शाति और सौहार्द्र के प्रतीक, सृष्टि के आरम्भ से;
शाखाओ के साथ वे झुक जाते है, जब हवा उनके जंगलो को छूती है;
जब दोपहर की गर्मी जलाती है, वे उड जाते हैं अपनी झील
की ओर,
और फिर चक्कर खाकर गिरते हैं, प्रेरणा की तरह, जो तुम्हे सहसा
जकड लेती है, अजाने ही;
दो टुकडियाँ दो किनारो पर, अव्यवस्थित खडी हुई, जहाँ वे गिरी थी,
प्रत्येक अपनी तस्वीर को चूमती है, पानी जब वह पीती है;
जब वे अपने सिर हिलाते है, बूंदे उनके गले पर अटक जाती है,
मोतियो की तरह।
इस तरह शीतल होकर, वे फिर उड जाते हैं, शाखाओ पर, अपने पालनो पर,
उनके पंखो की फडफड़ाहट प्रकट करती है उनका सन्तोष;
और जब उनकी साँझ आती है, तब उन्हे बेसिर का
समझते हो;
सम्पूर्ण आवृत्त होकर, सिर अपनी पाँखो मे छिपाये वे सोते है। •

इराक की दो कविताएं

बास्केट-बॉल का खिलाड़ी

मुहम्मद कासिम

खूबसूरत रातो मे जवान रात के साथी
आत्मा के मित्र ! जब मैं अकेला होता हूँ,
दिन, जो समाप्त होता है हमारे मिलन के बगैर
उसे निकाल देता हूँ मैं अपनी जिन्दगी से ।
गली मे, जिसमे मै तुम्हे नही देखता
मेरी आँखे मेरे पैरो से जिद ठान लेती है;
सुबह, जिसमे तुम मेरे सूर्योदय नही होते
मेरे लिए उतनी ही अंधेरी होती है जितनी कि रात ।

बास्केट-बाल को मत छुओ : मेरा हृदय
एक गेद है तुम्हारी जकड मे ।
दौडते मे सावधान रहो : तुम्हारे पाँवो से
मेरी आत्मा लिपटी है ।
इसके बजाय, प्यार के संगीत मे डूब जाओ ।
तुम्ही वह धुन हो जिसमे मेरे शब्द गुम्फित हैं ।
मेरे शिष्य, मै तुम्हारी शिकायत करूँगा तुम्ही से,
यदि तुम साहस करोगे भूलने का, कि मै कौन हूँ ।

मै कभी कक्षा मे नही जाता,
लेकिन कम्पन मेरे रक्त को जमा देता है ।
मेरा वाक्-प्रवाह तुम्हारी दृष्टि से व्याकुल हो जाता है,
मै कह नही पाता हूँ वे बाते, जो मुझे कहनी चाहिए ।
इस तरह अपने भ्रम मे मै मूक हो जाता हूँ,
और अपने दर्द से वाचाल ।
क्या मैं प्यार को छिपा सकता हूँ ? मेरे ओठो पर वह बोलता है,
शब्द मेरी आँखो मे रहते हैं ।

अपना जीवन मैंने बिता दिया है अक्षरों में, व्यर्थ:
विद्वत्ता से कही अच्छा है
उसके साथ बैठना, जिसे तुम प्यार करते हो,
मदिरा लेकर, रात्रि के एक प्रहर भर।
रहने दो विद्वत्ता को ! मनुष्य के किस काम की है वह ?
यौवन से निचोड लो सुख, जो शेष हो।
और यदि संसार एक स्वप्न है, उसे बदल दो
कि वह सुखमय हो, दुःखमय नही।

अवकाश आ गया है। क्या तुम सोचते हो
मस्तिष्क और चेतना विश्राम लेगे ?
तुम्हारा चेहरा एक उद्यान है। क्या मै
गुज़ार दूँ यह ग्रीष्म इसके गुलाबो की गंध पीकर ?
अगर अप्रेल मे मै गर्मी की शिकायत करूँ,
तो अगस्त कैसा होगा ?
वियोग की लपट मुझे अभी जलाती है;
क्या होगा मेरा, जब ग्रीष्म मुझे जलाएगा ?

मेरा रहस्य छात्रो ने जान लिया है;
प्यार कब छिपकर रह पाया है ?
उनकी फुसफुसाहट से एक शान्त आवाज आती है,
उनकी आँखो मे निर्णय पढे जा सकते हैं।
जवान लडके व्यंग्य से हँसते हैं।
और बड़े बुरा कहते हैं।
मेरी 'गुड मॉर्निग' का वे उत्तर देते है :
'गुड मॉर्निग हमारे अध्यापक को, और प्यार को भी।' •

कहाँ चुनूँगा मैं फूल !

अकरम फादिल

ओ सुन्दर !
यहाँ है प्यार
जिसे हम खोजते है और जिसे हम खरीदते हैं,

हम उसके बन्दी है
और बन्दी को हक़ नहीं चुनाव का,
गुलाब के बगीचे मे आने का,
वहाँ बैठने और प्रतीक्षा करने का ।

सुन्दर आँखो की रोशनी मे
तमाम भय निवास करता है;
मुझे भय है और फिर भी
मुझे किसी व्यक्ति का भय नही है
जब मैं तुझे आलिगन में बाँध लूँ छिप कर,
जहाँ कोई मुझे देख न सके ।
यहाँ कहाँ चुनूँगा मैं फूल ?
तुम्हारे मुस्कुराते हुए चेहरे पर ?
या सिन्दूरी गालों पर ?
या इन दोनो पर ?
कितने सुन्दर हैं वे !!

वर्षो का एकान्त
हमेशा के लिए उचटी हुई नीद हो गया है;
जीवन कड़ुआ और उदासी से भरा ।
मुझे वे पुरस्कार देते है तुम्हारे कोमल शव पर
और मेरे मुरझाये हुए पत्र फिर जीवित हो उठते है–
और मेरे वृक्ष हरिया जाते है । ●

(फिलस्तीन व इराकी कविताएं ज्ञान भारिल्ल द्वारा अनूदित)

टर्की की दो कविताए

नग्न सुप्ता • फ़ाजिल हुस्नु डगलारका

रात की स्मृतियाँ
न दो
प्यार ने मुझे—हाथो, पाँवो तक कसा है
न बुलाओ—कदापि नही
मृत, सुषुप्त जाग जायेगे
वे—जागेगे और चले आयेगे हमारी शैया तक
अपने छोटे-से पथ मे
जब
हमारे ऊपर नक्षत्र घूम रहे होगे
वे—चले आयेगे
क्या—मैंने कहा कि ऊपर कुछ सरक रहा है
सम्भव मैं सुप्त होऊँ—सम्भव यह सब कुछ····
तुम इतने पास आओ कि उन्हे सुनाई न दे
मुझे रात की यादे न दो—इन अवसरो पर
न बुलाओ। •

मृत्योपरान्त • सी० टरान्सी

मृत्यु के सम्भाव्य को चाहते हुए—हम मर गये
बडे दिक्‌मण्डल मे, अनकहा रह गया चमत्कार।
अब कैसे न गीत याद करे—आसमान के टुकड़े, वृक्षो
की टहनियाँ और चिडियो के पंख
सब जिये हमने—उसमें अभ्यस्त रहे।
और अब उस संसार का कोई सम्पर्क सूत्र नही
हमारे बाद—हमे पूछने को रह ही क्या गया—
हमारी गहरी अनन्त रात का कौनसा अलग अर्थ है ?
और हमारे पास झाँकने का—सूत्र भी नही
अब—उस टूटन का कोई प्रत्यावर्त्तन नही
जिसे देखें हम········। •

[टर्की की कविताओं के अनुवादक—गगाप्रसाद विमल

मैं वही हूँ • इतज़िक मैंगर

तुमने कहा कि मै शरद् हूँ। तो देखो, मै वही हूँ।
परिष्कृत सुवर्ण; शीतल और गम्भीर रजत; बैगनी और लाल—
मै वह सेब वृक्ष हूँ, जिसकी शाखे दीवार पर झुकी है।
मै वह सोने का सिक्का हूँ, जो कूड़े मे खो गया है। ढूंढ लो उसे।

तुमने कहा कि मै बियाबान जंगल हूँ। तो देखो, मै वही हूँ।
वजनी बलूत, काँपती लताएँ, लाल और पीली पत्तियाँ।
मै खरगोश का बच्चा हूँ, उसकी मृत्यु का भय हूँ।
मै सोने की बाली हूँ, जो काँटो में गिर गई है। ढूँढ लो उसे।

मै गाँव की सकरी सडक हूँ, गाँव हूँ; जंगल का सैलानी गुलाब हूँ।
मै हरियाला बगीचा हूँ, नीला साया हूँ, पुरातन कुटिया हूँ।
मै संसार की हर वस्तु हूँ और उसका आलिंगन करता हूँ।

जो भी, जो भी तुमने कहा, मै वही हो गया—
बर्फ मे बहती गौरैया, अनाज मे गहरे घुसा झींगुर।
मेढको से भरे तालाब मे सोने की मछली गिर पडी है। ढूंढ लो उसे।

•

शांति बम • बर्नार्ड कॉप्स

मुझे एक बम चाहिए, एक व्यक्तिगत बम, मेरा शांति बम।
सबेरे मै उसकी परीक्षा करूंगा, जब मेरा बेटा जागेगा,
अंगडाइयाँ लेता, नीद की खुशबू से तरोताजा। बूम! बूम!!
आओ बेटे, कमरे में नग्न होकर नाचो।
मै सड़क पर बम की परीक्षा करूंगा, जिससे पडोसी जग जाये,
सामने रहनेवाले राज-मजदूर, विद्यार्थी और वेश्याएँ जग जाये।

मुझे एक बम जरूर चाहिए और तब मैं खिड़कियाँ खोल दूंगा
और कमरे में चारों तरफ कूदता फिरूंगा

मेरी बीबी अपने ड्रेसिंग गाउन मे मेरे साथ नाचेगी
और मेरे चारो तरफ देवदूत उड़ते होगे ।

मुझे एक सुखी पारिवारिक बम चाहिए, जिसे मैं खुद ही चला सकूँ,
मैं छत पर चढ जाऊँगा और दोपहर को उसे दाग दूँगा
सारी दुनिया चौंक उठेगी और तब हम अपना लंच लेगे ।

मै अपनी बीवी की छातियाँ हँसी से फाड देना चाहता हूँ । पिंग ! पोग !!
दोपहर बाद जब बच्चे स्कूल से घर लौटते हैं; तब मैं उसे चलाऊंगा ।
मुझे एक हँसी का बम चाहिए, जिसमे चॉकलेटे, चुम्बन, आइसक्रीम,
गुब्बारे, फ़ाउण्टेनपेन, पटाखे और गेदे भरी हों ।
मै वह बम चाहता हूँ, जो दुनिया को गुलाबो से ढक दे ।

मुझे हमेशा खुश रहो और शांति से मरो का बम चाहिए,
मुझे आराम से अपने बिस्तरो पर सोओ का बम चाहिए,
सुबह फिर मिलेंगे का बम चाहिए,
मणि पद्मे हुम् का बम चाहिए, ओम् ओम् बम चाहिए,
मेरा अपना बम, व्यक्तिगत बम, शाति का बम— •

कर्नल और बम • शिन ऊका

कर्नल कर्नल कर्नल
मैं तुम्हें प्यार करता हूँ
इस उदास सुबह को तुम कहाँ जा रहे हो
मिलिट्री स्कूल
जहाँ ५० मूलियां तुम्हारा इन्तजार कर रही हैं

कर्नल कर्नल कर्नल
मै बमो को प्यार करता हूँ
इसीलिए तुम्हे प्यार करता हूँ
मै उन अनन्त सम्भावनाओ को प्यार करता हूँ
जो बमों के घोडो के पीछे छिपी है
मै एक लाख हिस्से वाले बम के
टिक-टैक करते भूकम्पीय सौन्दर्य को प्यार करता हूँ
मै तुम्हे प्यार करता हूँ
क्योकि तुम इससे ज्यादा कुछ नही हो

ओ कर्नल कर्नल कर्नल
बम से ज्यादा तुम कुछ नही हो
धुएँ के बादल कितने खूबसूरत लगते हैं
क्या ही दर्दनाक खूबसूरती
भूकम्प-मापक को हिचकियाँ लेने और बेहोश होने दो
लोगों को हिचकियाँ लेने और बेहोश होने दो
पक्षियो को हिचकियाँ लेने और बेहोश होने दो

कर्नल कर्नल कर्नल
मुझे तुम्हारे लेक्चर पसन्द है
वे देकार्त से ज्यादा स्पष्ट होते है
अतः मैं लेटिन मे उनको लिख लूंगा
और चौराहे पर सबको बाँटूंगा

मैं उन्हे ताँबे पर खुदवाकर वेदी पर चढा दूँगा
या संस्कृत मे उनका अनुवाद कर लूँगा
और उन्हे आलिंगन में बाँधकर नीबू तले मर जाऊँगा
मै वे सब, उस आदमी को पढकर सुनाऊँगा
जिसने अमेरिका की खोज की
कोलम्बस से पहले

पर कर्नल कर्नल कर्नल
बम क्यो बनाये जाते हैं ?
पी पी पी पी
क्या तुम इतना सरल सत्य भी नही समझ पाते ?
हम बम बनाते हैं
क्योकि हम बमों का नाश करना चाहते है
शांति के लिए नाश
इसलिए हम बम बनाते हैं
और बम कभी पूरे नही पडते
क्योकि शांति ज्यादा दिन नही चलती
बम बनाओ, बम बनाओ
पी पी पी पी

ओ कर्नल कर्नल कर्नल
देखो मैं तुम्हे प्यार करता हूँ
क्योकि तुम एक पुराने वाहियात बम से
ज्यादा कुछ नही हो
मैं तुम्हे त्याग दूँगा
यह पवित्र आज्ञा है
जो संस्कृत की कविताओ मे लिखी है
और मेरी भी ●

बिल्ली और चिड़िया • हिरोसी इवाता

समुद्र द्वीप को घेरे है
तट पर एक केकड़ा मरा पडा है
एक दो तीन दिन गुज़र जाते हैं
अब केकड़े की जगह रेत ही रेत है।
छुट्टियाँ धोखे की तरह बिताकर
एक आदमी अपनी फैक्ट्री वापस जा रहा है
जो समूचे शहर को घेरे है।
विविध पत्थरों से बना यह बैंक
सिर्फ चार आदमियो की हित-रक्षा करता है।
पहला बिस्तर पर उलटा लेटा है
दूसरा आतंकित-सा इधर उधर ताक रहा है
उसके हाथ और उंगलियाँ काँप रही हैं
अब किसकी बारी मरने की है ?
तीसरा चुपचाप फोन मिला रहा है
चौथा तेज़ी से उस पहाड़ी पर चढ रहा है
जो उसके शानदार घर के ऊपर खडी है।
अगर कोई गुलाब का पौधा लगाये
तो क्या दूसरो को भी गुलाब ही लगाना चाहिए ?
जो जिसका जी चाहे, करे।
अचानक झाडी से निकलकर एक बिल्ली
धीरे धीरे आगे बढ रही है
उसकी पीठ पर एक छोटी चिडिया है
बिल्ली भी बच्ची है, चिड़िया भी बच्ची है
बच्चे बच्चों के दोस्त होते ही हैं।
पर एक दिन बिल्ली जानवर बन जाती है
चिडिया पर उसका दिल मचल उठता है
और वह उसे खाने लगती है
स्वाद मीठा है, चरपरा भी है
बिल्ली के गले से वह नीचे जाता है

पेट उसे अपने में भर लेता है
ओह ! आह ! बस बस ! धन्यवाद !
न कोई रोता है, न हंसता है
ओ ईसप साहब !
अरे ओ ईसप साहब ! ●

शरद का पुरुष • यू सूवा

गाँव के पास
उदास रास्ते पर
एजरा पाउण्ड-सी दाढी रखे
एक व्यक्ति मेरी तरफ घूरता है
मैं उसे सलाम करता हूँ
प्राच्य के प्रभावी शब्दों से उसकी अभ्यर्थना करता हूँ
पर वह सिर्फ हँस देता है
प्रेत जैसी हँसी
शरद की गंध चारो ओर फैली है
और यह पुरुष
शरद का ही है
जो तीव्र दृष्टि से
मुझे ताक रहा है ●

विगत • मिनोरू योसिओका

एक आदमी अपनी पतली गर्दन ऐप्रन से ढकता है
उसका कोई विगत नहीं, कोई इच्छा नही है
वह चलने लगता है, हाथ में तेज़ चाकू लिये
चीटियों की कतार उसकी आँख की कनखी से गुज़र जाती है
धरती की धूल लोहे की छाया से परेशान होती है
एक रकाबी है

सिर्फ एक स्टूल है और
खिडकी के पास सूरज से उतरती एक कराह है
जो खून के गिरने का इन्तजार कर रही है
मेज पर एक लाल जानवर है
इसी का वह आदमी इन्तजार करता रहा है
चौडी पीठ, चितकबरी
लटकती हुई पूँछ
ज़मीन तक
और बाहर, वर्षा
सर्दी की छत पर
आदमी बाँहे समेटता हैं
और अपना चाकू
पेट में घुसेड़ देता है
पर कोई प्रतिक्रिया नही होती
तब फिर और भी ज़ोर लगाकर
वह उसकी अंतड़ियाँ निकाल लेता है
धरती को बचाता हुआ
एक अंधेरी खोह
प्रकट होती है, जहाँ
तारे चमकते और लुप्त हो जाते हैं
काम खत्म करके
वह दरवाजे से
अपना टोप उठाता हैं
अदेखा :
खूँटी पर लटका जो डर के मारे
टोपी के नीचे जा छिपा है
खून बहने लगता है
समय की गोलाई और भार से •

समुद्र • डाइगाकू होरी गुची

आसमान की स्लेट पर
एक 'सीगल' अ ब स लिखती है

समुद्र भूरा घासीला मैदान
और सफ़ेद लहरे भेड़ो का झुण्ड हैं

जहाज़ टहलता है
पाइप सुलगाते हुए
जहाज़ टहलता है
एक धुन बजाते हुए। •

नाई की दूकान पर • टारा यामामोटो

'महोदय क्या आप एक क्षण जागे रह सकेंगे—और मुझे काम करने देंगे'
पर नाई की दूकान की दुपहरी है,
शीशे पर झलकते है दूरगामी उत्सवी जहाज़।
'क्या गाँव का मेला चल रहा है ?'
'हाँ, महाशय।'
मुरझाये चहरे पर हँसी की कतरनें
'महाशय यह प्यारा मौसम है—है न ?'
जवान ग्रामीण मेले की ओर दौडते हैं—वसन्त मेले मे।
शीशे मे, आधा हजामत किया चेहरा....बहुत थका और बण्डल लगता है।
मेरे ही पीछे चली जाती हैं हँसती हुई ग्राम्य बालाएँ
और शीशे मे छपता है गहरा नीला आसमान।
वहाँ आतशी सामग्री जाती है····
मै कभी ग्रामीणो को गाते हुए न सुन सका—
शीशे में एक चमकीला दृश्य—मेरे पीछे चरमतम पर ग्रामीणी मेला,
मै—अकेला,
शीशे में एक पीले राक्षस की तरह।
जब जीवन का मेला हो
तुम भी—कभी एक बार—दिल से मुस्कराओगे— •

'समुद्र' और 'नाई की दूकान पर'—गंगाप्रसाद विमल द्वारा अनूदित

फिलिप्पाइन्स की दो कविताएं

रात्रि का दृश्य
दो श्वेत हंस तुम्हारी
प्रतीक्षा में········किनारे पर काली
बिल्ली कूदती हुई ●

●

अनुभूति बहने की
तुम्हारी आंख का स्पर्श
अंगुली की कोमल हँसी
मुझे आसमान तक उठाती ●

● जी० बर्स बुनाओ

मलाया की एक कविता

मि० तान मूसेज़ • ई तियांग होंग

मैं हमेशा पीछे क्यो रह जाता हूँ ?
मेरे सब मित्रो ने भाग पाया है
देश की समृद्धि मे, जीवन के
बढे हुए स्तर मे,
मेरा भाग्य ज्यों का त्यों ही है :
पैसा नही शेयरो के लिए—
कपास, टिन और रबर के—
न छोटे उद्योगों के लिए ।
लॉटरियाँ मै छू नही सकता,
कितनी ही दफ़ा एक ही नम्बर से
इनाम हार चुका हूँ ।

क्यों मेरे सभी दोस्त
नयी नयी बस्तियो में
बढिया हवादार घर खरीद लेते हैं ?
मैं सरकारी क्वार्टरों मे रहता हूँ ।
वैसे, जरा सोचने पर,
यह ऐसा बुरा भी नही, किराया कम है,
औरो की दशा तो मुझ से भी खराब है,
वे गंदी बस्तियां, गैरेजो, झोंपड़ियों
और गौशालाओ मे रहते हैं ।
और कौन जानता है
जल्दी ही मेरा प्रमोशन हो जाय,
विशेष वेतन मिलने लगे ?
कम से कम एक तरक्की तो मिल ही सकती है ।
आज जो अपरिचित है, कल नेता बन सकता है,
मेरे क्लासफ़ैलो मि० ली की तरह, जो अब
बड़ा आदमी है, मुझसे तिगुना वेतन पाता है!!!

इसलिए मैं सोचता हूँ
कि रिटायर होने पर
मैं राजनीति में हिस्सा लूंगा
या कोई व्यापार कर लूंगा ।

क्योंकि सरकारी नौकर
कभी जल्दी अमीर नही हो सकते।

•

बर्फ़ • किम सू-युंग

बर्फ़ जीवित है
यह गिरी हुई बर्फ़ जीवित है
जमीन पर गिरी हुई यह बर्फ़ जीवित है

आओ खाँसें
युवक कवि, आओ अब खाँसें
इस बर्फ़ के सामने खड़े होकर खाँसे
निश्चित होकर यह करे
जिससे कि बर्फ़ खुद देख सके

बर्फ़ जीवित है
उस आत्मा और शरीर के लिए
जो मृत्यु को भूल गये
आओ खाँसे
सबेरा होने तक यह बर्फ़ जीवित रहेगी

आओ खाँसे
युवक कवि, आओ अब खाँसे
बर्फ़ की तरफ़ देखते हुए
और उसके सामने ही बलग़म गिरा दे
जो सारी रात हृदय मे अटका रहा। •

भूमध्यसागर पार करते हुए

को वॉन

•

यह समुद्र जहाँ युद्ध ने खुदकुशी की :
सूर्य निश्चित फैले जल में
अरुणिमा बिखेरता डूब रहा है—
सूर्य नीचे उतर जाता

क्षितिज पर जहाँ भूमध्यसागरीय सभ्यता की
विविध बोलियाँ गूँज रही है,
चारो ओर विश्राम की घोषणा करती सी,
वहाँ आग की लपटे फैलती जाती हैं।

आज रात समुद्र के गर्भ में सूर्य टकराता फिरेगा
कंकाल को हाथो मे उठाये
उसकी रोशनी में बटोरे मोतियों की तरह

और इसके बाद शीघ्र ही जब चारो ओर उठती लहरे
चाँद की चमकती रोशनी मे द्युतिमान हो उठेगी
और तुम, समुद्र ! पूरे यौवन मे होगे,
तब एक और ज्वार उत्पन्न करना। •

कार्नेलिया जो अमेरिका में मिली

मिन जाई-शिक

•

कार्नेलिया एक दिन आई—मौसम इतना अच्छा था
कि गमले सभी बाहर दहलीज पर रखे थे।
दुनिया की कौन-सी चीज़ हम पा नही सकते थे ?

तुम्हारी नीली आँखें भूमध्यसागर की तरह है;
त्वरित आलिंगनो के निकट मार्ग से हमने लम्बी रात गुज़ार दी,
क्योकि माँ का भय निरन्तर मस्तिष्क मे बज रहा था।

बचपन से मै बहुतों का सिर खाता रहा हूँ, क्योकि
माँ ने मुझे यही सिखाया है;
में भी खाऊँगी, उसने कहा क्योकि मेरे पास अपना सिर नही है।
पर तुम्हारे बाल तो सुनहरे हैं, क्या वे किसी गाय के हैं ?

राजधानी की सड़कें मेरे पीछे,
पोटोमैक में मैं अपना यह तथ्य देखता हूँ—
घर मेरा दूर योंग सान गैग में है।

मेरी जन्मतिथि २६ फ़रवरी है,
इसलिए इस साल वह नहीं आयेगी।
तो तुम सिर्फ सात साल के हो ?
मैं तुम्हे बहुत बहुत चाहता हूँ।

प्रभात के चुम्बन, शय्या पर गरम गरम !
तुम रोती ही रही, और मै घर लौट आया।
प्रभात के चुम्बन ताजे और मुलायम !
मै कठोर पर कोमल, मूर्ख कोरियन,
अपने साथ अलार्म घड़ी ही लेकर आ गया। ●

मेरा घर • चयरिल अन ।र

मेरा घर कविता के अम्बारो का बना है
उसमे आइने जड़े है, जिनमे सब साफ दिखाई देता है
चौड़े आँगनो वाली विशाल इमारत से मैं भाग आया
मे अपना रास्ता भूल गया हूँ और उसे ढूँढ नही पाता

धूमिल रोशनी मे मैने एक तम्बू खडा किया
पर सबेरे तक वह न जाने कहाँ उड गया

मेरा घर कविता के अम्बारो का बना है
यही मैने शादी की और सन्ताने उत्पन्न कीं

लगता है बहुत इन्तज़ार करना है, पर वह चल पडा है
अब मैं प्रकाशमान दिन तक पहुँच नहीं पाता
यदि खुदा शब्दो को एकत्र करने आये
तो उनके मधु को पिघलने देना •

एक कमरा • चयरिल अनवर

एक खिडकी इस कमरे को
दुनिया मे भेजती है। भीतर घुसकर चमकता
चंद्रमा कुछ और भी जानना चाहता है
'यहाँ पाँच बच्चे रहते हैं,
मैं भी जिनमे से एक हूँ।'

मेरी माँ रोती हुई सो गई है,
जेल का मनोरंजन एकाकी ही होता है,
मेरे परेशान पिता भी लेटे हुए
पत्थर में लगे क्रॉस पर चढ़े आदमी को देखते रहते है।

सारी दुनिया आत्महत्या किये ले रही है !
मैं अपने माँ और पिता से, जिनकी गणना ही नही होती,
एक और छोटा भाई चाहता हूँ :
तीन और चार गज वाले इस टाइट कमरे मे
मनुष्यो के भीतर जीवन नही फूँका जा सकता। ●

जागरण ● सितोर सितुमोरंग

उसकी रात्रि: वेश्याओ के लिए,
उसका दिन: अकेलेपन को भोगने के लिए।
जहर उसके शरीर मे फैलता जाता है,
वह शिकायत नही करता।

वह खिडकी तक आता है,
रोज की तरह बाहर उगते सबेरे को देखता रहता है।
पेड फल-फूल से लदे जा रहे हैं,
दुनिया पहले से ज़्यादा खूबसूरत होती जाती है।

यह देखकर वह और भी उदास हो जाता है।
कामना उसे ढकने लगती है।

तब किसी स्त्री की छातियो पर पलटकर
वह एक नये स्वर्ग के सपने देखने लगता है। ●

अभागा कोज़ान ● डब्ल्यू. एस. रेन्द्रा

जंगल आग से भर उठा है,
जले हुए लक्कड़ आसमान को,
जो दुनिया भर मे फैला है,
श्राप दे रहे हैं।

ऊपर चंद्रमा लहू से चमकता
आँखों से नारंगी आँसू बरसा रहा है।

कोजन ! कोजन !
बीमार लड़के,
तुम्हे क्या तकलीफ़ है ?

क्या अपने अंधेरे घोंसले से वह खूसट बुढिया
अपने जाल और फंदे लिये लौट आई है ?
(लाल धरती में से बदबू निकलती है
और कुहरे के गोले पर सवार
बुढिया आती है।)

कोजन ! कोजन !
बीमार लडके,
तुममें कौन सी नफ़रत है ?
(वह कोजन का उदास दिल चुरा लेती है,
उसकी आँखों के फूल लूट लेती है,
वह बेचारा कुछ कह भी नहीं पाता।)

कोजन ! कोजन !
ऊपर चंद्रमा लहू से चमकता
आँखों से नारंगी आँसू बरसा रहा है,
और अब मैं जान गया :
बुढ़िया की आंतो में तुम ही पड़े हो। ●

वापसी • तो थुई येन

मैं और तुम, परस्पर परिचित, ध्वस्त बचपन
की सतह पर सपनो के कुहरे में खेलते रहे
और सुदूर दीवाल की तरह जीवन
हमारी हँसी और रोदन वापस लौटाता रहा

हमने नही जाना कि पुल के नीचे कितना जल बह गया
पीछे मुडकर देखते ही हम अचानक डर गये
हमने देखा काँटे हमारे चारो ओर घिर आये है
(ईश्वर ने ईडन से ज्यादा जानने वालो को निकाल दिया था)

फिर मै एडवेन्चर करने चला और तुमको भूल गया
अपने बचपन, परिवार और मित्रो को भूल गया, सब भूल गया
मै दुनिया को बदलना और नयी मानवाकृति गढना चाहता था
अपनी जवानी के हथियार बनाता मै घूमता रहा

कुछ लोगों ने तालियाँ बजाईं, कुछ नाराज़ हुए—
अपने चेहरे की गर्द देख पाने वाले थोडे ही होते है
अब मै हर शाम, घिर आये बादलों मे रोने लगा
हथियारों को पेड पर टाँग मै सितारो को समझने चला

इतिहास आगे बढता गया, सभी स्टेशनो पर ठहरता—
मानवता की यात्रा का प्रोग्राम पहले से नियत है
बस, मैं लौट पडा, मेरे हाथ उत्साह से भी रिक्त हो उठे
मै उदासीनता की चट्टान पर आ बैठा और स्तब्धता में
बालों को सफेद होता, आत्मा को कब्र मे जाता देखता रहा

कि एक शाम अचानक ही तुम से फिर भेट हो गई
मै इतना बदल गया था कि तुम पहचान ही न सकी
पर तुम्हारी आवाज़ में अभी भी हमारा विगत
और तुम्हारे शरीर के आतिथ्य में आश्रय पाने का निमंत्रण गूँजता था। •

पर्वतों पर वसन्त आता है • वान दाई

मैं एक बार रही हूँ 'फा लोग' में, एक एकान्त 'मीम्रो' गाँव मे,
ऊँचे एक पर्वत पर, बहुत से शिखरो के ऊपर,
ढालू चट्टानों पर झुका हुआ मेरा मकान बादलो मे लिपट जाता था,
एक स्वच्छ पहाड़ी झरना गुनगुनाता था उसके पाँवों मे।

मेरा जीवन बिलकुल शान्त था कि एक अभागे दिन
कठोर मृत्यु ने आकर मुझसे लूट लिया मेरे प्रिय पति को।
मेरे पिता ने. प्राचीन जीर्ण रिवाज के अनुसार, मुझे बाध्य किया
एक चाचा से विवाह करने को, उस ठण्डी उदास शीत-ऋतु में।

वह पचास का था और अफीम पीता था तमाम दिन और रात,
मै बिलकुल अकेली रह जाती थी यद्यपि वह हमेशा वहाँ होता था।
जब मै अपने शीशे मे देखती थी, नाराजी उलट कर मुझे घूरती थी,
आँसू अविराम बहने लगते थे; मेरा हृदय निराशा से भर जाता था।

संसार से और अपनी अफीम से मेरा पति चला गया,
उसके स्थान पर मुझे ले लिया दूसरे एक चाचा ने,
बताते दु:ख होता है, मै फिर एक बार विवाहित हुई।

केवल बीस की उम्र मे तीन बार विवाहित,
तीन बार जीवन ने मुझे विधवा पाया।
एक बार क्रान्ति उस गाँव तक आई,
और उस आघात से टूट गिरी सब जंजीरें और उदासी।

मैने पहाड़ को छोड़ दिया अपनी मातृभूमि के लिए काम करने को,
जब मै केवल बीस की ही थी, उस अखरोटो के मौसम मे,
एक दिन एक चाबुक वाले नौजवान को मैंने देखा,
उसकी आँखे प्यार का अग्निमय संदेश मुझे दे रही थी,
जिसने मेरे हृदय में उत्तर देती हुई चीख उठा दी।

पहली बार मैंने पाया अपने हृदय को धड़कते हुए गहराई से,
फूल अधिक खुशबूदार थे, हवा चलती थी बहुत मन्द,

झरना बेहद खुश होकर बहा, जंगल अत्यधिक चमकने लगा,
कौन गा रहा था वहाँ ? मेरा धड़कता दिल, झरना या कि पक्षी ?

आज, जब हम साथ-साथ झरनों में खेलते हैं,
'वह उदास मीओ लडकी अब एक नयी जिन्दगी जीती है'
सुनकर मैं झरने मे देखती हूँ, और देखती हूँ उसके आईने मे
मेरा हृदय अब मुक्त है तमाम कठिनाइयो और मुसीबतों से । ●

(अनु० ज्ञान मारिल्ल)

रात्रि में भय • जॉर्ज केट

आश्चर्य करता, डूबता जाता, उसके प्यार की रात्रि में,
उसके निर्वसन जीवन के अनन्त चक्रव्यूह में,
यात्रा करता अंधेरे मार्गों पर, गर्म रक्त पर,
अंधकार मे बहते सुर्ख जल पर, गर्म रात पर,
मैं कभी कभी अंधेरे में संशयपूर्वक महसूस करता हूँ
एक बस्ती, जैसे मछलियो की
कभी कभी सर्द पैबन्द
रिक्तता की गीली अंगुलियाँ, शून्य का जकड़ता पंजा,
उसके प्यार के प्रवाह में बर्फीले पैबन्द । •

दरवाज़ा • धर्मो शिवरामू

छाया खाई मे गहरी हो रही है,
कुछ भी खोजे बिना,
एक स्वचालित द्वार खुल जाता है ।
पतंगा लौ के भीतर
द्वार ढूंढता है और टूटकर गिर पड़ता है ।
इस कठोर अग्नि मे
अब यह कौन घुस आया है—
भीतर से दीवालों को खटखटाता ?
लपट अपनी पंखुड़ियाँ खोलकर
भीतरी खाई को प्रकट करती है •

हिन्दी :

कुँवर नारायण : जन्म १९२७; दो संग्रह-प्रकाशित। 'तीसरा सप्तक' के कवि। कहानियाँ एवं आलोचनाएँ भी लिखते हैं। लखनऊ मे मोटर का रोजगार करते हैं ताकि साहित्य का रोजगार न करना पड़े।

कैलाश वाजपेयी : (डॉ०) जन्म १९३४, ११ नवम्बर। 'आधुनिक हिन्दी कविता मे शिल्प' पर डाक्ट्रेट। शिवाजी कॉलेज, दिल्ली में हिन्दी विभागाध्यक्ष।

गिरिजाकुमार माथुर : 'दूसरा सप्तक' के कवि। दो कविता संग्रह और दो ध्वनि नाटक प्रकाशित। आकाशवाणी, जलन्धर के संचालक।

जगदीश गुप्त : (डॉ०) जन्म १९२५; गुजराती तथा ब्रज भाषा के कृष्ण काव्य के तुलनात्मक अध्ययन पर शोध। 'नयी कविता' के सम्पादक। तीन संग्रह प्रकाशित। चित्रकार भी है। 'भारतीय कला के पद चिन्ह' चित्र-कला सम्बन्धी प्रकाशन।

जगदीश चतुर्वेदी : जन्म : १३ जनवरी १९३३; केन्द्रीय हिंदी निदेशालय में अनुसन्धान सहायक। युवक कवि, कहानीकार। कुछ आलोचनाएँ भी लिखी हैं। 'प्रारम्भ' काव्य-संकलन के सम्पादक। 'भाषा' त्रैमासिक के सम्पादकीय विभाग से सम्बद्ध।

ठाकुरप्रसादसिंह : जन्म : १ दिसम्बर १९२४; प्रगतिशील आन्दोलनों से सम्बन्ध रहा। संथाली गीतों के प्रभाव से कविता में प्रयोग

किये। कवि, कहानीकार एवं उपन्यास-
कार। हिन्दी समिति—उ० प्र० के
सचिव। कविता संग्रह 'वंशी और
मादल'। 'महा मानव' प्रबन्ध काव्य।
उपन्यास 'कुब्जा सुन्दरी'। कहानी
संग्रह 'चौथी पीढ़ी'।

नेमिचन्द्र जैन : जन्म : अगस्त १९१८; 'तार सप्तक'
के कवि। कविता के अतिरिक्त
उपन्यास, नाटक, सगीत, नृत्य,
लोक-संस्कृति आदि पर; हिन्दी और
अंग्रेजी मे अन्य बहुत-सा आलो-
चनात्मक लेखन। तीन पुस्तके शीघ्र
ही प्रकाशित हो जाने की आशंका।
राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, दिल्ली में
नाट्य साहित्य के अध्यापक।

बालकृष्ण राव : जन्म २७ दिसम्बर १९१३। १९३७
मे आई. सी. एस. प्रतियोगिता मे
भारत मे प्रथम स्थान। १९५४ मे
आकशवाणी के महानिदेशक पद से
त्याग पत्र। सम्प्रति केन्द्रीय हिन्दी
शिक्षण-मण्डल, आगरा तथा
हिन्दुस्तानी अकादमी उ० प्र०,
प्रयाग के अध्यक्ष। पाँच कविता संग्रह
एवं अनेक अनुवाद प्रकाशित।

भवानीप्रसाद मिश्र : जन्म २९ मार्च १९१३; संस्कृत,
मराठी, बंगला, गुजराती और थोडी-
सी फारसी के ज्ञाता। कहानी,
एकांकी व आलोचना भी लिखी;
किन्तु कविता लिखने में शायद इतना
सुख मिलता है कि मान लेते हैं,

श्रौर कुछ नही लिखा। कविता-संग्रह 'गीत फरोश'।

माखनलाल चतुर्वेदी : एक सच्चे राष्ट्रीय कवि; आरम्भ मे 'एक भारतीय आत्मा' के नाम से लिखते रहे। ७५ वर्षों के जीवन मे आने वाले अधिकांश पतझरो को भी वसन्त की तरह जिया। लगभग ६० वर्षों से लिखते रहने पर भी जिनके सृजन में बासीपन नही आया। मधुर शृंगारिक कविताएँ भी खूब लिखी।

रामदरश मिश्र : (डॉ०) नाटक के अलावा सभी कुछ लिखते है किन्तु मूलतः कवि। दो कविता संग्रह, तीन आलोचना पुस्तके और एक उपन्यास प्रकाशित!

शम्भुनाथसिंह : (डॉ०) जन्म—१७ जून १९१७; संस्कृत विश्व विद्यालय, वाराणसी में हिन्दी विभागाध्यक्ष। छः कविता-संग्रह, दो कहानी-सग्रह, एक नाटक, एक निबन्ध और दो आलोचना की पुस्तके प्रकाशित। गीत काव्य और नयी कविता मे समान रूप से प्रतिष्ठित।

शमशेर बहादुरसिंह : जन्म १९११; सरल व्यक्ति—क्लिष्ट कवि। दो कविता-संग्रह, एक निबन्ध-संग्रह, एक कहानी व स्केच संग्रह तथा कुछ अनुवाद प्रकाशित।

श्रीकान्त वर्मा : जन्म—१८ सितम्बर १९३१; नयी पीढी के कवि एव कथाकार के रूप मे समान रूप से प्रतिष्ठित। सुप्रसिद्ध पत्रिका 'कृति' के सम्पादक। स्वतन्त्र लेखन-जीवी। एक कविता संग्रह प्रकाशित। एक कहानी संग्रह और दो कविता संग्रह शीघ्र प्रकाश्य।

मा निशाद प्रतिष्ठां • कुँवरनारायण

शास्त्रीय निदेश जो अनुकूल नही
सामाजिक निदेश जो आजीवन शास्त्रीय न होंगे—
हम जिनकी काँटेदार चहारदीवारी के भीतर
फूलो के हाशिये उगाते रहे,
बहारो को बुलाते रहे—
क्या वे दंडदायी पहरेदार
कभी सवेदनीय होंगे ?

काश, ये दीमक के टीले वाल्मीकि होते—
शास्त्र–हठी क्रौंच–वधिक
अर्ध–सत्य अधिक ठीक होते—
कि मैथुन पाप नही,
पाप थी वह घातक बाधा
तीर जब हृदयहीन किसी आखेटक ने
जीवन पर साधा।

पशु तडपा क्षण भर ही,
लेकिन उस पीडा का महामर्म ज्ञानी ने जाना—
जीवन की लघुतम इकाई की हत्या में
असम्मान जीवन का।
पहला सौन्दर्य–बोध—
वीतराग ऋषि ने भी
जब समस्त जीवन संवेदनीय माना
उस नगण्य पशु तक के दर्द को प्रतिष्ठा दी। •

समझदार लोगों की कविता • कैलाश वाजपेयी

तुम्हारी परिस्थिति के ठीक विपरीत हूँ
हर्ष मुझको नहीं
यंत्रणा मुझे नही
संक्रान्त मैं नहीं

मै वस्तुस्थिति के ठीक विपरीत हूँ !
तुम्हारी खुशी किसी सजे ड्रॉइंग रूम में बन्द है
ड्रॉइंग रूम–जिसमे
सोफा है–परदे है !
ट्राजिस्टर–रिकार्डप्लेयर
कैक्टस–एण्टीक है।
न समझ आनी-सी पेण्टिग—मनीप्लाण्ट
शीशे मे तैरते कुछ जलजन्तु, और
(एक बहुत सुन्दर-सी पत्नी भी)
तुम्हारी खुशियाँ इसमे बन्द है।
यह सपाट ड्रॉइंग रूम
इस पूरी दुनिया मे हर जगह एक है।
तुम्हारी यंत्रणा—
इस सजे ड्रॉइंग रूम मे
ना घुस पाने की तीखी छटपटाहट है
यह छटपटाहट भी
इस सपाट दुनिया में हर जगह एक है।
तुम्हारी समस्या—
वह सीढी है,
जिसका अंत दस है
जिसका अथ एक है।
लेकिन मेरे लिए—
न कहीं दस है
न कही एक है।
सभी जगह दस है
सभी जगह एक है।
ओ तमाम समझदार लोगो—
मै तुम्हारी मन.स्थिति के ठीक विपरीत हूँ।
मुझे माफ़ करो। •

अवस्तु करुणा • गिरिजाकुमार माथुर

जब मेरी आँखो में
बादल सूनी बेमानी शामों की
स्तब्धताएँ मँडराती है—

जब मेरी वाणी मे
बिन बूझी पीड़ा से असहाय
बच्चो के बेक़सूर चेहरे उतरते हैं—

जब मेरी बातो में
अनचाही विवशताएँ
अधटूटी नीद मे घबराती हैं—

जब मेरे मौन में भी
अछूती आत्मा के पारखी की
गुहार रहती है—

तब तुम
जान बूझकर इस सबको
अनजाना कर देते हो

तुम्हे मेरे मन की समस्त करुणा समर्पित है
जिससे वह चुक जाये
और मैं अधिक निस्संग हो जाऊँ। •

उम्र का माथा • जगदीश गुप्त

लौट आया हूँ
थके-हारे अहेरी सा
गहन वन में भटक कर;
सुनहली हिरनी सदृश हर बार
तन-झलक से
मुझे छलती रही—चढ़ती धूप।

गहन वन से
लौट आया हूँ,
उस मनोहारी थकन से
मुक्ति भी कुछ पा चुका हूँ;
किन्तु मेरी उम्र का माथा–
दीपते प्रत्येक हिम-छादित शिखर की
छाँह मे बहती
प्रखर स्रोतस्विनी के
वीचि-सिंचित
इन्द्रधनुषी कूल पर
—अब भी टिका है। ●

चार छोटी कविताएँ • जगदीश चतुर्वेदी

एक अनुभूति

कल सुबह एक नन्ही सी चिडिया मर गई
मुझे उसकी डबडबाई आँखें अजीब-सी लगीं
मुझे ऐसा लगा
कि दूर देश में
मेरी बच्ची बीमार है
और मै उसे देख नही पाऊँगा। ●

दर्द का वृक्ष

सोते सोते चौक जाता हूँ
और बिस्तर की परतो को इर्द गिर्द
लपेट लेता हूँ
भय का प्रेत
मुझ एकाकी को खाये जाता है;
दर्द का नन्हा-सा पौधा
वृक्ष बनकर शरीर मे छाया जाता है। ●

दाम्पत्य जीवन (?)

सुराही से निकलती आवाज
पलंग की चरमराहट
दूध के गिलासों की खनक
····कितना व्यवस्थित दाम्पत्य जीवन है
पडोसी का। ●

शिशु का जन्म

कल रात मुझमें उग आये दो पेड—
कैक्टस और गुलाब;
दो छोटे छोटे हाथ
दरवाजा थपथपाते रहे। ●

लोकान्तरण • ठाकुरप्रसाद सिंह

यह राजपथ····
इधर इस पर मेरा आना-जाना बढ गया है
यह एक अलग रास्ता है,
मात्र कुछ दूर तक धरती पर,
फिर आकाश पर,
फिर कही नही !
इस छायाभ रास्ते पर दोनों ओर
गहरे शेड हैं—
सेण्ट मेरी, क्लब, गॉल्फ कोर्ट, कोठियाँ।
बीच में तैरती कारें, नायलन, टेरेलिन
बाब्ड हेअर, हँसी का टेक्स्चर—
छायाओ के ताने में बाने सी
बार-बार बुनी जाती लकीरें—
सब मिलकर एक विशाल जाल बुनता जा रहा है
जाल-लचकीला—
झटका देने पर खुशी से फैलता,
चूकने पर बाँध लेता—गहन आलिगन में।

मैं पदातिक,
इस जाल में मक्खी सा
उलझ गया हूँ।
इतना प्रकाश, इतनी भाग-दौड़
इतना ड्रेस-रिहर्सल ?
सब है, पर जैसे निष्कासित
किये जाने की गंध में डूबा।
आखिर क्या है जो
निष्कासित है ?
कौन है ?

रात बारह बजे
इस रास्ते से पैर घसीटता लौटता हूँ—
तभी कच्चे गले की,
दूध-सी गीत-गंध का झोंका
मुझे जिला जाता है।
कुचले फन-सा आहत
एक स्वप्न जगता है,
खड़ा होता है, झूमता है।
आँखों में अंजन-सा
अंधकार,
नयी आँख देता है।
]क से नीचे
गहरे नाले में पुल की छाया में—
एक पुरानी मज़ार पर दिये जलते हैं।
भीड है, बीच में कच्चा शिशु-कण्ठ
और नये पत्ते-सा चिकनाया गीत।

घुप्प अंधेरा, काली आकृतियो
के चेहरो पर पिघल कर बहती
तैलाक्त रौशनी—
इतने सारे लोग कहाँ से आ गये ?
क्या बाम्बियों से रेंग कर निकले ?

मैं सहम जाता हूँ,
पैर दबा कर रेलिंग तक
जाता हूँ, देखता हूँ।
डरते-डरते झाँकता हूँ—
डरता हूँ कि कहीं मेरे
आने से ये चौकन्ने न हो जायँ।
वेश बदल कर मुझे मुक्त करने के लिए आये
ये बनजारे कहीं वैसे ही न लौट जायँ
मुझे बिना मुक्ति दिये ही ।
रेलिंग पर झुके एक तन्द्रा घेर लेती है,
स्वप्नाविष्ट-सा मैं जैसे सो जाता हूँ,
सडक पर खड़े-खडे ही,
नीचे उतर जाता हूँ
और ऐसे ही
लोकान्तरित हो जाता हूँ। ●

दो कविताएँ • नेमिचन्द्र जैन

हम वही हैं जो हम नही हैं।
भाव जो कभी मूर्त न हुए
शब्द जो कभी कहे नही गये
जीने की व्यथा मे डूबे हुए स्वर
जो ध्वनित नहीं हो पाये
राग नही बने।
जीवन के अचीन्हे सीमान्त के
चरम क्षण
होने न-होने के,
अपनी अनन्तता में ठहरे रहे
निरन्तर अपनी अतीन्द्रिय सम्पूर्णता में
जीते रहे
पर बीते नही, भोगे नहीं गये।

आकार-रूप-हीन आघात
जो बस सहे ही गये
अनजाने अनचाहे।
आँखों की कोरों में
उमड़े हुए आँसू-से अनदीखे
अटके ही रहे, झरे नही।
वही है हम
जो नही है। ●

●

आओ
अब कोई भय नहीं
असमंजस नहीं।
दीपमाला लगी तैयार है
आरती का थाल सज चुका
है बडी धूमधाम अब
तुम्हारे प्रतीक्षित आगमन की।
अब तो
तुम्हारी अजन्मी सुन्दरता ही
हमारी आकांक्षाओं के प्यालों में
भरी है छलाछल;
तुम्हारी अपरिचित पावनता
बंदनवारो-सी बधी है हमारे द्वार-द्वार;
तुम्हारी अपरिमित उदारता की
लगी है गली-गली हाट जगमगाती हुई।

विश्वास करो
हमने सारा विवेक
कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य का ज्ञान
नई लाल मिट्टी-सा
तुम्हारे पथ में बिछाया है,
रंगबिरंगी झण्डियाँ लटकाने को
सपने ऐंठ कर रस्सियाँ बट ली हैं,

करुणा के घटों को बंद कर
हमने उन पर
नारियल ढक दिये हैं,
तुम्हारे मार्ग मे
मंगल चिन्हो के रूप मे रखने के लिए।

हमने पहचान लिया है
आस्थाएँ तुच्छ है,
इसीलिए हमने अपने ही पैरो से
उनकी छायाओ के वक्षस्थल
कुचल कर
अपने अदम्य उत्साह के आघात
उस पर अंकित कर दिये हैं........

अब और कोई कमी नही
विश्वास करो
और कोई संशय नही,
कोई डर नही
किसी दुविधा का, द्वन्द्व का।

आओ
हम आज अपने अस्तित्व को मिटाकर
सर्वथा विसर्जित कर
तुम्हारे ही एकांत स्वागत में
पूरी तरह प्रस्तुत हैं
तत्पर है। ●

मध्याह्न • बालकृष्ण राव

आँखें ज्योंही खुली, पड़ गयी
अनायास ही दृष्टि, गड़ गयी
पूर्व क्षितिज से कढते, प्रतिपल बढ़ते
ज्योतिर्विंदु पर।

भुला न पाऊँगा वह भोर,
खिंचा जा रहा था मन बेबस
प्रभामयी प्राची की ओर—
रुक न सका मैं,
चला अनुसरण करता मन का
पकड़े एक सुनहली डोर।

चलना सहज धर्म था उस पल
प्राणवान का,
तनकर सीधे खड़े वृक्ष भी
दीख रहे थे
गड़े हुए से—
स्थावरता की आत्मग्लानि में।

रुका न पलभर,
चलता रहा अथक, अविराम—
अनजाने ही भाग रहा था
अपनी अनुगामिनि छाया से।

आगे सीधी, सुगम राह थी,
प्रतिपल बढती हुई चाह थी
अनदेखे को, अनजाने को अपनाने की
कुछ खोकर भी कुछ पाने की,
जो अपने में समा न पाया
उसमें स्वयं समा जाने की।

चलता रहा प्रकाशित पथ पर
ज्योति-स्रोत को लक्ष्य मान कर—
कानों मे थी गूँज रही जीवंत रागिनी
गति की,
अविरत गति की,
मुखर हो उठी प्रतिक्रिया में मन की,
मति की
मैं मंत्रमुग्ध-सा चलता रहा।

बढता गया मार्ग पर मैं निर्भय, निःशंक,
अपनी ही गतिमयता का आतंक
—और आकर्षण
मेरा सम्बल था।

पल-पल बढता जाता था दिन का प्रकाश,
पग-पग घटती जाती थी
अनुगामिनि स्मृतियो की छाया—
ज्यो-ज्यों आगे बढता रहा
निकटतम पाता रहा सिमटती छाया अपनी।

अब यह दिन का मध्यबिंदु है,
खड़ा हुआ हूं मै प्रकाश का छत्र तानकर—
छाया मेरी,
वह अवशिष्ट अंश मेरी अनुभूत निशा का,
कहाँ गयी वह ?
—कहीं खो गयी है प्रकाश की
एक किरण बन,
या विलीन हो गयी अंधेरे अवचेतन में ?

गड़ा हुआ स्मृतियों के तम में,
मैं प्रकाश का छत्र तानकर खडा हुआ हूँ ! •

स्फटिक प्रश्न • भवानीप्रसाद मिश्र

होश मुश्किल चीज़ है;
वह इन दिनों
मुश्किल से टिकता है।
मैं अभी बेहोश हूँ !
दिख रहे हैं गो
मुझे उड़ते हुए घन,
जो बरसना भूल कर
आषाढ़-भर उड़ते रहे हैं।

होश शायद खो दिया है
इन घनों ने;
क्योंकि घन आषाढ के
बा-होश हों तो
बरसते हैं;
और हिन्दुस्तान के
वन, बाग—सब कुछ
सरसते हैं।

घन नही बरसें
न सरसे बाग, वन !
हाय रे, बेहोश जग,
बेहोश घन !

होश, मुश्किल चीज है
बे-होशियों के बीच से
कैसे खिंचेगा;
और हिन्दुस्तान का
वन, बाग—सब कुछ
किस तरह फिर से सिंचेगा ?

किन्तु यह तो
प्रश्न भर है,
कोई यह मत मान लेना
मुझे उत्तर चाहिए
इस प्रश्न का !
मुझे उत्तर की नही उम्मीद है।
पूछ भर लेता हूँ मैं तो
हवा से, जैसे कि मन मे
जब कभी कुछ प्रश्न उठते हैं।

सुबह होती है
धुआँ उठता है घर के छप्परों से

गाँव में;
और जुम्बिश एक
घर से निकल पड़ने के लिए
आकर समा जाता है
मेरे पाँव मे!
पाँव मेरे जिस दिशा में
गति लहरते हैं
वह दिशा उत्तर नहीं
होती कभी
वह प्रश्न होती है!
प्रश्न की आदत मुझे
हो गई है
तृषा उत्तर की
अभी खो गई है!

ज़िन्दगी मेरी समूची
प्रश्न है।
प्रश्न मेरा तीव्रतर
होता चले
बेहोशियो के बीच भी
यह लालसा है।
लोग सुनकर प्रश्न मेरा
कहे यह क्या काल-सा है?
प्रश्न मेरे प्रश्न भर
पैदा करे!—
अभी उत्तर की नहीं है
लालसा।
होश मुश्किल चीज़ है;
प्रश्न होंगे चार-सू से जब,
निरन्तर,
हवा पूछेगी, पवन पूछेगा,
पूछेंगे उजड़ते खेत,

जब नदी पूछेगी
पूछेगी पहाड़ी
और पूछेगी उठाकर सिर
गगन तक
निपट फैली रेत।
तब समेटेंगे बिखरते होश
ये आषाढ घन,
और तब सरसेंगे
मेरे देश के
उजड़े हुए हर बाग, वन !

प्रश्न चारों ओर से आओ,
उठो बेचैन मेरे प्रश्न
चारो ओर से गाओ
कि यह क्या हो रहा है ?
उठो, जैसे कि कोई चाँद उठता है गगन मे;
उठो, जैसे कि कोई गान उठता है पवन मे;
उठो, जैसे कोई बीमार उठता है;
उठो, जैसे लहर कर ज्वार उठता है;
उठो, जैसे कुतूहल की घड़ी मे
घूंघट उठे हो;
उठो, जैसे आग लगने पर
लबालब घट उठे हो;
उठो, जैसे पट उठे हो
देखकर पानी;
उठो, जैसे हो उठी
भयभीत की वाणी;
उठो, जैसे उठे प्रभु का हाथ !

उठो, मेरे प्रश्न सुख के साथ !
चाँद में
बीमार में
घूँघट मे
घट में
आग मे
पानी में

ज्वाला में
लपट में
उठो मेरे प्रश्न,
चारों ओर से
उठो हे, उठकर पुकारो ज़ोर से
क्या हो रहा है ?
कौन है जो सो रहा है
नीद सुख की,
आग जब घर मे लगी है ?
कौन है जो बुझाने बढ़ता
नही है ?
कौन है जो और
भड़काना जरूरी समझता है
आग को ?
कौन है जो एक
सुविधा समझता है
जल रहे इस बाग को ?
कौन है, जो सोचता है
रोटियाँ सेकेगे
भड़के आग;
कौन है, वह कौन है
वह कौन है
अय, प्रश्न मेरे जाग।

जागो प्रश्न मेरे,
देश को घेरे रहो बनकर
कवच।
तुम फिको जैसे कि जैसे
फिक रहा हो स्फटिक-पत्थर-स्वच्छ
गोफन से निकलकर
टूट जायें मुंह,
गलत उत्तर न निकले ! ●

गीत

माखनलाल चतुर्वेदी

यह समर्पण, यह तुम्हारे नेह का वरदान
भूमि से विद्रोह कर गदरा उठे तरुराज
चाँद ने रस, वायु ने आनन्द श्री का राज
सूर्य ने दे रूप सुन्दर का सजाया साज
फूल आये, फल उठे, उन्मत्त होकर आज।
देख इनका रूप रस शरमा गया अभिमान
यह समर्पण, यह तुम्हारे नेह का वरदान ।।
फूल ने गिर, मातृ-भू पर कर दिया अभिषेक
और फल ने प्राण देकर निज निभाई टेक
नम्रता लख रूप से सकुचा अनन्त विवेक
बोल उट्ठा, तुम धरा के गर्व एक, अनेक।
आज मैं विद्रोह का समझी सखे प्रतिमान ।।
यह समर्पण, यह तुम्हारे नेह का वरदान ।।
यह उठे से शीश, यह कलियों भरा अभिसार
मलय की गुस्ताखियाँ, तिस पर धरा का प्यार
फूल का गिरना, फलों का स्वाद, रस का रूप
यह चरम विद्रोह, यह बलि-पंथियों का भूप
इस प्रणय-पथ में प्रलय-धुन गा उठे बलिदान ।।
यह समर्पण, यह तुम्हारे नेह का वरदान ।। ●

शहर : एक जादूघर •

रामदरश मिश्र

सड़को पर सफेद सफेद कफन उतराये हैं
जिनके नीचे
चलती फिरती लाशे गाँधी का नाम जप रही हैं
और हर नाम के साथ
गले के नीचे उतार लेती हैं एक टुकड़ा
जीवित आदमी का
अंधेरे मे घृणा से थूक देती है
सत्य की प्रतिमाओ पर

यह लोहे का एक विशाल पुतला है
आश्रम के मुख-द्वार पर खडा किया गया
इसके ढीले सफेद वस्त्र के नीचे
छाती मे एक छेद है
वहाँ कुंजी ऐंठ देने से
यह हाथ उठा उठा कर
तरह तरह की आश्रमी बोलियाँ बोलने लगता है
और रात को इसकी खोखली पीठ में
आश्रम के रद्दी कागज़, बोतल के टुकड़े
भर कर ताला मार दिया जाता है

खण्डहर मे बैठा यह मरा हुआ पहरेदार
रखवाली कर रहा है खण्डित मूर्तियों की
इसके ओठो पर निराला का नाम
रह रह कर फड़क उठता है
और एकाएक उठ कर
हाथ में पडी काठ की तलवार माँजने लगता है
जब कोई निराला निकलता है
नये विन्यास में।

बड़ी-बड़ी दीवारों के ललाट पर
रंगीन पोस्टरों के चेहरे मुस्करा रहे हैं
फटे हुए चेहरों पर चेहरे और चेहरे
इन हँसते हुए चेहरों पर
आँखे धँसाये राहें गुज़रती हैं
और रुक जाती है
दीवारो के पीछे से एक अलसेशियन कुत्ता
गुर्रा रहा है।

ये मीनारों-सी उठी उठी चोटियाँ........
हवा का रुख चाहे किसी ओर हो
इनसे निकलता हुआ धुआँ
झोंपड़ियों की ओर ही जाता है
और प्रकाश बड़े बड़े मकानों की ओर।
चाँदनी से लिपटा हुआ ताल........
नीले जल में थरथराती हुई युग्म परछाइयाँ
आतुर हैं मिलने को
हवा मे तैरती हुई खुशबूओं की अनजान पुकारें
सबका नाम लेकर बुला रही हैं
तभी पास के चिड़ियाघर मे बन्दी
जंगली जानवर दहाड़ने लगते हैं
और रोने लगती है जल की अतल-
गहराई मे सैंकड़ों आवाज़ें। •

यात्रा के बाद • शम्भुनाथसिंह

रोज़ रोज़ वे यात्राएँ नही होती
जिनसे लौटने के बाद
शक्लें बदल जाती हैं,
गर्दन बहुत लम्बी हो जाती है
इतनी लम्बी, कि सिर
आकाश में कहीं खो जाता है

और धरती
कवन्ध के पाँवो मे
बँधी रह जाती है ।
फिर
तेजी से घूमते दिक्चक्र मे
रूई जैसे धुने हुए रंग
हर कही बिखर जाते है,
शरीर फूलो की गंध मे घुल जाता है।
और धरती पाँवो से छूट जाती है।
रूपो-आकृतियो से हीन
काल के उस अनन्त विस्तार मे
गन्ध के रन्ध्रो से जो स्वर उठते है
वे अभोग्य होते है
सूर्य उन्हे कमल-नाल की तरह
खण्ड-खण्ड कर देता है
जिनके बीच के तार अदृश्य होते हैं।
अथाह जलराशि मे डूबी
धरती की तरह
अंधेरे मे सब ओर से बन्द आँखे
उन खण्डित स्वरो को देखती तो है,
उन्हे सुन नही सकती,
और जो उन्हे सुनता है
या सुन सकता है
उसे अंधेरे की ये आँखे
देख नही पाती। ●

सारनाथ की एक शाम

(कवि त्रिलोचन के लिए)

इस किनारे तो
ये आकाश के सरगम
खनिज रंग हैं
बहुमूल्य अतीत है
या शायद भविष्य

तू किस
गहरे सागर के नीचे
के गहरे सागर
के नीचे का
गहरा सागर होकर
भिच गया है
अथाह शिला से केवल
अनिद्य अवर्ण्य मछलियो के विद्युत
तुझे खनते हैं
अपने सुख के लिए
(सुख तो व्यंग्य मे ही है
और कहाँ
युग दर्शन
मित्र
छल का अपना ही
छन्द है
सर्वोपरि मधुर मुक्त
और कितना एब्स्ट्रैक्ट
जैसे
भला कौन अधिक
क्योकि व्यभिचार ही आधुनिकतम
काव्य कला है आज

श्रौर   श्रालोचना के डाक्टर
उमे श्रनादि भी कहते हैं)
शब्द का परिष्कार
स्वय दिशा है
वही मेरी श्रात्मा हो
श्राधी दूर तक
तब भी
तू बहुत दूर है बहुत श्रागे
त्रिलोचन

एक कोलाहल जो कोपलो मे भरा हुश्रा है
सुनकर
तू विक्षुब्ध हो-हो उठता
क्या उपनिषदो का शोर
उसे दबा पाता

वरुणा के किनारे एक चक्रस्तूप है
शायद वही विश्व का केन्द्र हो
वही कही
सुना तो है
श्राधुनिकता
डूब रही है
किसी कोपल के
श्रोठ पे उभरी
श्रोस के
महासागर मे
तो फिर क्षोभ क्यो

तूने शताब्दियो
सॉनेट से मुक्तछन्द खनकर
संस्कृत वृत्तो में उन्हे बाँधा सहज ही लगभग
जैसे य' श्राकाश बँधा हुश्रा है श्रपने
सरगम के श्रट्टहास मे

ओ शक्ति के साधक सम्यक अर्थ के साधक
तू धरती को दोनों ओर से
थामे हुए और
आँख मीचे हुए ऐसे ही सूँघ रहा है उसे
जाने कब से

तुझे केवल मैं जानता हूँ
क्योंकि
मै कही
उसी धरती मे लोट रहा हूँ उसकी
ऋतुओं की पलको सा बिछा हुआ मै
उसकी ऊष्मा मे
सुलग रहा हूँ अपनी गहरी
शान्ति के लिए

एक वासंती सोम झलक जो मेरे
अंक से छीन कर चाँद लुका लेता है
खींच ले जाती है प्राण मेरा
जैसे कोई तीर
उस पर भी है तेरी दृष्टि

आन्तरिक एकान्त
वरुणा के किनारे की वह पद्म
मौन ऊष्मा। ●

● शमशेर बहादुरसिंह

बुखार में कविता •

श्रीकान्त वर्मा

मेरे जीवन मे ऐसा वक्त आ गया है जब
खोने को
कुछ भी नही है
मेरे पास—
दिन, दोस्ती, रवैया, राजनीति
गपशप, घास
और स्त्री, हालाँकि वह
बैठी हुई है मेरे पास
कई साल से।
क्षमाप्रार्थी हूँ मै काल से
मै जिसके सामने निहत्था हूँ
अपंग हूँ—
मुझे न किसी ने
प्रस्तावित किया है
न पेश।
मंच पर खड़े होकर
कुछ बेवकूफ चीख रहे हैं
कवि से आशा करता है
सारा देश।

मूर्खो ! देश को खोकर ही
मैंने प्राप्त की थी यह कविता
जो किसी की भी
हो सकती है
जिसके जीवन मे वह वक्त आ गया हो
जब कुछ भी नही हो
उसके पास
खोने को;
जो न उम्मीद करता हो

न अपने से छल,
जो न करता हो प्रश्न
न ढूँढता हो हल ।
हल ढूँढने का काम कवियों ने ऊब कर
सौंप दिया है
गणितज्ञ पर
और उसने राजनीति पर ।

कहाँ है तुम्हारा घर ? अपना देश खोकर
कई देश लाँघ
पहाड से उतरती हुई
चिडियों का झुंड
यह पूछता हुआ ऊपर ऊपर
गुजर जाता है
कहाँ है तुम्हारा घर ?
दफ्तर मे ? होटल मे ? समाचार पत्र मे ?
सिनेमा मे ? स्त्री के साथ
एक खाट मे ?
नावे
कई यात्रियो को उतारकर
वेश्याओ की तरह थकी पडी है
धार में ।

मुझे दुख नहीं मैं किसी का नहीं हुआ ।
दुख है कि मैने सारा समय
हरेक का होने की
कोशिश की : प्रेम किया
प्रेम करते हुए स्त्री के कहने पर
भविष्य की खोज की
और एक दिन
सब कुछ पा लेने की सरहद पर
दिखा एक द्वार : एक

ड्राइंग रूम।

भविष्य वर्तमान के लाउंज की तरह
कहीं जाकर
खुल जाता है।
रुको,
कोई आता है।
सुनाई पडती है किसी के
पैरों की चाप;
कोई मेरे जूते का माप
लेने आ रहा है।
मेरे तलुए घिस गये हैं
और फीतों की चाबुक
हिला-हिला
मैंने आसपास की
भीड को
खदेड दिया है
भगा दिया है।
औरों के साथ
दगा करती है
स्त्री,
मेरे साथ मैंने दगा किया है।
पछतावा नहीं।
यह एक कानून था जिसमे से होकर
मुझे आना था।
असल में यह एक बहाना था
एक दिन
अयोध्या से
जाने का।
मैं अपने कारखाने का
एक मजदूर भी
हो सकता था।

मैं अपना अफ़सोस
ढो सकता था
बाजार मे लाने को।
बेचैन हो सकता था
कविता सुनाने को,
फिर से एक बार इसे
और उसे और उसे
पाने को।
लेकिन एक बार उड जाने के बाद इच्छाएँ
लौट कर नही आती
किसी और जगह पर
घांसले बनाती है।
विधवाएँ बुड़बुडाती हैं
रँडापे पर
तरस खाती है
बुढापे पर।
नौजवान स्त्रियाँ
गली मे
ताक-झाँक करती हैं।
चेचक और हैज़े से
मरती हैं बस्तियाँ
कैन्सर से हस्तियाँ
वकील रक्तचाप से;
कोई नही मरता
अपने पाप से।
धुआँ उठ रहा है कई माह से।
दिन चला जाता है
मार कर छलांग
एक खरगोश-सा।
बन्द होने वाली दूकानो के
दिल मे रह जाता है कुछ-कुछ
अफसोस-सा। ●

अन्य भारतीय कविताएँ

•

बंगला, उर्दू,
मराठी, गुजराती,
पंजाबी, अंग्रेजी,
मलयालम, तमिल,
कन्नड़, तेलुगू,
उड़िया, राजस्थानी कविताएँ

पहली कविता

विनय मजुमदार

अंधेरे मे खाने दो —सभी की यही इच्छा है
पता क्या है, फल है, या मिठाई, या शराब—
वयस्का, मुग्धा, या प्रौढा, सिद्ध-यौवना
किन्तु, हाय, मेरी रसना
प्रणय-प्रसग के पहले ही हो गयी रूप,
गन्ध, रस से मूर्च्छित जड़। कभी मुझे लगा था,
कि हीरे की चकमती हुई आँखो से
स्वयं को प्रतिबिम्बित देख रहा हूँ—अब,
जागृत वासना की स्थिति में भी
नही देख पाता हूँ विकसे हुए, कसे हुए फूल।
क्यों देखूँ ? मानसी, बताओ, क्यो ?
लगता है, चाँदनी नही है, अंधेरा मुँह बाये है,
और, चारों ओर काली दरारे खिलखिला रही हैं,
और, मे एक अबोध शिशु,
किसी वृद्धा की गोद में छिपा, सुन रहा हूँ
प्रेतों की कहानियाँ। •

गुप्तचर

शक्ति चट्टोपाध्याय

जैसे खिड़कियाँ टूट जायेगी, इतनी तेजी से
मुझे अपने आलिंगन में भरकर
गर्म सलाखो से दागकर मेरी छाती, बार-बार
चला गया समय। और, अब प्रति क्षण
बंधे हुए पागल घोड़े की तरह पदचाप
हर खिडकी के नीचे पत्थर पर बजती रहती है।

गुप्तचर, अपना परिचय दो,
मौन तोडो, किसी एक फूल का नाम कह जाओ,
कह जाओ, नहीं तो, देखते हो यह छुरी
तुम्हारी कीर्ति के गुब्बारे मे छेद कर डालूँगा।

मैने उसे चूम कर देखा है। नही है यश,
अर्थ नही, सम्मान भी नही, केवल
गर्म सलाखों का चिरस्थायी आलिंगन—
और, थकी हुई, उदास वेश्याओ के प्रति
एकान्त मोह—मुझमे।
सोचता था, बीमार सिर्फ देह है, मन नही।
सोचता था, इच्छाओ का मन्दिर
और जंगल यही है, मन नही।
जो भी हो, इसी खिडकी के पास खडा रह जाऊंगा,
सारा दिन, सारी रात यो ही बिताऊँगा। ●

नारी-नगरी

सुनील गंगोपाध्याय

उसे बुलाओ, और कहो, इतनी गहरी रात के दाब
नही दिखायें अपनी खुली छातियाँ, नीली रोशनी
और सड़के-गलियाँ अब तक क्यो जगी हैं?
यह शहर सोना नही जानता है, फिर,
तबले और पायलो के पास पड़ा रेंगता क्यो है?
यह कलकत्ता-शहर!
मर्द के साथ सोने और खाना पकाने के सिवा
सारे काम औरतें जानती है, मगर,
सारे काम गलत जानती है, इस शहर के ड्रेनेज
और हाईड्रेण्ट की तरह—दूध उनका
छातियों में जम जाता है, अंधेरे मे,
अकेले में इस मैदान के पास आते ही डर जाती है।

चुप हो जाती है, मरी हुई बिल्ली ।
यह शहर सारे काम जानता है, वेश्याओं की तरह
कुत्सित नालियो पर गुलाब के पौधे जमाना—
भी एक बडा काम है ।
ठण्डी और नंगी देह पर अनगिनत मर्द सोये हैं,
राम-कृष्ण का नाम जपती रहो,
उसी को बुलाओ, और पूछो, और कब तक
इसी तरह सोये रहना होगा, इसी तरह—
नीमतल्ले में, असेम्बली में, जासूसी किताबो मे,
फटी हुई जेब में कब तक जेबकतरो का हाथ
जाता रहेगा ? ●

अनुभव

मानस रायचौधुरी

तुम्हारा शरीर अकलुष ही रह गया । सिर्फ मेरी ये
उंगलियाँ, झरे हुए पत्तो की तरह सूख गयी,
और कुछ नहीं हो सका गर्म अंधेरे मे । और कुछ
नहीं हो सका । बुरा नहीं हुआ,
बातचीत की बेबसी, खिड़कियों में डूब गयी रोशनी,
सडको पर हजार-हजार पाँवो की धूल,
क्यों तुम्हारी बाँहे सवाल बन गयी थीं ? क्यो ?
दूसरों की जीभ का स्वाद हम नही बनें,
नहीं बनें दूसरों की बातचीत ।
बुरा नहीं हुआ, अगर वह कुछ नही हुआ,
जो उंगलियाँ नहीं होती हैं । ●

कल

रफ़त सरोश

कल क्या होगा ?
दुनिया एटम बम का लुकमा बन जाएगी
याकि समन्दर एटम बम के जहर को
अपने जाम मे भरकर पी जाएँगे
कल क्या होगा ?
यह तुम सोचो
तुम बेफिक्रे
फ़ुर्सत में हो,
मैं तो एक ऐसा पंछी हूँ
जिसकी किस्मत
गुलशन गुलशन
सहरा सहरा
उडना है और दाने चुगना
आज की खातिर ! ●

कल, तुम्हारे खत,
लिप्यन्तरण : रईस अजमेरी

तुम्हारे ख़त

निदा फ़ाज़ली

वह खत जो तुमने लिखे थे कभी कभी मुझको
मैं आज सोच रहा हूँ, उन्हे जला डालूँ !

बुझा बुझा-सा चला आ रहा हूँ ऑफ़िस से
दिमाग गर्म है जलते हुए तवे की तरह
नईफ हाथों से फिर फ़ाइलों के ग़ारों में
उदास दिन का हिमाला गिरा के आया हूँ
झुलसती आग-सा सूरज चबा के आया हूँ !

बदन निढाल है उस नौजवाँ सिपाही-सा
कई महीनों से औरत मिली न हो जिसको
गुदाज़ जिस्म की जन्नत मिली न हो जिसको

वह गीतकार 'निदा फाज़ली' जिसे तुमने
कभी नशिस्तों मे देखा था गुनगुनाते हुए
खयालो—फ़िक्र की कौसो कुज्ह[1] खिलाते हुए
हवा-ए-वक्त से एक बुलबुला-सा फूट गया
ग़मे हयात के पत्थर पे काँच टूट गया

थके बदन को फ़कत चारपाई भाती है
बजाय याद के अब मुझको नींद आती है। ●

इल्तजा

शहरयार

कहाँ हो, कहाँ हो
नई सुबह की मिहरबां नर्म किरनो
मेरा जिस्म मुझसे बगावत पे आमादा है
कापती है मेरी रूह
आओ बचाओ
मुझे शब के जिन्दाँ से बाहर निकालो
मैं दिन के समुन्दर की गहराइयाँ नापना चाहता हूँ। ●

नींद

जावेद कमाल

नींद आँखों में है कम-कम मुझे आवाज़ न दो।
जाग जायेगा कोई ग़म मुझे आवाज़ न दो।

नीम खामोश है साजे रगे जां का हर तार
तार हो जायेंगे बरहम मुझे आवाज न दो।

बाद मुद्दत के ज़रा दिल को करार आया है।
जाने क्या दिल का हो आलम मुझे आवाज न दो।

यूँ भी रफ्तारे दिले ज़ार है मद्धम मद्धम
और हो जायेगी मद्धम मुझे आवाज़ न दो। ●

---

१. इन्द्रधनुष २. रोज़ी ३. कल ४. सिपाही ५. अधूरे

ग़ज़ल

राही मासूम रज़ा

जिन्दगी के नाम पर मरना पड़ा
फिर भी यह सौदा बहुत सस्ता पड़ा ।

ग़ैर खुश हैं दोस्त भी मारे गये
हर निशाना आपका उलटा पड़ा ।

लोग यह समझे हम उनसे डर गये
हमको चुप रहना बहुत महँगा पड़ा ।

तिशनगी[1] बढती गई, बढती गई
राह मे शबनम मिली दरिया पड़ा ।

धूप मे रहकर भी गाये जिसके गीत
हम पे कब उस जुल्फ़ का साया पड़ा ।

क्या सुनाये साहिल-ए-दरिया-ए[2] शौक़
रास्ते मे प्यास का सहरा[3] पड़ा । ●

इल्तज़ा, नींद, गजल
(लिप्यन्तरण : कुंवरपालसिंह)

---

१. प्यास २. प्यार का सागर ३. जंगल

लघ्वारण्यकोपनिषद्

प्रभाकर माचवे की तीन कविताएँ

कोरे कागज
वाणी गद्गद,
चित्त बेखबर
सत्य वध। ●

परोपजीवी

खायें कैलिफोर्निया का मका
पियें ताशकद की वोद्का
घर की इस रोटी को
दुतकारा, फेंका।

ग्रात्मप्रकाश बरजे
ग्रांखों पर स्वयं ही बांधे
इस्पाती शीशा
ग्रौर लड़खडाते दौडें
मृगजल के पीछे। ●

दुःख का हिम

निष्पर्ण
नितान्त नंगे
पेडों के पिञ्जर
सहस्रो शाखा-भुजाएँ
टेरती ग्राकाश को,
हिम को बरसने दे—
प्रस्तुत है हम सब
झेलेगे, सह लेगे।

लेकिन यह ग्रंकुर
बोलो तो करें क्या ?
वह फ़कत खडा है
पत्तो का छप्पर
उसने न देखा है।
ग्रात्मा के ग्रंकुर को
दुख का हिम याद नही।

ग्रभंग*

बा० भ० बोरकर

राह किनारे बैठा कोई सूरदास गाता है
दिशा-दिशा में, जल मे, फैला भगवा रंग
प्रकाश की गति से पल भर में
ग्रासमान—सा हो जाता है उसका सरल ग्रभंग।

भीग रहा है एकतारा, ग्रांसू की झर लागी
जहाँ का तहाँ जल नदिया का जमकर रह जाता है

* छन्द विशेष, ग्रविच्छिन्न।

जल्दी-जल्दी जाने वाला राहगीर वह कोई
बीच राह मे बेकल होकर, खोकर रुक जाता है।
जान भिखारी, पात्र दया का, छोटा सिक्का
डाल दिया है उस पर दया दिखाकर
और कान पर ढक्कन बाँधे, भाग रहा वह आगे
गायन को मन मे धारे बिन, अभंग को दुतकारे। ●

—अनु: अनिलकुमार

किसी एक बरसात में

शिरीष पै

●

किसी एक बरसात में
लिखे गये ये अनगिनत प्रेम पत्र,
प्रणय बर्षा से भीगे हुए
ये अनंत शब्द,
कभी समाप्त न होने वाले ये आश्वासन
और टूटते हुए मन को
दी गई सान्त्वनाएं,
पानी मे भरपूर नहाई हुई
यह विरह की लम्बी रात,
और यह परायापन,
आकाश मे फैले हुए
काले बादलो जैसा,
भीगे अंधियारे मे एक दूसरे को
टेरने वाली दर्द भरी आवाजें
कण कण भीगी हुई माटी की तरह
थके हुए अंग सारे,
सर्द हवा की तरह बहकर आती हुई
बेचैन कर देने वाली याद,
इस अकेलेपन मे
मनः प्राण में भर जाने वाली
अभिसार क्षणो की वह सुगंध,
और
धीमे धीमे झरती हुई
आसक्ति की यह
तेज धार। ●

देर से आई बरसात

आ० रा० देशपाण्डे अनिल

●

देर से आई हुई बरसात को
हथेलियो पर झेलें,
पलको पर हौले सहेजें
माथे के पसीने में मिलाएं
सिर में सींचें, और उसकी आर्द्रता
पीठ पर धीरे धीरे गलने दें।
सूखे पड़े हुए ओठ खोलकर
उसे ऊपर ही ऊपर, चूमें, पी लें।
देर से आई हुई बरसात को
उपालम्भ न दें और ढूंढें उसके दोष
मसलन उसका बहक जाना, झूठे वादे करना,
बहाने बनाना, नियत समय पर चूक जाना
और न ही बतायें उसे अपनी शिकायतें,
जैसे राह देखना, अधीर हो उठना,
मन मे भाँति भाँति की शंका-कुशंकाएं करना,
घबराना, खुद से ही बुदबुदाना
उसे तो
क्षितिज की बाँहे पसार कर
दुलार प्यार से, छाती से लिपटाएं
और रंगीन पट बिछाकर,
उसके साथ,
गोटियों का मजेदार खेल खेलें। ●

अनु: दिनकर सोनवलकर

यहाँ भी

थोसफ मेकवान

●

अंधकार का मुलायम कम्बल ओढे
सोया यह श्रान्त पंथ
या कि कितने ही पदचापो की
कथा लिखा कोई ग्रंथ।
दोनो ओर वृक्षो की यह माल
मानों पत्तों की मर्मर के रूप में
कोई आखर बाँच रही है।

यहाँ
बीच मे किसी बैताल-सा
वाहनों के शोर को श्वास में समोना
खड़ा पैट्रोल पम्प ?
नीलरंगी-काँच की दीवार पर
सो रहा प्रकाश-
पास के पोस्टर में तेजी से दौड़ रही है कार।
'Happy Motoring'

अन्दर ध्यान देता हूं-
पंखा घूम रहा है—उसे जरा भी चैन नही
कैलेण्डर में
तारीख के पन्नों को
हल्की सी सिहरन
मैं हष्टि से अनुभवता हूँ
यह हल्की सी सिहरन प्रतिध्वनित होती है
यहाँ —भी—शहर मे। ●

अश्वत्थामा

अब्दुल करीम शेख

●

स्टेज के पिछवाड़े
यहाँ ग्रीनरूम मे मै मात्र मित्रों से मिलता हूँ।
तुम्हारा श्राद्ध करने निकला मैं—
मृत्यु—
मुझे उसकी अत्यधिक आवश्यकता है
लाओ।
मृत्यु को चुराने
मैं रात-दिन नकाब ओढ़े भटकता हूँ
फिर भी वह कहीं मिलती नहीं।
मित्रो से बिछुड़ा खण्ड खण्ड
मैंने, मजे की ज़िन्दगी बिताई है
तुमसे, तुम्हारे घर पर मिलते-जुलते।
जब तुम शैया पर लेटो, तब
दो क्षण बादलों को धकिया कर
दहकते सूर्य की तीक्ष्ण सतह से छूटे
बाण की तरह
तुम्हें बेधते शब्द !
जब तुम शैया पर लेटो,
तब;
मुंदे द्वार मे जो करते हो;
मुंदे नेत्रों से जो देखते हो;
मुंदे ओठों से जो बोलते हो,
वह सब समझ चुका मैं
खेल समाप्त होते ही
ग्रीन रूम में जाकर नकाब उतार देता हूँ।
अपनी दहकती आँखो से मैं आईना
निरखता हूँ
और अमावस की रात में;
बादलो को चोली उतार कर

जैसे नग्न तारे चमकते हैं
वैसे ही शब्द मुख से बाहर आते है
और शब्दो का कवच पहन कर
किसी बिल मे जा घुसते है ......

मानो मैं क्षण प्रति क्षण
शब्दो में खोल उतारता हूं।
अंधे कानो जो सुनते हो,
बंद आँखो जो देखते हो

मृत्यु—
यहाँ उसके लिए पर्याप्त छत है।
विषैले विटामिनो से
अंकुरित कोमल बीज

लाओ,
मुझे उनकी जरूरत है,
यहाँ
इस ग्रीनरूप मे मैं मात्र मृत्यु से भेंटता हूँ। ●

असहाय कवि

हेमन्त देसाई

●

कविता की लीलामयी वाणी मे
और हो तो,
नीलपर्ण की हिल्लोलमयी लय में
अभिव्यक्त होने को
कितनी ही अनकही बातें
बंद कुसुम मे बुदबुदाती गंध सी
मेरे मन मे ज्वार भर रही हैं।

श्मशान में
खोपडी के इर्द-गिर्द भटकते
कुत्तो की लालसा को,
गर्भवती के हौले हौले पड़ते कदमों की
लुकी-छिपी पीड़ा को,
आत्मघात करने जा रहे पीड़ित व्यक्ति के
मन मे चल रहे कातिल संघर्षों को,
अभिव्यक्ति दे सकू तो कैसा ?
आयुष्य की धार पर बैठे
वृद्ध की निस्तेज आँखों में चमकते
शैशव के स्वप्न,
सपेरे की टोकरी में विवश बन्द
विषदन्त और रोष विहीन
सर्प-सी जवान मन की लगन
बाललीला करते कृष्ण की
बेढंगी आवृति की तरह
हड़बडाये शिशुओं के कण्ठस्थ होने को
बैचेन हैं।

ऐसे कितने ही नये नये
कविता-पदार्थ
सुनिबद्ध होने को
मुझे रात-दिन सताते हैं।

और फिर भी
मेरे घर की दीवार पर
सिर पटक पटक कर क्षत-विक्षत होती
विदाप्राय संध्या की भोली किरणो की
व्यथा को मैं अनसुनी कर देता हूँ
तथाकथित मंगल-प्रभातो की सुबकियाँ
सुनकर चुपचाप बैठा रहता हूँ।
झर रहे फूल को झेलने मैं जाता नहीं—
झेल कर करूँ क्या ?

सम्भव है, इस सबको अभिव्यक्ति देकर
मैं कृतकृत्य हो जाऊँ
किन्तु यहाँ तो ऐसा

बहुत कुछ होता रहता है
होता रहा है और अभी होगा—
न जाने कब तक ?
यूं तो यहाँ दुख है, मृत्यु है
और मृत्यु तुल्य जीवन है,
किन्तु इस सबका भार
पृथ्वी की तरह धारण कर पाने को
शक्ति कहाँ है ?
और सभी कुछ कह पाने योग्य
ध्वनि भी कहाँ है ?
यहाँ वह सत्य (अन्याय की डोर से जकड़ा
मुख में दम्भ का डूचा भरे मूक बना)
मस्तक-विहीन किसी धड की आत्मा-सा
रात-दिन मुक्ति के लिए तडपता है।
इसके लिए मै कुछ कर नही सकता ?
कु''''छ नही कर सकता।
अन्ततः तो मैं भी मोर की तरह
नाचते हुए
अपने इन भद्दे पैरो को देख देख कर
आँसू ढुलकाता हूँ
शब्द '' शब्द''''शब्द
व्यर्थ मेरे शब्द''' व्यर्थ मेरी वाणी
यदि मेरे आँसू कभी शब्द बन उड जाए'' ●

धब्बा

दिलीप ज़वेरी

●

पोली दीवारों से रिस कर
वर्षा के पानी ने दीवारों पर धब्बे
बना दिये हैं।
मैं तुम्हारी ओर देखता हूँ—
तुम्हारी भूरी आँखों से बिल्ली के नाखूनो जैसी
किरनें फूट रही थीं
तुम्हारी अंगुलियों के केवडे-से कँटीले
किनारों को देखते हुए,
तुम्हारे वक्ष के दो पत्थरों के स्थान पर
या तुम्हारे पेट मे—
जहाँ भविष्य मे कई डिम्ब कुलबुलाएँगे
काल की केंचुल से निकलते क्षण की
एक एक इल्ली जिसके मस्तिष्क को कुतर
कर पोला करेगी
और जिसकी दृष्टि की दीवारों को
वर्षा भिगोयेगी—
सभी कुछ मुझे धब्बों-सा दीखता है !
यहाँ शीशे मे अपने आपको देखता हूँ
वहाँ भी एक बड़ा धब्बा है।
और सूर्योदय से पूर्व ही रात होने
वाली है। ●

पंजाबी कवितायें

गंदा ख़याल

कृष्ण अशांत

●

कुछ दिनों से एक गन्दा ख़याल
खजैले कुत्ते-सा
मेरे विचारों की भट्टी में आकर
बैठ गया है।
सोचता हूँ—
ये पतिव्रत की प्रतीक मेरी पत्नी
चाँद जैसे बच्चों सहित
यदि किसी दिन अनायास मृत्यु की
गोद में सो जाय
तो,
वह लड़की मेरे जीवन में
फिर से आ जायेगी—शायद ! ●

निमंत्रण

तारासिंह

●

मुंडेर पर लटकता हुआ
गुलाब का फूल
मेरी पहुंच से दूर है !
यदि
न तोड़ा गया, ऋतु तो आयेगी
पर, इसका
रूप बुझा जाएगी ।
मैं क्यूं न जगा लूं
उम्र की रात,
वह चिराग
दिल की मुंडेर पर रख कर ! ●

होटल : एक मंजिल

सुखबीर

●

होटल में बैठा हूँ
चाय की चुस्कियों में
अनुभव कर रहा हूं उमस !
बेयरे : तल्ख आवाजों के बीच
उनींदे सोये हुए,
बेयरे : कसैली गंध, उकताहट !
कुछ एक मेजों पर चाय के कप हैं
और, कुनकुने पानी के गिलास
मेज़ों के इर्द-गिर्द
मैली चाय जैसे चेहरे
कुनकुने पानी जैसे आँखें
यह होटल :
सड़क के किनारे का एक पड़ाव,
भाग-दौड़ में खड़ा ।
भटकता हुआ कोई राही हो
यहाँ आता है,
तल्खी पीकर,
तल्खी बढ़ा कर
चला जाता है ।
कुछ आने वालों के लिए
यह होटल एक मंजिल है
कुछ चेहरे यहाँ रोज नज़र आते हैं
मेरे लिए
यह होटल एक लम्बा सफर है
जिसे मैं रोज तय करता हूं ! ●

युग्म

स्वर्ण

●

एक क्षण
जैसे अनायास थम गई हो
ब्रह्मांड की गति !
जैसे रुक गई हो समय की धड़क ।
तुम्हारे कपोलों पर
हमारे मिलन के ताज़े निशान,
मेरे अधरों पर तुम्हारे प्यार की लालिमा
साँसों की गुंथी हुई आवाज़
और. बाजुओं की कोमल जंजीर
सुगंध का रंग छितर कर, चारों तरफ फैल
गया है !
आकाश की सतरंगी आभा
एक पक्षी अपने कोमल परों को तोल रहा है
आह, ये क्षण—
समय के कोमल परों से
उतार कर बाँध लूं,
समय का पक्षी तो हाथ से निकल ही
जाएगा । ●

एक रङ्ग-चित्र

पी० लाल

●

आँखें दर्द मे, और एक ब्लाउज़ ।
एक मुस्कराहट राह पर आती हुई…
(लेकिन कैसे अल्फाज ! कह दिये गये
कैसे अल्फ़ाज !)
फिर भी मुहब्बत का एक दिन होता है,
अपना एक दिन था ।

बताओ, किस तरह देख पाएँ ये धुंधले लेंस
नहीं, साडी का सुर्ख, शोख रंग नही
—बीते बहारों की तरह सिकुड़ा हुआ,
सोया हुआ दर्द !
किस तरह देख पाएँ वे अल्फ़ाज, जो
तुमने कहे,
जो मैंने कहे ।

बेहतर है, कि यह असालतन कायम
है हमेशा,
कि स्थायी है वर्तमान मे बीता हुआ ।
महसूस करो, कि कैसे इसके रंग
पिछले अँधेरे को उजागर करते रहते हैं…
और, मुझे पता है (अगर तुम जानना चाहो)
कहता है अब भी मेरा प्यार
सिर्फ, वह एक दर्द ।

आँखें नही, रूह भी सही सुलगते होठ नहीं,
उरियाँ सीना नहीं, नहीं स्याह पुतलियाँ
सिर्फ वह एक दर्द ! ●

पशुपतिनाथ-टेम्पुल

पद्मनाथ शमशेर

●

भीख माँगना सबसे बेहतर गुनाह है,
सबसे खूबसूरत,
मैंने यह अपने आप सीख लिया ।
मन्दिर मे घड़ियाल बजें तो, निकर
सम्भाल कर दौडो,
टोपी सीधी कर लो, तिरछी कर लो
ओठो पर जीभ फेर लो—
वह सबसे आखिर में
तुम्हारे पास आयेगा ।
'मेरी बहन पागल हो गयी है' …'मेरा बाप
लन्दन के मिलिटरी कैम्प से खत नहीं
भेजता'…
'मेरी माँ अफीम… मेरी माँ……'
निकर सम्भाल कर खडे रहो, रुके रहो,
वह तुम्हारे पास आयेगा ! ●

मैनहटन-स्ट्रीट

बी० बी० पनिक्कर

●

मेरा कैमरा खो गया था, मेरे दोस्त की
स्कैच-बुक ।
फिर भी हम जलूस के साथ चल रहे थे
उस नाइट-क्लब तक ।
गोलियो के छूटने की आवाजें हुईं ।
भीड टूट गई :
पुलिस उठा ले गयी सड़क से
माचिस की बुझी तीलियाँ,
दो गोरी लड़कियाँ पेटीकोट उतार कर
नाचनें लगीं । मेरा कैमरा खो गया था,
मेरे दोस्त की स्कैच-बुक ! ●

रिफ्लेक्शन

सुनीता बनर्जी

●

पिघलती हुई काली आँखो की गहराई मे
अभिव्यक्ति। सुन्दरता,
जो अपने नाखूनों से खुरचती है दर्द !
ऐश्वर्य कितनी तेजी से भागता है
हवा पर, किसी पेड़ की लचीली डाल
पर नही,
कि फल मिलें।
पहचाने हुए को ही फिर से जानने की
बेकरार मुसीबत—
अनजान अब भी उतना ही अजनबी,
उतना ही दूर ! शरीर
धीरे-धीरे सर्द पड़ता हुआ, और दर्द मे
अभिव्यक्ति नही, केवल बीते हुए की
परछाइयाँ ! ●

४२ वीं कविता

अंजनी मोहन्ती

●

इस उम्र में, आदमी बूढा नही होता,
क्योंकि
अब भी कुछ चुने हुए क्षण
दीवार घडी के काँटो में मरे हुए
गिरगिट बनकर
चिपक जाते रहते है वक्त-बेवक्त !
आदमी इन क्षणो को फ्रेम मे बाँधता है,
क्योंकि
मरे हुए गिरगिट रंग नहीं बदलते,
कविता की उम्र बीत जाने के बाद भी नहीं !
वक्त के साथ, और आदमी अपने फ्रेम में
वक्त से अलग-अलग रुका रह जाता है। ●

परिवर्तन का एक चक्र

नारायण चिन्तामणि महाशब्दे

●

हे प्यार

क्या इस नये परिवेश का ही ऐसा है दबाव
कि हमे बहुत कुछ भूलना पड़ रहा है ?
बहुत सारी भूलों को करना पड़ रहा माफ ?
पहले तो कभी हमारे मन में नही
आए ऐसे खयाल ?

तो क्या वह दुनिया, जिसमें रहते थे हम,
कोई दूसरी दुनिया थी ?
जिसने ढक लिया था समूचे आकाश को ?
तब वासनाओ का अंत कितना सुखद
होता था

हमारे अ-रक्षित क्षणो पर
नही उठती थी कोई जासूसी आँख
और एक पल के लिए भी
नहीं होती थी अनुभूति अकेलेपन की
पर, अब तो लहरो से बिछुड़ा हुआ तट
हो हमारा आश्रयदाता है

जिस पर हम रेत के अपने मनचाहे
घरौंदे बनाते हैं

पता नही किस शक्ति ने हमें कर दिया
ऐसा तटस्थ

कि हमारे सपने भी ठिठुर कर जड़ हो गये ?
परिवर्तन का एक चक्र पूरा हो गया है शायद
या शायद, समय की मनोवृत्तियों में से
किसी एक की हो यह परिणति ?

कौन जानेगा ?

फिर भी
काच के तड़कने की दरार
दिखाई देने लगती है साफ साफ
तब हमें बहुत कुछ भूलना पड़ता है
सभी जगह, सभी स्थितियों मे ।

(अनु० दिनकर सोनवलकर)

देवमाल-१

राम महाबली

●

यम अपनी बडी बहन से कहता है,—नहीं,
अब और नहीं जंगल-कानून ।
हम गोश्त भून कर खाएँ, कमर के
गिर्द पत्तो बांधे,
गुफा के अन्दर रक्खें पत्थर के हथियार !
यम अपनी बड़ी बहन से कहता है,—नहीं
अब और नही जंगल-कानून ।
मैं नीले चेहरे वालों के गिरोह से
छीन लाऊँगा
शिकार के दोस्त कुत्ते
और ऐसे फल, जो कभी सूखते नहीं,
सड़ते नही
और, तुमसे भी चौड़ी जांघो वाली औरत,
जो मेरे साथ बर्फ काटकर
नीचे की तलहटियो में जाएगी,
चली जाएगी ।
यम अपनी बड़ी बहन से कहता है,—और
बड़ी बहन की खौफनाक हँसी के दर्द से जगल
हँसने लगता है। बर्फ पिघलती हैं,
बर्फ पिघलती रहती है.
और, नदी बन जाती है तलहटियो में आकर
—बड़ी बहन ! ●

दीवार

नयनतारा सहगल

●

सफ़ेद दीवार से अचानक दो
काली आखें निकलती है
और फर्श पर गिरकर जलने लगती है ।
जैसे किसी नीग्रो लड़की की नंगी देह,
कनास-शहर मे, या जोहन्सबर्ग मे !
दीवार पर लेकिन, लहू का
एक धब्बा भी नहीं....... ●

अब कोई मकसद नहीं

मोनिका वर्मा

●

मैं कभी खेतों की धूप और जंगल की आग में
हिरनो की तरह भागती रहती थी ।
अब सितारों की बंधी हुई चाल में भटकती हूँ,
वक्त का अब कोई मतलब नही अब
कोई मकसद नही रह गया है ।
अकलमन्दों की जमात भीड़ का चारा
खाती है।
लेकिन, मेरा घर, मेरा दिमाग, मेरा दिल,
और मेरे हाथ—एक बुझे हुए गुलाब की
खामोशी का इजहार करते हैं । ●

(अनु० राजकमल चौधरी)

सम्बन्ध

निसिम इजिकिएल

●

मैं कभी समझ नहीं पाता हूँ
क्या है सम्बन्ध
प्यार करने

और प्यार होने मे,
एक शाब्दिक सम्बन्ध
और जननेन्द्रि
यद्यपि एकात्मता
मौन के बाद के तर्कों मे देखी जाती है।
क्या यह दे देने के आनन्द से अधिक
कुछ नही है ?
क्या यह सचमुच आनन्द है ?
या कि यह मात्र आध्यात्मिक अनुभूति है।
और इसीलिए सच है ?
शायद बाईस को आयु से अड़तीस कत,
हजारो बार,
विवाह मे
और उसके अलावा
यह प्रश्न जागा है।
एक बार फिर, आज रात
मैं उसे दुहराता हूँ,
औरत मेरी बात पर मुस्कराती है
और अपने कपड़ो के साथ
परे रख देती है।
शायद वह औरत जानती है !
क्या बाइबिल मे भी
यह नहीं कहा गया है
कि इसी प्रकार
औरत चीन्ही जाती है।
प्यार करने वालो के बीच ज्ञान का
आदान प्रदान होता है।
होगा, यह बात समयानुकूल नही है।
या उसे चन्द मिनटो में समाप्त कर देने का
क्या अर्थ हो सकता है ?
जब कि रात इतनी लम्बी है ? ●

रोटी और स्वातन्त्र्य

अनुसूया आर० शोनोय

●

उन्होने कहा
एक रोटी लो
और उत्सव मनाओ।
चिन्ताओ को हवा में उड़ा दो।
निराशाओ और भूलो पर
पछताओ नही,
यह तो एक मनःस्थिति है जो
गुजर जाएगी।
क्या हुआ यदि एक पंख-कटा
रक्त-स्त्रावित हृदय
चुपचाप कही अकेले मे बुझ जाय ?
क्या आदर्श कोई ईश्वर होता है ?
क्या हुआ यदि जेल की छडो के
पीछे गुंगलाया मस्तिष्क
धीरे धीरे गल जाय ?
'स्वतन्त्रता' —यह तो एक
खोखला शब्द है
हवा भरे गुब्बारे-सा
एक निरुद्देश्य आवारा,
अपनी रोटी खाओ
काम करो
और सन्तोष करो
उन्होने उत्तर दिया :
रास्ते के खच्चर
रोटी की बात नही सोचते।
किन्तु मानव को जन्मसिद्ध अधिकार है।
एक भूख के शान्त, समाप्त होते ही
दूसरी भूख जाग उठती है
व्यंग्य करने और रुलाने को।
यदि स्वतन्त्रता हो रोटी की कीमत है

तो उससे अच्छा है
एक बन्धन-मुक्त हाथ मे
भीख का प्याला ले लिया जाय !

हमारे आगामी कल को सँवारने की
बनाने या बिगाडने की इच्छा
सिंहासनित दासत्व से भली है।
ताकि मानव की न कुचलो, निर्बन्ध आत्मा
घोषणा कर सके :
'मैं अपनी भूख का भी स्वामी हूँ।' ●

(अनु० मनमोहिनी)

मलयालम कवितायें

ये मशाल...

वैलोप्पल्ली श्रीधर मेनन

●

ये मशाल थामो
हे, रक्तिम नवल भुजाओ !
ये मशाल है सदियो से,
पुरखो के मंगलमय पथ की।
जब चलते थे वन मे,
टकराकर पशुओ से,
यह वह्नि-शिखा आई थी,
लहू भरी तलवारो-सी।
अधकार भागा,
कांपते पैरो से,
लपटो की हँसी मे,
स्वर्ग ने शीश झुकाया।
यौवन, मद भरे,
उन शूर-वीर हृदयो में
हजारो जिह्वाएँ पसारती
बढ रही थी यह मशाल,
काल के लम्बे पथ से,
ठुकराकर बाधाओ को।
जंगल जलाकर, था,
धान को खाद दिया,
लोहे को पानी बना कर,
सिरजे थे औजार
ज्ञान की ज्योति जलाई,
दिये कलाओ को प्राण
तडपती आत्मा को,
दर्शन के नये पख दिये
प्रगति के झंडो को,
नभ मे था फहराया,
लम्बी लम्बी रातो मे,
नव अरुणिमा भरी। ●

(अनु० जी० गोपीनाथन्)

नन्हा मुँह

वैलोप्पल्ली श्रीधर मेनन

●

पौ फटी नही,
उठे हम, दौड़ पहुँचे उस पवन में
जिसका हम करते पालन
गत संध्या मे देखी
वह कुसुम-कली
क्या खिल गई अब तक ?
'हाँ' 'नही' के तर्कों मे
हम धुंधले प्रकाश मे
देख रहे थे तब
'ले, जीत गया हू' बोला मैं—
'देख ले वृंद पर मुस्करा रहा है
मानो, हिंडोले मे शिशु है।'
तूने लिया उसको
मृदु हँसी के साथ
बोली प्यार भरी बोली में—
'तू आया इतनी जल्दी में !'
क्षण मे चिन्ताकुल नयनों में
नीर भरे, मौन रही तू

फिर लौटे हम हम उस सूने
अपने घर में, जहाँ
न था बच्चा और पालना ही। ●

(अनु० एन० चन्द्रशेखर नायर)

बढ़ जा मुन्ने ! आगे

बालामणि अम्मा

●

माँ की प्यारी गोद से,
लो, उसका लाडला उत्तरा नीचे।
डगमगाकर बढा दीवार के सहारे,
लाँघ कर देहरी पहुचा दालान मे
खुशी कुतूहल परेशानी
व्यापे चेहरो पर बडो के।
'मुन्ना माँ का आँचल छोड
खडा रहा अब हो निर्भय।
चला अकेला अपने आप
काँपते पैरो खिलते मुँह।'
'कठोर दीवारो से टकरा कर,
लाल को चोट न लग जाय
जलते अगणित दीपो के,
उसे आँच न लग जाय।
'बहुत पुराने इस घर के है,
लाखो कमरे तहखाने।
कितना उत्सव होगा सबमे
मुन्ना रमता जब बढ जाय।'
'सीढी मंजिल तय करने को,
नव यात्रा का रस लेने को,
साधेगा यह मुन्ना धीरज
निश्चित अब चन्द दिनों में।'
बढ जा मुन्ने ! आगे अब तो
कितना रंग है। कितनी शोभा !
तेरा स्वागत करने कितने —
नव-नव भाव खडे हैं अब तो !
तेरे नेत्रो मे चमका है,
मादक मधुमय नव-जीवन।
अपने पाँवो चलने वाले,
बेशक निर्भय घूमने वाले,
सारे अग जग के तत्वो को
हस्तामलक-से जानने वाले,
नक्षत्रो के दीपो को भी—
ज्योतित और बुझाने की
जिन हाथो मे अब ताकत है
अग्रज, वे सब देख रहे है।
तेरी रखवाली वे करते,
तेरे पथ से विघ्न हटाते,
तेरे अनजाने हो तुझको
वे सम्बल पहुचाते हैं।
बढ जा मुन्ने आगे माँ भी,
जी भर आशीषें देती है॥ ●

(अनु० के० सी० सुकुमारन नायर)

निशा-कुसुम

श्रीमती सुगतकुमारी

●

गाता हू शत बरसो से
एक तंत्री वाला
अपना तम्बूरा बजा बजा कर
हाय ! तेरे ही गीत
चलते फिरते नित !
ओर नही छोर नही
इस रास्ते का कही,
अगर रुक जाऊँ
गला कुछ भर लाऊँ
तो तेरी आँखो को
गीला कर दूँ ?

दीखती है आई शाम
पक्षी लौटे है छोड़ आसमान
वृक्षो की डाली के झूलो पर
फटो जाती है सोने की चादर
मुझे बितानी है रात कही
नीरव तम मे राह खो गई
दूर कही कही दीखता है
दीपाकुर एक ।
शंकित हो खड़ा रहा तनिक
खिला गगन सरोवर मे तब
चाँद का कमल,
कमलिनी की तारिका भी निकट;
पोछ दिये अपने आँसू,
फेर तंत्रियों पर
उंगलियाँ, गाने लगा,
लो मैं डूबा तेरे ही
करुणा के आलोक में
स्वर ले ही आऊँगा,
कल धूप मे कुम्हलाये
ये मेरे गुँथे फूल
विकल हो जाए चाहे
पर अपने प्राणों मे
इन गीतों को भर कर
खोजूँगा मैं विरही पथिक
हे स्वामी, तेरे ही चरण ! ●

(अनु० एन० चन्द्रशेखरत नायर)

तमिल कविताएँ

भागो मत !

पुदुमै पित्तन्

●

ओ दुनियावालो !
भागो मत !
अमरता का वर पाया,
वीणापाणी का विनयी, विधेय,
मधुरवाक् कवि कोकिल
मैं नही हूँ ;
भागो मत !
गगन के शोभन सपनो को
सजधजकर, गढ-रचकर,
सुनाने वाला 'सत्यवादी' कविशूर
मैं नहीं हूं ।
सच कहता हूँ कसम खाकर
रसना पर मेरी
सरस सरस्वती झकार का
सौभाग्य नही, चमत्कार नही !
तुम-जैसा ही यह मैं भी
अदना-सा आदमी हू; देख लो ।
मानता हूँ, तुम-सा मै भी
उत्साह, उमग, उद्वेग व उद्योग से
झूंठी-सच्ची गढ लेता हूँ,
गप्पो-गढंतो के बल पर
तुम्हे फुसलाकर, ठठाकर,
—हाँ, अगर भोले तुम ठगे जाओगे,
तो पैसा बेबाक उगाह लूँगा ।
बस्ती के पच्छिम मे
पनघट के निकट जो दीख पडी,
उसे असुलभा 'अरम्भे' (रम्भा अप्सरा) कह,
फिर उसे सपना साबित कर
शब्दबद्ध कविता-काव्य बना दूँगा
—अमर अनूपम !
बस, मुझे दाने के लाले न पड़ने दो,
अगर तुम कहोगे कि—
'अनिन्द्य रमणी की नही चाहिए
सुन्दर सरस प्रेम कथा;
चाहिए तो यही अब मुझे—
—तो, मैं तुरन्त यो निवेदन करूँगा,
'ओह ! जी हाँ, जो आज्ञा ।
यह दासवर तैयार है ।'

पत्थर को प्राणवान् बनाकर
कराल काल-सा प्राणलेवा कराकर
'जीतो, जीत लो !' के उद्घोष सहित,
शेखी-दम्भी के नारे अनगिने
कहो, चाहिए कितने ?—
अभी सिरजकर अर्पित कर दूँ
तुम्हारे अमल चरण-कमलों मे !
अजी ! ठहरो,
सच्ची हालत कह दूँ,
आज पैसा कुछ बचा है।
पर भविष्य में, मुझे समक्ष आते पाकर
कृपया न छिप जाओ, दौड झपटकर,
भागो मत !
तुम्हारे आगे न पसारूँगा हाथ—
अजी, ज़रा ठहरो न !
इस सब के ऊपर
मेरी इक बिनती है,
मेरे अंतिम-अपुनर्भव अंतर्धान के बाद
मेरे हित, यश का का डंका बजाकर
गली-गली, घर-घर, दर-दर चलकर
चंदा वसूल न करे, तंग न करें लोगो को।
मेरी स्मृति की सीमा बाँध कर
पाषाणखण्ड की भव्य मूर्ति बनाकर
मुझे खडा न कर दो,
न पूजो, न कोसो, न मनाओ ही !
यह भी न कहो, फिर मत रोओ—
'स्वर्ग का अमर देववर
इधर आया—अवतरा।
पर, हाय ! कैमे सहे ?
असमय मे, अति शीघ्र ही
स्वधाम लौट चला—स्वर्गीय हुआ !'
यह सब मुझे न चाहिए।
इतनी कृपा करो, तो कृतकृत्य हो जाऊँगा।
मुझ अभागे को छोड़ दो, छोड़ दो !
थोड़ी भूख मिटाने
अलसाये दिल को बहलाने
जीर्ण- जर्जर कथा या गाथा,
पौराणिक वृत्तान्त व अघटित घटना को
बुद्धिभ्रंशवश
यदि कोई कहता—लिखता
तो वह सब-हाँ,—आदर्श हैं अनूठे !
स्वर्गीय कल्पनाएँ हैं !
वे सब जगतीतल के उद्धारक
तारक मंत्र है, पावन-पुरातन !
अजी, वे तो मोक्ष-कपाट खोलनेवाले
असुलभ सरस साहित्य है !
यह सब तुम लोगो की
प्रभा-प्रतिभा-प्रचेतना की,
सच, संवर्धक निधियाँ हैं, विभूतियाँ हैं
खैर, अब काम की बात हो,
वाणी की मंदी कैसे ?
शोक कथा माँगने आये हो ?
तो यह लो, जोडी दो रुपये।
मोहक-प्रेम कहानी रंगीली
यदि चाव से पाने आये हो,
तो कहे देता हूं अभी साफ-साफ,
अच्छी-खासी रकम देनी है हाथ भर !
यदि आचार-विचार की।
मतानुगतिकता या पन्थ-मत-धर्म-दीन की
गाथा चाहते हो मोहक शैली वाली,
तो, दर है स्थिति-गति-व्यक्ति के अनुसार,
हाँ, अभी कहे देता हूँ—
दर न घटेगी, कम न करूँगा,
बात पक्की है, अदलाबदली नही।
बहलाकर, फुसलाकर हमे
चकमा देना कभी न होगा।
पैसा रखो समक्ष हमारे
फिर साकार सपने को मोल लो,—
लो यही............यह
काल-कवलित कभी न होगा;

युग प्रवर्तन से, उथल-पुथल से
उपेक्षित नही होगा।
अजी, भागते क्यो हो ?
सुनो भाई !
मै भी तुम्हारे सरीखा ही
अदना-सा आदमी हूँ; देख लो !
विश्वास पात्र हूँ मनसा-वाचा-कर्मणा भी
सुनो जी, मेरी बात,
अरे !.........भागो मत ! ●

फ़रियाद

कम्बदासन

●

कली चमेली की मैं रही,
वह समीर वसंत का आया,
स्पर्श किया, पुलकित किया; सुख पाया।
प्रेमालाप रसीले महक उठे,
तंद्रा जब मेरी टूटी, विहँस उठी !
मैं रही मेघमाला बिखरी-बिछुडी
वह आ मिला विद्युत विनोदी;
फैलादी मोहक मुस्कान; लूट लिया !
आवेगो का जब शमन हुआ,
अतृप्य सुख पाया;
भौतिक श्यामल काया मेरी गल गयी,
पानी ही पानी हो चली,
झर-झर बरस गयी !
बलखाती बहती मैं दरिया थी वनमोहिनी,
उसकी कर तरंगें थिरक उठीं मेरी छाती पर,
लोमहर्ष से हृत्तल तक
सुख-चैनका संसार हुआ,
जीवनधारा सार्थक हुई,
चिर सुन्दर सुख स्वप्न हुए;
अब विरहिणी हो बहती जाती हू अतृप्ति से,
उस छलिया के संग को ढूँढती फिरती हू ! ●

(अनु० र० शौरिराजन)

कर्मफल

कम्बदासन

●

विधाता ने सृजन किया पारावार का
मीन मकर के शिशु किलकार करें खेले, पले,
फिर निरखा स्वधाम से तरंगाकुल सागर को—
हाय ! कैसी निराशा ! विफल हुई रचना।
बिछा रक्खा मछुए ने जाल
मधुमक्खी के छत्ते-सा,
सृजन-सुमनो को फँसाया
बटोरा-कर दिया ढेर !
हाट सज गयो क्रय-विक्रय को—
उदरभरी चाल की
तब विधाता का हाल.........
दिल धधका, दहक उठे नैन, छटपटाये आप;
फिर—
छिप गये अंधकारमे गहनतर काल की नीली
चादर से ! ●

तिमिर

भारती दासन

●

दौड-भाग कर, लड-झगड कर,
कमा-बटोरकर, खा-पीकर,
और थककर—
जब अलसाने लगता है जीव जगत्,
उसे भरकर स्वअंक मे

नीलमणी से विपुल अंचल मे
छिपा लेते हो ममता से।
हे स्नेह के उदघोष,
हम आभारी है तेरे।
भू से स्वर्ग तक व्यापा है,
तेरा तन घना कजरारा;
तू बदल लेता है बारम्बार अपना वसन;
दिन का का परिधान है सुनहरी चादर,
शुक्ल रात का वसन है धवल दूकूल,

उस पर रंग बिरगे बूँटे सुन्दर!
एक दिन पूछा दिनकर से,
'जाते कहाँ हो बडी त्वरा से ?'
उत्तर आया, 'तिमिर को भगाने।'
'भाई, जल्दी चलो।' मेरा प्रोत्साहन था।
भास्कर झूमकर आगे बढा;
संतृप्त हुआ, तमिस्र को हटा दिया;
पर, तू रहा सर्वव्यापी।
तुम्हारे तमः पटल मे वह भौरा-सा हो गया।
'खद्योत' का नाम सार्थक भी हुआ!

तेरा अवतार हुआ आकाश के साथ,
तेरे रूप-प्रतिरूप जल-थल-गगन मे
नीले-नीले फैले हैं;
तू साया बनकर
[प्रति वस्तु के साथ] लगा रहता है;
तू घट-घट वासी है, सर्वव्यापी है!
उठी नासिका के छिद्रो मे,
खंजन-नयनो की चारु कोरो मे,
कमनीय कर्णपुटो के गड्ढो मे
तेरी सहचरी छाया सोहती है सुहानी;
सुन्दिरियो का सौदर्य बढ़ता है
तेरे छाया स्वरूप से!

हे अंधकार! तेरा वैभव
चतुर चितेरे चीन्हते-पहचानते!
विज्ञ-विदुषो का उद्घाष है—
ज्ञान का प्रतीक है प्रकाश;
हाँ, जी हाँ!
तम है अज्ञान का बहिरूप;
हाँ, जी हाँ!
पर एक बात भूलते—
अज्ञान ज्ञान का बोध कराता,
जिज्ञासा जगाता; उद्धार करता,
ज्ञान कभी अज्ञान सिखाता?
सीख कोई मिल सकती ज्ञान से?
कभी नही।
अज्ञान सहज है, सर्वव्यापी;
सीख, बोध का पथदर्शक;
तू ही नही, तेरा प्रतीक भी श्रेष्ठ है,
वंद्य है!
हे तिमिर! तू प्रकाश से बढ़कर है!●

(अनु० दक्षिणापंथी)

हमारा देश

महाकवि सुब्रह्मण्य भारती

•

चमक रहा उत्तुंग हिमालय, यह नगराज हमारा ही है।
भू पर जिसका जोड नही है, वह नगराज हमारा ही है।
नदी हमारी ही है गंगा, प्लावित करती मधुरस धारा।
समता इसकी नही धरा पर, कहाँ बही है पावन धारा ?
श्रेष्ठ ग्रंथ जो जगती के है, छोर नही जिनकी महिमा का,
अमर ग्रंथ वे सभी हमारे, उपनिषदो का देश यही है।
हम से बढकर कौन धरा पर, यह है भारत देश हमारा।
सब मिल अब यशगान करेंगे, यह है स्वर्णिम देश हमारा।
यह है देश हमारा भारत, वीर महारथी भरे जहाँ थे;
यह है देश मही का स्वर्णिम, मुनिगण करते वास जहाँ थे;
यह है देश हमारा, जिसमे गूंजे गान मधुर नारद के;
यह है देश हमारा भारत, सर्वोत्तम सब वस्तु जहाँ के;
यह है देश हमारा भारत पूर्ण ज्ञान का शुभ्र निकेतन;
यह है देश, जहाँ पर बरसी बुद्धदेव की करुणा चेतन;
अति महान् औ भव्य पुरातन, यह है भारत देश हमारा;
नहीं हमारे सम है कोई, गूंजेगा यह गान हमारा।
विघ्नो का दल चढ़ आये तो उन्हे देख भयभीत न होगे;
अब न कभी हम दीन-दलित हो, हीन दशा मे पड़े रहेगे;
नीच, स्वार्थ की सिद्धि हेतु अब कभी न गर्हित कर्म करेंगे;
पुण्यभूमि यह भारत माता, जग से अब हम भीख न लेंगे;
हमे सदा ही देती है यह, मिसरी, मधु, फल सारे रसमय;
कदली, चावल, अन्न सभी, औ' देती हमको क्षीर सुधामय;
आर्य देश यह उन्नत भू पर, गूंजेगा यह गान हमारा;
कौन करेगा समता इसकी महिमामय है देश हमारा !

अनु० 'भारतीभक्त'

समुद्र मोहिनी

अरविंद नाडकर्णी

●

समुद्र हँसता था दुग्ध सम फेन हास में
चारो ओर की शाखों के चोबो की ध्वनि,
चिड़ियो की चहक, घुंघरू-नाच गंधर्व गीत
पेड पेड़ पर पडनेवाली पुहुप-वर्षा की
एक तान
रंग-बिरंगे पुष्प गुच्छो से प्रस्फुटित पिचकारी
जल की मजुल ध्वनि

सब मिलकर एकरस हुआ था समुद्र
हास में।

वह जगह कौनसी ? देखा क्या ग्वाल ?
दो वृक्षों से जनमी कुबेर संतान की जगह।
अजगर कछुओं के चमडे खोल उठे नरेशो
की जगह।

चट्टान से उठी तेजवती की जगह
इसके जानकार उस मेरु-गिरी से पूछ
बरस बरसो से देखते खडे हुए उस
महान् महिमा पुरुष से पूछ,
और अपने ग्वाल-चित्त का समाधान
कर ले।

अरे देख ! यह नृत्य समारोह हर कही।

उस सागर के सलिल में लहर लहर चूम
उठ उठ मार रही है कलैया दूर दिगंत तक
विश्व को नचाने वाला वह संजीवनी रस
बह रहा है हर जगह निर्झरिणी की तरह
समुद्र के उदर से उछलकर !
आह समुद्र !
विश्वव्यापी समुद्र-लहर !
मैं बुद्धू, मटके में प्राण गाड़कर

खा रहा था होटल का आइस्क्रीम
लूट रहा था मजे सिनेमा की प्रेम-कसरत
का.......

सामने हंसता था दुग्ध सम फेनिल हास में
घुटे दम के प्राणों को प्राणवायुदायक

पयोमय शान्त सन्नाटा !

पाँव तले फैलाये मछुए के जालो को
लांघ कर

पहुँचा समीप जल प्रदेश के
दसो महा यज्ञ करने वाले राजा की भाँति
सिर हिलाते नये विजयोत्साह से बोला :

'अब मैं हूँ जीने योग्य इस मृत्युलोक में।'
ओ मेरे भाई बहनो,
स्तंभित ताल-कूप के जल मे तैरना चाहने
वालो,

आओ इस तीर पर
हर जगह स्रोत स्रोत बन, नदी नदी बन
प्रवहित

इस समुद्र जल मे तैरने आओ,
उसके जलबिंदु स्पर्श के लिए भूल जाओ
रेत पर फैले मछुए के जालों को। ●

कारिन्दा

पशुपति रेड्डी

●

मेज़ पर चमक रही है सफेद कागज की
तश्तरी

उसमे बाट जोह रहा है
पूरे ललाट-लेख का अंडा।

बाहर खेत-खलिहानों में
फूल-सी धूप, सुनहली धूप

तरुलता पाँति को चूम रही है !
यहाँ भीतर अंधेरे में नागरिक
सरवर मे
पाताल तक खीच रहा है मुझे—

कोई ग्राह !
इस शापित गज का बंधन
तोडने
भेजो, ओ हरि !
—अपना वह सुदर्शन
चक्र ! ●

पौ पौ पौ !
जहाँ पेट्रोल समाप्त वहाँ धडोम् !
चूको तो रास्ते के बगल मे निशाना
मारनेवाले कतार बंद सोल्जर
आँख मूँद दबाओ एक्सिलेटर !

क्यो प्यारी, दूर सरक बैठ गई ?
लग गई क्या तुझे भी भज गोविंद की
काष्ठ-व्यथा ?

नही चाहिये तेरी स्टियरिंग चिंता,
एक्सिलेटर पर पाँव ढीला न पड़े ऐसा,
इन दस बरसों में साधा है मैंने एक योग—
वह है प्रेम संयोग। ●

चालीस के करीब

पी० वेंकटरमण आचार्य

●

मेरे सामने
दो साल पूर्व से ही
आँखें फाडकर देख रहा था चालीस
'क्यों रे इतनी देर क्यों ?'

गरजा उस शेर की भाँति, जो
उस गरीब अपने शिकार खरगोश पर
गरजा था !

ऊपर अटारी पर रेडियो
चिल्ला रहा है : 'अंगं गलितं मुडं पलितम्'
सामने वाली अटारी से क्या मूर्ख
ताने की बात : 'आयु विफलितं आयु
विफलितं'

मेरे आज्ञाकारी आईने में
कौन है यह नया कैदी ?
इक मुँह के रास्ते पर ब्रेकविहीन कारों
की पाँति,

टन्...टन्...टन्...

सिद्दण मसली

●

टन्....टन्....टन्....
घड़ी मे बज रहा है आठ
उसका मेरा नाता रोज-रोज,
देह मे है सुस्ती
मन मे है उदासी
आँखो मे झूम रही है झपकी अभी
नहीं चाहता मन
उड़ना, छोड़ बिछावन
बिचारा ! पड़ौसी के घर रो रहा है बालक
तंग कर करके
उठ, बिछोने लपेट

झाड़ू लगाकर
आईने के आगे खड़ा हो, सिर के बाल में
उंगली उलझाकर—
अपने आपको देख

मुस्कान की माधुरी चख ठहर गया
हृदयाकाश मे
बादल बादल से टकराकर गगन ही के
बहने की भाँति
चमकी बिजली की रेखा
यकायक
ठौर मेज कुर्सी टिपाय सेल्फ
ठहाके नृत्य !
तन-बदन का नृत्य !
अंधेरे कमरे में
मूक हो किसी का ऊपर से गिरना
चोट खाने के पूर्व लगा कोई नही है
मन को घेरा भ्रम
क्या मजाक, क्या हँसी !
घूम कर देखा फिर कमरे-भर में
चारों ओर घूम गया नयन-बिम्ब
हैंगर पर लटक रहे हैं कोट-पेंट
इधर एक-दो शर्ट
मेज सेल्फ अलमारी भर पुस्तको की राशि
वही है मेरे सौभाग्य की जीवनकाशी।
मेरे सर्वस्व के लिए यही है जायदाद
और सिर में है इसमे भी अधिक।
क्या है इस हृदय सम -
बाकी सब धूप हिम।

बुला रहा है कर्त्तव्य हाथ उठा कर
दम पर दम अपनी याद दिलाकर
रास्ते भर सिर्फ धूल ही धूल
बस आई कि सारे कपडे गर्द भरे !
टनू····टनू ···टनू ···
सिपाही ने दिया घन्टा
हर रोज की तरह
यही देखो है स्कूल
मैं हूँ मास्टर
घंटे-घंटे पर देते हैं घटा
उनको भी शायद नही है फुरसत।
औरो के साथ में
कोल्हू के बैल को जोड़ी

क्लास के बाद क्लास मे जाना है।
वह विषय, यह विषय, कोई विषय क्यो
न हो, जानते हो या न हो, सिखाना होगा।
बिना सिखाये कैसे चले काम ?
सिर के उड़ जाने की भाँति जीव मौन

थकी नाड़ियाँ सचमुच ही न्यून
स्टाफ रूम मे कप-सॉसर का गान
चूसते हैं मास्टर चाय का मधु !
हवा की तरंग तरंग में सिगरेट धूम
इन उनका नियम !
इधर उधर जहाँ बैठे वहाँ
कोने कोने मे
सुलगे-बुझी सलाइयो के साथ सिगरेट के टुकडे
जले मुँह को दिखाने पड़े हुए हैं,
तम्बाखू खाने वालों के मुँह से लाल
लार की

पिचकारियो ने दी है दावत मक्खियों को !
जो कुछ शक्ति है, उसे पकड़ कर रोक दो
लडको के साथ मिलकर फिर मिलाओ
'खाना चाहिये जितना परोसे
ढोना चाहिये जितना लादे'
यही है इस गुजरी जिंदगी की रीत
गदा पिशाच !
....

सिपाही ने दिया रे अंतिम घंटा
परमात्मा की भाँति !
टनू·······टनू·······टनू·······!●

(अनु० गुरुनाथ जोशी)

वसुंधरा

रामचन्द्र शर्मा

●

तुम्हारा त्याग व्यर्थ कहूँ सिद्धार्थ ?
जीव-ज्योति ही आई रात को सरकाने
उस दिन
इसलिए फूली मैं, इसलिए गर्वित हुई मैं !

क्या हुआ बेटा ?
जंगली कोयल का गान तुम्हारा सद्‌बोध ?
इतने अवतारों के बाद ऐसे घर के
लोगो को
क्या मोक्ष है बेटा ?
देव की प्रीति; प्रीत की रीति
उसी को शोभामयी कहा आनंद ने !
अणु बने हुए तुम उस दिन बढ़ बढ़ विभु
बन गये
प्रभु अणु के रूप में रक्षा करने आये
सुन्दर बालक !
गीत के पीछे आई उन्मत्त हँसी एक।

खिलखिलाकर, नाच नाचकर झरना बनी,
बढ बढ
नदी बनी, जंगल प्रदेश, पहाड़ी प्रदेश का
समुद्र बनी
प्रलय जल बनी अंत को........
ओ ओ ओ मैं सुन नहीं सकता....मैं सह
नही सकता।
सरस वीणा ध्वनि के मृदु मधुर स्वर से
सुर मिलाकर गाया मंदिर में आज चाँद
नदी से नदो के मिलन की भाँति स्वर-स्वर
मिलकर बहकर आया मेरे हृदय के पास
एक सुरगान ! ●

भाड़े का मकान

विनोद चन्द्र नायक

●

परित्यक्त गृहस्थली है यह एक श्मशान,
था एक समय तक मुखरित यह द्वार व सदन,
कहाँ वह सब, नीलपट
साँवले हाथों का आमेज
है सारा सुनसान।
नन्हे पैरो के नाप का एक जोड़ा कैनवास का जूता,
आध गज मेरून रंग का तैल-म्लान कवरी का फीता,
थोड़े उलझे बाल स्प्रिंग सम घुघंराले,
कई टुकड़े रंग बिरंगी चुड़ियो के
ढेर लगा है कूड़ा करकट
दीवार की आलमारी में
खाली विटामिन 'बी' काम्प्लेक्स शीशियाँ
सिनेमा गर्वोन्विता युबतियो की
एक-आध तस्वीर
उच्छ्वसित लावण्य का भय शून्य मुखरित
जीवन अध्याय के ये भग्नांश
बिखरे पड़े है इधर-उधर
बैड यहाँ जोड़ता भाग्य का भग्नसेतु
राशिचक्र वृहस्पति तथा चन्द्रकेतु,
जीवन में हो प्रवाहित ऐ मेरे जीवन की इरावती
तिमिर पंक का स्रोत,
अहेतुकी मुग्ध आत्मरति में
उडो मेरे स्वप्न के सुनहरे हँस
रौद्र उत्ताप में बन चतुर व प्रखर ।।
तो भी टूटे पलस्तर बरामदे की ओर खिंच आता मन
फिर आकर्षित वही कूड़े-करकट ढेर की ओर,
सम्भालती संसार एक सुन्दरी
अपने अँगूठे के विविध अंकनों में दे निशान। ●

अनु० सारथी चरण महापात्र

मोरी

ब्रह्मोत्री महान्ति

•

वह बम अपना लेती
बन निर्विकार सदा ग्लानि को
संचय है नही, उसका धर्म
तजने मे है, उसका कृतित्त्व,
आते हैं जब कुछ नये-नये
नव रूप और आकारों में,
उन सभी को देती धक्का
रहने न देती उनका अपनापन।
हम सब करते प्रयत्न
विकृत बनाने उसे,
कलंक के प्राबल्य से उसे,
करने वीभत्स-कुत्सित,
है तो वह क्षण के लिये
पर करती ध्वंस हमारा दर्प,
वह दिखाती हमें
क्षण पहले का अपना रूप।
हम खूब नाक-भौं सिकोड़ते
तो भी उसकी आत्मीयता पर
इसलिये हम बेहद शरमाते
कभी नहीं लज्जा देती हमें वह,
न उसका है लाभ का प्रत्यय,
न संघर्ष हैं संयोग से
अन्त मे वह बनाती हमे क्षुद्र
पर बन जाती महत्तर स्वधर्म से।
मैं करती जो वन्दना उसकी
वह है अपनी चेतना की,
व्यस्त सूर्य प्रभात का
क्या लेता सम्मान प्रगति का ? •

अनु० सारथीचरण महापात्र

एक अनेक

मायाधर मानसिह

•

विविध धर्म, विविध शास्त्र, विविध दर्शन,
कर अध्ययन किया भाराक्रान्त अपना मन
कस्तूरी मृग सम भ्रान्त अन्वेषण,
कर लौट आया अन्त मे तुम्हारे यहाँ।

मानी पंडितों की भाँति हूँ में तर्कों मे लीन,
तुम हो या नही, देखो या नही,
हमारे दु:ख दैनन्दिन, न जाना कुछ
जाना, पर तुम एक और अनेक।

हे महैक्य ! तुम स्वयं किये हो प्रकाश,
असंख्य अनेको मे धरती से नभ तक,
विविध शैलियो, विविध रूपो मे है
तुम्हारा नित्य रास,
सुख दु:ख की तन्त्रियों से बजती है
तुम्हारी वीणा।

हो मोहित प्रकृति-काव्य करते हम अध्ययन,
त्याग चुका कई दिनो से तत्त्व-व्याकरण। •

तलुगु कविताएं

मैं !

धनकुधरम

•

मैं हूँ वाल्मीकि
विश्व का आदि कवि !
खल किरातों के तीखे वाणों से
आहत हत-भागो का —
शून्य दिगंचलो को साश्रु नयनों से
खोजनेवाले निर्वासितों का

शोकाकुल मूकजनो का
कोटि कोटि दीन मानवो का
साक्षात्कार नित होता है
करुणासिंचित इस मन मंदिर मे
प्रेमाविल मम अंतरांतर मे !
मै हूँ वाल्मीकि कवि—
मानिषादेति मम शासनवाणी
स्पंदित है सदा इस मन मे !
उद्धत मेरी इस वाणी मे
दुष्ट दानवता को मिटाने की,
भव्य अमरता को जगाने की
दिव्य शक्ति निहित है।
मै हूँ कवि बाल्मीकि
महादानव रावण की परंपरा के
स्वार्थी दुरहंकारी कुटिल निरंकुश
लोक-विरोधी दज-दल की
कुत्सित मानवता का—
उद्धत दानवता का अंत करने को
सन्नद्ध है,बद्ध कंकण है
मेरी यह लेखिनि !
मै हूँ वाल्मीकि
विश्व का आदि कवि !
अमृत निष्यंदिनी दिव्य कविता का
प्रवर्तक हूं मैं अति सनातन !
मधुर, अति मधुर
अक्षर समुच्चय का
आदि समन्वयकार हूं !
निरंतन विश्व को
अनन्त काल की
जन्म-जन्मान्तर की मानवता के
विशिष्ट शिष्ट गुणो का
मैं चिर व्याख्याकार हूं—
मैं वाल्मीकि हू ! ●

अञ्जलि

करुण श्री

●

नवजात शिशु के लिये
थन-बर्तन को तू दूध से भरता है
चन्द्र किरणो से भरे आर्द्र अजलियों से
लताओ मे तू पत्तियाँ गढ़ता है
फूलो के थालों मे भौरो के लिये
तू कल के भोजन की व्यवस्था करता है
मुँह-अँधेरे कलियों मे घुसकर
उनमे तरह तरह के रंग चढाता है
इस विश्व-परिवार के पालन-पोषण में
हे देवाधिदेव, तू बहुत थक गया है—
मेरे इस शीर्ण हृदय की कुटी का
द्वार खुला है,
इसमे क्षण भर आराम तो कर ले !
तुझे बिठाने के लिए कुर्सी नहीं है
प्रणय से भरा मेरा अंक तैयार है !
पाद्य के लिये गुलाब पानी की व्यवस्था नही है
अपने आँसुओ से तेरे पाँव धोने बैठा हूँ !
पूजा के लिए फूलो का अभाव है
प्रेम की अजंली तुझे समर्पित होगी !
नैवेद्य चढाने के लिए नारियल भी नही है
अपना हृदय तेरे चरणो चढ़ाने खड़ा हूँ !
जहाँ तक हो, कोई कमी न होगी
पधार, हृदय-सिंहासन पर आ बैठ !
तेरे पदचिह्नो पर अमृत की झरियाँ
टपकती हैं
जिनमे से, परमपिता, कोटि कोटि दिव्य
लोक उगते हैं !
लोको के अंधकार मिटाने तू गगन पर रवि
चन्द्र दीप पकड़ता है

सागर की लहरों को, जो धरती पर बढ़
आती है, तू यथास्थान ढकेलता है
रोज बेकार अनगिनत प्राणि कोटि के
हृदय-घड़ियों में हवा भरता है
साफ सुथरे नीले आसमान के चबूतरे पर
तारों की रंगवल्लियाँ पूरता है
इन सब कामों में तुझे कितनी मेहनत
करनी पड़ती है !
मेरे सौभाग्य से तू इस आँगन में
भूल से आ पड़ा है !
अपना हृदय निकाल कर तुझे भेंट चढ़ाऊँगा
हे नाथ, ये पुष्प अंजलियाँ ले ले न ! •

रूपांतर : मु० नरसिंहाचार्युलु

ऐ सौदामिनी

स्फूर्ति श्री

•

ऐ सौदामिनी
रसोन्मादिनी
मनोन्मादिनी
मधुवादिनी
चमक कर कवि-तपस्वी के मनोभुवन में
साक्षात बन आती हो कांति-प्रतिमा सी
जलदो के परदों की तुम्हें क्या जरूरत
कांति की जला न क्यों दो मशाल ?
चीर तम को, जो छिपाता अपना दिल
फूट पड़ते हो ओस के कण-से
क्षण भर का यह अवलोकन, यह प्रणय क्यों ?
वीणा पर नचा दो मेरे इस जीवन को ।
मन के आँगन में बरसा दिये चमेली-फूल
आँखों पर छिड़क दो कनक-कांतियाँ
अब झलक दिखला, क्यों यह लुका-छिपी
सेवा में रहूँगा रत, न टलूंगा इस प्रण से । •

अनु० कृष्ण